मृत्यु अनिश्चित है-

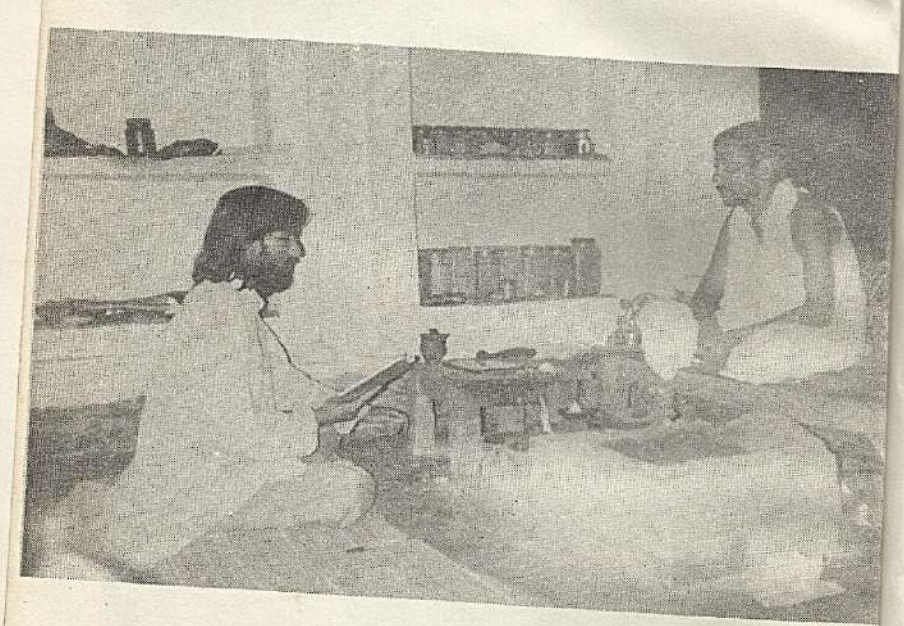

साक्षात्कार देते हुए गुरूजी

मृत्यु

9
21
41
61
71
85
95
107
115
127
137
143

परम आदरणीय गुरूजी

अनुक्रम

- ❑ मृत्यु अनिश्चित है 9
- ❑ हत्याकाण्ड अपराधी कौन ? 21
- ❑ पूर्वघोषणा और अकालमृत्यु 41
- ❑ आत्मा का रहस्य व योनि भ्रमण 61
- ❑ मृत्यु और कर्मफल 71
- ❑ घटनाओं का पूर्व निर्धारण 85
- ❑ भ्रूणहत्या-सूक्ष्म की दुर्गति 95
- ❑ पुनर्जन्म और मृत आत्माओं की खोज 107
- ❑ प्रेत ब्रह्मराक्षस व अन्य शक्तियां 115
- ❑ अतिन्द्रिय दर्शन का मूल-अनाहत चक्र 127
- ❑ यमराज और यमलोक 137
- ❑ प्रलय- महाप्रलय 143

विशेष

मृत्यु की निश्चितता-अनिश्चितता के मध्य निर्मित सेतु के सारे बिंदुओं पर असंख्य प्रश्न, असंख्य रहस्य व असंख्य विवाद 'परा-अपरा' के मध्य लुप्त-परिलुप्त अवस्था में पड़े हुए हैं। समस्या-समाधान से जुड़े तमाम सारे प्रश्नों - 'मृत्यु के उस पार क्या है ? क्या व्यक्ति मर कर पुनः जन्म लेता है? किसी व्यक्ति विशेष के साथ ही कोई दुर्घटना क्यों घटती है ? व्यक्ति अकालमृत्यु को क्यों प्राप्त होता है ? गर्भपात के माध्यम से हुई भ्रूणहत्या का अन्ततः परिणाम क्या होता है ? मृत्यु के उपरान्त कुछ व्यक्तियों का सूक्ष्म-भूत-प्रेत, ब्रह्मराक्षस, जिन्न आदि योनि में पड़कर आखिर क्यों और कब तक भटकता रहता है ? क्या भूत-प्रेत या अन्य शक्तियों को देखा भी जा सकता है। क्या मृत्यु के उपरान्त उस व्यक्ति के सूक्ष्म से पुनः संबंध स्थापित किया जा सकता है? आदि-आदि ....।' में हम क्या खोते-पाते रहते हैं।

उपरोक्त प्रश्नों-समस्याओं से जुड़े व प्रस्फुटित तमाम सारे प्रश्नों - जिज्ञासाओं का समाधान-श्मशान साधक 'अज्ञान' जी से लिए गये लम्बे साक्षात्कार के माध्यम से इस पुस्तक में प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है। मृत्यु जैसे जटिल व विवादास्पद विषय पर यह बृहद-व्यापक साक्षात्कार देने वाले परम आदरणीय 'अज्ञान' जी एक लेखक और संपादक हैं लेकिन साथ ही सिद्ध साधक भी। अपनी तांत्रिक शक्ति के माध्यम से वे रोगों का उपचार करते हैं। वे भविष्यवक्ता भी हैं। साथ ही प्रेत-बाधा से त्रस्त लोग भी इनके पास आकर त्राण पाते हैं। विश्व का ऐसा कोई तंत्र या उससे संबंधित गुह्य- विद्या नहीं जो उनसे अछूती रही हो।

भौतिकता-आडम्बर से कोसों दूर रहने वाले गुरूजी (श्री हरिशंकर द्विवेदी 'अज्ञान') के सानिध्य में आने के उपरान्त ही मृत्यु जैसे विवादास्पद, जटिल व रहस्यमय विषय से संबंधित तमाम सारे रहस्यों-समस्याओं का समाधान एक लम्बे साक्षात्कार के अंतर्गत इस प्रस्तुत पुस्तक - 'कालचक्र और मृत्यु' में संग्रहीत हुआ है। यह बृहद- विवादास्पद साक्षात्कार गुरूजी के निवास स्थल (108/3, मीरापुर, इलाहाबाद, उ. प्र.) पर 3-4 माह में विशेष परिस्थितियों के अंतर्गत सम्पन्न हुआ।

इस पुस्तक की सार्थकता- उपयोगिता तो आप सब इसे पढ़ने के उपरान्त ही जान-समझ सकेंगे।

दिनांक : 1 जनवरी 1993 **विजय पाल**

तारा प्रकाशन, दिल्ली

मूल्य ❑160/-रुपये मात्र

प्रकाशन ❑ तारा प्रकाशन
ई-47, हौजखास मार्केट,
नई दिल्ली-110016

प्रस्तुतकर्ता ❑ विजयपाल

मुद्रक ❑ यूनाइटेड प्रिंटिंग प्रेस
हरिनगर, नई दिल्ली - 110 0 64

सज्जा ❑ शिवगोविन्द पाण्डेय

संस्करण ❑ प्रथम 1993

कालचक्र और मृत्यु

श्मशान साधक
अब्बान जी से हुई
औपचारिक वार्ता का
कुछ अंश

प्रस्तुतकर्ता - विजय पाल

कालचक्र और मृत्यु
अज्ञान
कालचक्र और मृत्यु
अज्ञान
कालचक्र और मृत्यु
अज्ञान

❑

निश्चित कर्म भोगने-भोगाने के लिए हमारे तथाकथित धर्माचार्यों ने जो पट्टा लिख रखा है वही धर्म के विनाश की सबसे बड़ी सीढ़ी है और जिस दिन वे धर्मभीरू धर्माचार्य इस तरह का पट्टा लिखना बन्द कर देगें; धर्म को समझने की कोशिश करेंगे उसी दिन से यह निश्चित मानो कि मृत्यु जैसे व्यापक परिवर्तन के मध्य है उत्पन्न भय से बहुत से लोग भयमुक्त तो होंगे ही, साथ-साथ मृत्यु की निश्चितता को अनिश्चितता में परिवर्तित करने के लिए तमाम सारे उपक्रमों को ढूंढें- खोजेंगे ।

❑

अभी तो विज्ञान अपने स्व: निर्मित अर्द्धवृत पर घूम रहा है यानी की वह अभी पदार्थ से ऊर्जा तक पहुंच पाया है। जिस दिन विज्ञान पदार्थ से ऊर्जा और ऊर्जा से फिर पदार्थ तक पहुंच जायेगा उस दिन उसे आध्यात्मिक शक्तियों व ब्रह्मांड के असंख्य सूक्ष्मों को जानने-पहचानने व परखने में विशेष कठिनाई न होगी। लेकिन अभी तो इस अर्द्धविकसित विज्ञान को आध्यात्मिक शक्तियों को जानने-समझने में हजारों-हजारों वर्ष लग जायेंगे । हां; यदि वह कहीं अपनी यात्रा में दिग्भ्रमित हो गया तो यह अन्तराल और भी लम्बा-चौड़ा हो सकता है।

❑

मृत्यु की निश्चितता को लेकर के ब्रह्मा जी ने पहले से कोई पट्टा नहीं लिख रखा है और न ही कोई व्यक्ति माथे पर लिखवा के लाया है। हां, घटनाएं-दुर्घटनाएं होती अवश्य हैं और उसी क्रम में घटनाओं का क्रम किसी न किसी रूप में निर्धारित भी होता रहता है । जब हम किसी घटनाक्रम के तहत उस व्यक्ति का जीवन नहीं बचा पाते हैं तो हार कर मृत्यु की निश्चितता के गहन धुंध के बीच एक आधारहीन समझौता कर लेते हैं । यानी मृत्यु की अनिश्चितता को निश्चितता में परिवर्तित कर देते हैं।

❑

ब्रह्मांड में गतिशील हर सूक्ष्म का अपना एक विगत इतिहास-भूगोल होता है। वही सारगर्भित इतिहास-भूगोल आत्मा रूपी सूक्ष्म के जन्म-जन्मान्तर की कथा का एक संयोजित इतिहास बनता है । या यूं कहो कि प्रत्येक जीव जन्तु के उत्पत्ति का मूल कारण उसका पूर्वजन्म होता है। उसके बिना उसका भौतिक-आध्यात्मिक अस्तित्व कहाँ बनेगा ।

सृष्टि का उपक्रम नहीं बनता है तो (3 नील, 62 पदम, 88 खरब) वर्ष के उपरांत महाप्रलय की स्थिति आ जायेगी। हो सकता है, उस समय पूरा का पूरा ब्रह्मांड पंच तत्व में विलीन हो जाए, और ब्रह्मांड के नियामकों का भी अस्तित्व खतरे में पड़ जाये।

विनाश लीला का एक बृहद चित्र कहा जा सकता है। वह दस-ग्यारह गांव का बृहद स्थल आगे भी तब तक वायवी व विरोधी शक्तियों से प्रभावित होता रहेगा जब तक वहां हजार व्यक्तियों के अनुपात में मंदिर-मस्जिद गिरजा व गुरूद्वारा आदि का पूर्ण मनोयोग से 'निर्माण' नहीं करा दिया जाता है। वैसे उस बृहद विनाश लीला के उपरान्त जिन हजारों लोगों की अकालमृत्यु हुई है उन सबके भी सूक्ष्म (विकृत) पूर्व विरोधी शक्तियों व दुष्ट आत्माओं के किसी न किसी रूप में सहयोगी या पक्षधर बन जायेंगे। और यह क्रम कालचक्र के सापेक्ष में सैंकड़ों-सैंकड़ो वर्ष तक चलता रहेगा।

5. अयोध्या प्रकरण में जो लाखों लोग अकाल मृत्यु या आकस्मिक मृत्यु के शिकार हुए वे सब के सब विकृत सूक्ष्म के रूप में उस बृहद क्षेत्र को तब तक प्रभावित करते रहेंगे, जब तक राम-मंदिर-बाबरी मस्जिद का विवाद जड़ से समाप्त नहीं हो जाता है। सच पूछो तो, वहां राजनीतिज्ञों द्वारा जो धर्म की राजनीति हो रही है वो बड़े से बड़े वर्ग को, उन असंख्य विरोधी शक्यिों व असंख्य विकृत सूक्ष्मों के विविध समूहों के सहयोग-असहयोग से तब तक प्रभावित करती रहेगी, जब तक उन सबके संदर्भ में कोई न कोई उचित व समय सापेक्ष समाधान नहीं ढूंढ लिया जाता है। वैसे, उसके संदर्भ में ये सारी की सारी क्रमिक घटनाएं-दुर्घटनाएं निरतंर एक लम्बे क्षेत्र को प्रभावित कर रही हैं और आगे भी करती रहेंगी।

6. देखो; इस उत्तराखंड के पूर्व घटित बृहद दुर्घटना को (जिसमें हजारों-हजारों लोगों की अकाल मृत्यु हुई) प्राकृतिक प्रलय का छोटा-मोटा अंश माना जा सकता है। हां; अगर वहां या उसके आस-पास तमाम ऋषि-मुनियों का वास न होता, तो हो सकता है यह बृहद दुर्घटना और बड़ा आकार ले लेती।

7. अमेरीका द्वारा ईराक पर जो हजारों टन बम गिराया गया और जिसके प्रभाव से लाखों लोगों की अकाल मृत्यु हुई, वह भी प्रलय का एक टुकड़ा बन कर रह गया। इस, प्रलययुक्त टुकड़े से (जिनमें अब लाखों सूक्ष्मों का सहयोग जुड़ चुका है) और भी इसी तरह के टुकड़े तब तक जुड़ते रहेंगे, जब तक बृहद् रूप से कोई धार्मिक-आध्यात्मिक उपक्रम कालचक्र के सापेक्ष में नहीं कर दिया

जायेगा। वैसे, ऐतिहासिक संदर्भ में, इस बृहद स्व:निर्मित दुर्घटना को प्रलय का एक हिस्सा माना जा सकता है।

8. देखो, कालचक्र के सापेक्ष में ब्रह्मांड के आंतरिक महाबृहद् कैनवास में सृजन-विनाश साथ-साथ चलता है। वही एटम बम जब हिरोशिमा और नागासाकी पर गिराया गया तो वहां प्रलय का एक बड़ा सा हिस्सा हृदय विदारक दृश्य के रुप में, विश्व में दिखाई देने लगा। लेकिन वही आणविक विस्फोट जब प्रधानमंत्री श्रीमती इन्दिरा गांधी के मंत्रित्व काल में, पुखरान में किया गया तो उस विस्फोट से दस एटम बम के बराबर ऊर्जा तो अवश्य मिली, पर एक भी व्यक्ति उस प्रभाव से अकाल मृत्यु को प्राप्त नहीं हुआ। इससे, हम निर्विवाद रूप से यह कह सकते हैं कि-इन बड़ी विनाश लीलाओं के पीछे निश्चित रूप से लाखों-करोड़ों ऐसे सूक्ष्मों का सहयोग जुड़ा होता है जो कालचक्र के सापेक्ष में अतृप्त अवस्था में निरंतर ब्रह्मांड में गतिशील रहते हैं। और अपने अंदर की विकृतियों द्वारा अन्य लोगों को सामूहिक रूप से प्रभावित करते-रहते हैं और तब तक करते रहेंगे, जब तक ये सब के सब प्रलय के अंतर्गत ब्रह्मांड में विलिन होकर नया रूप नहीं ले लेते ।

9. प्रथम महायुद्ध व द्वितीय महायुद्ध को पूर्ण प्रलय तो नहीं, लकिन अर्द्ध या अर्द्ध का अर्द्ध प्रलय कहा जा सकता है। थोड़ा और पीछे जाओ तो द्वापर के राम-रावण युद्ध व त्रेता के महाभारत (कौरव-पांडव युद्ध) में जो लाखों-करोड़ों लोग मरे या अकाल मृत्यु को प्राप्त हुए- क्या उसे भी प्रलय का एक मुख्य अंश नहीं मानोगे?

उपरोक्त व्यापक स्पष्टीकरण के आधार पर-हम चले तो थे प्रलय के सूक्ष्म से, लेकिन क्रमिक घटनाक्रमों से जुड़ते-जुड़ते कालचक्र के सापेक्ष में असंख्य घटनाओं-दुर्घटनाओं के साथ प्रलय की ओर उन्मुख हो गये। इसी क्रम में, जब तुम इतना बढ़ जाओगे कि-मृत्यु की संख्या या ब्रह्मांड में विखंडित-विकृत सूक्ष्मों की संख्या 43,20,00,000 X 84,00,000=3,62,88,00,00,00,00,000 (3 नील, 62 पद्म, 88 खरब) तक पहुंच जायेगी, तो वही प्रलय या कयामत की अंतिम स्थिति होगी। उस समय पूरा का पूरा विश्व, ब्रह्मांड में समाकर वैसा ही दीखने लगेगा जैसा वैवस्त मनु के समय में था। हां, अगर उसके बाद पुन:

1. (क) देखो, जब भी किसी परिवार या व्यक्ति विशेष के घर में सूक्ष्म-स्थूल के संयोजन से प्रसव पीड़ा के उपरान्त किसी बच्चे का जन्म होता है तो घर के सारे लोग, यहां तक की आस-पास के लोग तरह-तरह से खुशियां मनाते हैं। जबकि प्रसव कष्ट की भुक्तभोगनी कुछ क्षण तक असह्य वेदना के दौर से गुजरती है।

(ख) विवाह के उपरान्त, जब लड़की विदा होती है तो वर पक्ष खुशियां मनाता है और कन्यापक्ष वाले रोते-गाते हैं।

(ग) व्यक्ति जब वृद्ध होकर मरता है या उसका सूक्ष्म-स्थूल विखंडित होता है तो घर वाले रोते-चिल्लाते हैं, प्रलाप करते हैं। जबकि, विखंडन के उपरान्त उस व्यक्ति का सूक्ष्म ब्रह्मांड में स्वतंत्र होकर सूक्ष्मीय गति से विचरण करता हैं तथा अपने अंदर हल्केपन का अनुभव करता है।

इन तीनों घटनाक्रमों के अंतर्गत, तुम्हें कोई न कोई परिवर्तन अवश्य मिलेगा। परिवर्तन का एक पक्ष घटनाक्रम से जुड़कर प्रसन्न होता है और दूसरा पक्ष दुखी या शोक-संतप्त होता है। जबकि अकाल मृत्यु जैसे घटनाक्रम में दोनों के दोनों पक्ष दुख, कष्ट या स्व शोक से निरंतर तब तक प्रभावित होते हैं जब तक उनके संदर्भ में फिर कोई चौथा परिवर्तन नहीं हो जाता है। इन तथ्यपूर्ण बातों से यह लगता है कि अंतिम - परिवर्तन यानी सूक्ष्म-स्थूल के विखंडन के उपरान्त (जो किसी घटना-दुर्घटना के मध्य घटित होता है) उस घर-परिवार में 'नाश-विनाश' का एक दृश्य कालचक्र के सापेक्ष में दृष्टगत हो जाता है ।

2. किसी अप्रत्याशित घटनाक्रम के अंतर्गत किसी घर का अग्नि के प्रभाव से जल जाना और उसमें तीन व्यक्तियों की मृत्यु हो जाना। उसी क्रम में, एक विधवा स्त्री व उसके बच्चे का बच जाना - न तो स्वाभाविक घटनाक्रम है और न ही ऐसा आकस्मिक परिवर्तन जिसके अंतर्गत कुछ व्यक्तियों की भी अकाल मृत्यु हो और कुछ लोग बाल-बाल बच जायें। इस तारतम्य में बिना पुनर्जन्म से जुड़े उन्हे उन मरे हुए तीनों व्यक्तियों व बचे हुए दोनों लोगों के बीच एक ही घटनाक्रम के अंतर्गत न तो कोई प्रमाणिक विवेचना मिल पायेगी और न ही आध्यात्मिक संतुष्टि। ऐसी स्थिति में उस प्रभावित-कुप्रभावित परिवेश को थोड़ा और प्रभावहीन बनाने के लिए उस बच गई विधवा स्त्री का शीघ्रातिशीघ्र विवाह कर देना चाहिए। हां; यह कर्म - कांडिय विधान उसी घर

में हो जिसमें आग लगी थी, तो ज्यादा अच्छा होगा। हां; इसके पूर्व उन तीनों मरे हुए व्यक्तियों का अंतिम संस्कार भी विधिवत ढंग से धर्म-मजहब-सम्प्रदाय के अंतर्गत कर देना चाहिए। इतना सब करने के उपरान्त भी वह घर तब तक दोषमुक्त नहीं होगा, जब तक वह स्त्री एक नये पुत्र को जन्म नहीं दे देती है। फिर भी, इन तीनों मरे हुए व्यक्तियों को तब तक विनाश जैसे शब्दों से जोड़ा जायेगा जब तक उस परिवेश के इर्द-गिर्द पुरानी स्मृतियां अवशेष रहेंगी।

3. बाढ़ का एकाएक प्रकोप और उससे प्रभावित होकर सैंकड़ों -हजारों लोगों का मरना, क्या विनाशलीला का बृहद् चित्र नहीं है? यदि है तो ऐसा हुआ क्यों? अन्य गांव के लोग क्यों नहीं प्रभावति हुए या मरे? इस घटना या प्राकृतिक दुर्घटना के अंतर्गत कालचक्र के सापेक्ष में मात्र इतना ही कहा जा सकता है कि- उन गांवों के चारों तरफ़ विरोधी शक्तियों व दुष्ट-आत्माओं का इतना अधिक्य हो चुका था कि, उसके सापेक्ष में कोई न कोई इस तरह की प्राकृतिक विनाश लीला का दृश्य-परिदृश्य एकाएक उपस्थित हो जाए। और सैंकड़ों-हजारों लोगों को, वहां के जीव-जन्तुओं के समेत असमय-कुसमय काल-कवलित हो जाना पड़ा। इस विभिषिका को रोकने का अस्त्र यज्ञ-महायज्ञ आदि ही हैं- वह भी तांत्रिक प्रक्रिया के अंतर्गत। फिर भी, यह प्राकृतिक दुर्घटना मानवता के सापेक्ष में दुखद है।

4. प्लेग जैसी भयानक बीमारी-महामारी में वही दस-ग्यारह गांव क्यूं प्रभावित हुए? और उस भयानक प्रभाव से वह विधवा स्त्री, बच्चा व उसकी ननद कैसे बच गये? विरोधी-शक्तियों के समूह व दुष्ट-आत्माओं के घेरे ने उन तीनो को क्यूं नहीं प्रभावित किया, जबकि पूरे के पूरे गांव वाले व उससे संबंधित जीव-जन्तु व पशु-पक्षी अकाल मृत्यु के गर्भ में क्रमशः अल्प समय में ही समा गये। वैज्ञानिक विश्लेषण द्वारा यह भी पता चला कि, उन तीनों के बचने का एक कारण यह भी था कि-उनका पूरा का पूरा कच्चा घर व कमरों की दीवारें गाय के गोबर से लीपी-पुती थी। तो यहां पर, अदृश्य-शक्तियों के माध्यम से वह गाय का गोबर उन तीनों के बचने का एक निमित्त बना; कारण बना। जबकि उसी परिवार के अन्य चार सदस्य जो घर के बाहर थे वे भी उस सामूहिक अकाल मृत्यु के क्रम में स्वतः जुड़ गये। इस प्राकृतिक व वायवी दुर्घटना को

किसी बृहद विषय या विषयक्रम को गहराई से जानने-समझने के लिए यह आवश्यक हो जाता है कि-सबसे पहले उसके सूक्ष्म से सूक्ष्म कण या अणु-परमाणु को गहराई से जाना समझा जाए। इसी प्रक्रिया के अंतर्गत, क्रमिक रूप में असंख्य सूक्ष्मों को जोड़कर पुनः उस बृहद विषय या विषय क्रम तक पहुंच जाते हैं। हां, इस बृहद या सूक्ष्म प्रक्रिया के अंतर्गत मात्र एक विशेष बात का ध्यान रखना आवश्यक होता है कि सूक्ष्म व विस्तार के मध्य क्रमिक गुण व दोष में विशेष परिवर्तन न आने पावे। यहां तक की उसकी क्रमिक विवेचना के अंतर्गत विषयांतर की भी संभावना न बने तो अच्छा है।

उपरोक्त-कथ्य-तथ्य के अंतर्गत जब हम प्रलय के सूक्ष्म बिंदु तक पहुंचते हैं, तो हमें कुछ ऐसे शब्द 'नाश-विनाश' मिलते हैं जो व्यक्ति विशेष या जीव-जन्तु की इकाई को कालचक्र के सापेक्ष में निरंतर घटनाक्रम के अंतर्गत प्रभावित या अप्रभावित करते-रहते हैं।

इस जटिल व विवादास्पद, विषयक्रम को 'बृहद से सूक्ष्म' व 'सूक्ष्म से बृहद' तक गहराई से जानने-समझने के लिए निम्न उदाहरण उपयोगी सिद्ध हो सकते हैं-

1. किसी व्यक्ति के घर में एक वृद्ध व्यक्ति की मृत्यु हो गई, यानी वृद्धावस्था में उसके सूक्ष्म-स्थूल विखंडित हो गये ।

2. किसी परिवार में, एक विशेष घटनाक्रम के अंतर्गत घर में आग लग गई। अग्नि के प्रचंड वेग से प्रभावित होकर तीन व्यक्तियों की मृत्यु हो गई। यानी उनके सूक्ष्म-स्थूल विखंडित हो गये। उसी परिवार का एक बच्चा व उसकी युवा मां विधवावस्था में बच गई।

3. बाढ़ के तीव्र प्रकोप से नदी के किनारे के कई गांव रातों-रात जल-मग्न हो गये। उस भयावह घटनाक्रम में सैंकड़ों-हजारों जीव-जन्तुओं व सैंकड़ों व्यक्तियों की मृत्यु हो गई, उनके स्थूल भी उस बाढ़ के जल में सड़-गल कर पंच तत्व में स्वतः विलीन हो गये।

4. प्लेग या किसी अन्य महामारी से एक साथ ग्यारह गांव प्रभावित हुए । सप्ताह भर के अंदर इस भयानक छुआछूत की बीमारी से ग्यारहों गांव के सभी लोग मर-खप गये। उन मरने वालों की संख्या अनुमानतः दस हजार के लगभग थी। उसी क्रम में, सैंकड़ों-हजारों जीव-जन्तु व सैंकड़ों-हजारों पशु-पक्षी भी मर-खप गये। उन सबका स्थूल हफ्तों उसी स्थिति में सड़ता-गलता रहा। उस भयावह स्थिति से सामना करने व स्थूलों का मांस नोचने चील-कौए तक नहीं पहुंच पाये। इस भयावह घटनाक्रम में एक घर के अंदर एक विधवा स्त्री, उसका पांच वर्ष का लड़का व उसकी युवा ननद आदि बच गये।

5. अयोध्या प्रकरण में अब तक राम मंदिर-बाबरी मस्जिद विवाद को लेकर लगभग तीन लाख पच्चपन हजार लोगों की अकाल मृत्यु हो चुकी है ।

6. उतराखंड में भूंकप आदि के प्रकोप से हजारों-हजारों लोगों की अकाल मृत्यु हुई।

7. अमेरिका-ईराक के बीच हुए आणविक युद्ध में हजारों-लाखों की संख्या में अकाल मौतें हुई।

8. हिरोशिमा-नागासाकी में, आणविक विस्फोट से लाखों-करोड़ों जीव-जन्तु, पशु-पक्षी व व्यक्तियों की अकाल मृत्यु हुई। जबकि पुखरान (राजस्थान) में कराये गए आणविक विस्फोट में एक भी व्यक्ति की मृत्यु नहीं हुई।

9. प्रथम व द्वितीय महायुद्ध में लाखों-करोड़ों लोग एक-दूसरे के द्वारा अकाल मृत्यु के शिकार हुए।

उपरोक्त क्रमिक घटनाओं-दुर्घटनाओं को कालचक्र के सापेक्ष में तुम कैसे और किस प्रकार से विवेचित करोगे? आखिर, इन असंख्य मौतों से जुड़े विवादों को तुम कैसे जानोगे या समझोगे? इनका सूक्ष्मतम बिंदु एक या दो व्यक्तियों की अकाल मृत्यु या स्वाभाविक मृत्यु से आरंभ होता है, जिसे तुम 'नाश-विनाश' भी कह सकते हो। यही क्रम जब किसी विशेष घटना के अंतर्गत लाखों-करोड़ों में पहुंच जाता है, तब तुम प्रलय या कयामत जैसे शब्दों के नजदीक पहुंचने लगते हो। तो ब्रह्मांड के अंदर की सृष्टि में इन असंख्य सूक्ष्मों की सूक्ष्मीय गति क्या होगी या क्या होनी चाहिए को गहराई से जानने-समझने के लिए या इसे कालचक्र के सापेक्ष में विवेचित करने के लिए प्रलय-महाप्रलय जैसे शब्दों को ध्यान में रखते हुए कम से कम उपरोक्त नौ बिंदुओं पर केन्द्रित होना आवश्यक ही नहीं बल्कि अति आवश्यक हो जाता है-

[मृत्यु की निश्चितता-अनिश्चितता के मध्य कालचक्र के सापेक्ष में जीव की गति का चक्रीय विधान क्या होगा? इस विवादास्पद प्रकरण के अन्तर्गत-'प्रलय-महाप्रलय' विषय से सम्बन्धित प्रश्नों के समाधान हेतु श्मशान साधक 'अज्ञान' जी से दिनांक : 15 अगस्त 1992 (मध्यान्ह) को लिए गये लम्बे साक्षात्कार का प्रमुख अंश प्रस्तुत है -]

❑ गुरूजी! प्रलय या महाप्रलय की स्थिति में जो सामूहिक मृत्यु होती है, इस व्यापक घटनाक्रम के संदर्भ में आप क्या कहेंगे? क्या इस प्राकृतिक-अप्राकृतिक विनाश लीला में निर्दोष या निरीह प्राणियों की हत्या नहीं होती? जबकि, उनकी मृत्यु कालचक्र के सापेक्ष में स्थूल की जर्जरता या असमर्थता के आधार पर होनी चाहिए? कृपया, विस्तारपूर्वक चर्चा करें।

देखो; कालचक्र के सापेक्ष में-मृत्यु, सामूहिक मृत्यु के कारणों व उससे संबंधित घटनाक्रम को जानने-समझने से पहले प्रलय या महाप्रलय को गहराई से जान-समझ लेना आवश्यक है। प्रश्न यह उठता है कि, यह प्रलय या महाप्रलय होता क्यूं है, और असंख्य लोग उस व्यापक घटनाक्रम के सापेक्ष में सामूहिक क्रम में मरते क्यूं हैं?

इतना तो निश्चित है कि-कालचक्र के सापेक्ष में जब भी कोई नया परिवर्तन होता है तो उससे संबंधित पुराना सब का सब समाप्त या विनष्ट हो जाता है। कालचक्र का अंत: संबंध सीधे-सीधे 'पदार्थ-ऊर्जा-पदार्थ' के सापेक्ष में सृष्टि से जुड़ता-टूटता है। इसी संबंध में, प्रलय-महाप्रलय को परिभाषित कर देना आवश्यक है-

प्रलय-पौराणिक ग्रंथों के आधार पर-प्रत्येक कल्प का अन्त होने पर अर्थात 43,20,00,000 वर्ष बीतने पर सारी सृष्टि का प्रलय होता है; और सृष्टि अपने मूल कारण अर्थात प्रकृति में लीन हो जाती है; और इसके उपरांत नये सिरे से सृष्टि की रचना होती है। पिछली बार वैवस्वत मनु के समय ऐसा प्रलय हुआ था। ईसाइयों, मुसलमानों आदि में प्रचलित प्रवादों के अनुसार पिछली बार हजरत नूह के समय ऐसा प्रलय हुआ था। वेदांत में प्रलय के ये चार प्रकार या भेद कहे गये हैं-नत्य, नैमिस्तिक, प्राकृत और आत्यंतिक।

बहुत ही उत्कट या तीव्र रूप में और विस्तृत भू-भाग में होने वाला भयंकर विनाश या बरबादी। जैसे-दोनों महायुद्धों के समय सारे युरोप में प्रलय का दृश्य उपस्थित हो गया था।

महाप्रलय-वह जिसमें सब लोकों, उनके निवासियों, देवताओं तथा ब्रह्मा का भी बिनाश हो जाता है।

हैं जो उसे अपने पूर्व घरवालों को स्वप्न में बहुत कुछ बताने-जताने के लिए विवश सा कर देते हैं। उसी क्रम में उसका पुनर्जन्म भी हो जाता है और स्वप्नों के माध्यम से उसकी बताई हुई बातें प्रमाणित भी हो जाती हैं। यद्यपि, यह क्रम अंतिम संस्कार के अंतर्गत-त्रयोदशाः या चालीसवां आदि धार्मिक कृत्यों से जुड़ा होता है या इसी के मध्य एक विशेष घटनाक्रम के माध्यम से एक-दूसरे को स्वप्न में परिलक्षित होता है। पर, इस तरह के घटनाक्रम न तो सामान्य होते हैं और न ही सारभौमिक।

❑ गुरूजी! नया जन्म ग्रहण करने पर शिशु की या व्यक्ति की याददाश्त क्यों और कैसे विस्मृत हो जाती है-कृपया, इसे भी समझाएं?

देखो; भौतिक रूप में तुम यूं समझो कि, नया कपड़ा बदलने के बाद पुराने कपड़े को फैंक देते हो न! यहां तक की उन पुराने कपड़ों की तुम्हें रंचमात्र चिंता भी नही रह जाती है और न ही उसकी स्मृति। एक छोटे से परिवर्तन में, जब स्मृति-विस्मृति में इतना बड़ा अंतर आ जाता है तो मृत्यु जैसे व्यापक परिवर्तन के उपरान्त पुनर्जन्म के माध्यम से नये सूक्ष्म-स्थूल के संयोजन यानी व्यक्ति को पुराना स्मरण या पुरानी बातें कैसे याद रह पायेंगी। मृत्यु के उपरान्त, व्यक्ति या जीव-जन्तु का सूक्ष्म असंख्य योनियों व लोकों आदि की सूक्ष्मीय यात्रा करते-करते अपने मृत्यु के पूर्व की स्थिति को भूल ही नहीं जाता है, बल्कि वह सूक्ष्म पुनर्जन्म की स्थिति में आते-आते एकदम से नया हो जाता है। और नये कपड़े की तरह वह सूक्ष्म, स्थूल से जुड़कर व्यक्ति या जीव-जन्तु के रूप में, नया जीवन शुरू करता है। ऐसी स्थिति में, पूर्व स्मृतियों का विस्मरण हो जाना शत-प्रतिशत आवश्यक है, और कालचक्र के सापेक्ष में सृष्टि की बुनियादी आवश्यकता भी है।

हां; जहां कहीं कभी-कदापि इस क्रम में सृष्टि के रचनात्मक व तथाकथित विकृत बिंदुओं का प्रभाव सूक्ष्म की यात्रा के मध्य उस पर पड़ता है तो पुनर्जन्म के उपरान्त वह सूक्ष्म-स्थूल पुरानी बातों को थोड़ा-बहुत जान-समझ भी लेता है। लेकिन सामान्य घटनाक्रम में, यह सब सृष्टि के सापेक्ष में ज्यादा हितकर नहीं है। इस विकार का निराकरण-समाधान उस व्यक्ति विशेष के लिए आवश्यक है।

प्रलय-महाप्रलय

क्रम में, ये अपनी असीमित यात्रा को पूरी करते हुए जन्म-जन्मांतर के क्रम में स्थूल से जुड़कर नया शरीर धारण करते हैं या फिर ब्रह्मांड के तमाम लोकों व योनियों में अपनी इच्छानुसार या अन्य शक्तियों की इच्छानुसार तब तक भ्रमण करते रहते हैं, जब तक उन्हें नया जन्म नहीं मिल जाता या सृष्टि के अन्य रूपों में परिवर्तित नहीं हो जाते हैं। इसी सूक्ष्मीय यात्रा के अंतर्गत अपने पूर्व जन्मों के कर्म-धर्म व अन्य प्रभावों से प्रभावित होकर तमाम सारे सूक्ष्म यमलोक में पहुंच जाते हैं और वहां पर, यमराज के निर्णय या आदेश के लिए तब तक प्रतिक्षारत रहते हैं जब तक उससे संतुष्ट या असंतुष्ट नहीं हो जाते। वैसे, जहां तक यमराज के बारे में लोगों की अवधारणा है, वह एक स्थिति के बाद भ्रामक बन जाती है। पौराणिक आधार पर लगभग चौदह यमराज हैं। इसी के अनुसार लोकों की भी परिकल्पना कर सकते हो। लेकिन इतना सब होते हुए भी; यह आवश्यक नहीं है कि, सूक्ष्म-स्थूल के विखंडन के उपरान्त यानी मृत्यु के बाद सभी सूक्ष्म यमलोक में जायें और यमराज के निर्णय या आदेश की प्रतिक्षा करें।

अब; जैसे मान लो, किसी संत-महात्मा ऋषि-मुनि, पैगम्बर या सिद्ध पुरुष आदि के सूक्ष्म-स्थूल का विखंडन हुआ, यानी उसकी मृत्यु हुई, तो मृत्यु के पश्चात् उसका सूक्ष्म सीधे यमलोक मे पहुंचे यह आवश्यक नहीं है।

अंतत: इस विवादास्पद प्रश्न के संदर्भ में कालचक्र के सापेक्ष में पूरी सृष्टि के लिए यमलोक भी और लोकों की तरह से एक लोक है। जिस पर तथाकथित यमराज का निरंतर आधिपत्य रहता है।

❑ गुरूजी! ऐसा भी कहा जाता है कि, अगला-जन्म कैसा होगा, यह मृत्यु के समय मन की स्थिति पर निर्भर करता है, लेकिन आमतौर पर मृत्यु के समय व्यक्ति मूर्च्छित हो जाता है, तो अगला जन्म कैसा होगा; इसका निर्धारण किस प्रकार हो सकेगा-कृपया, इसे स्पष्ट करें?

देखो ऐसा है कि-'जन्म-मृत्यु-जन्म' के मध्य बहुत सारे बिंदु किसी न किसी भौतिक या आध्यात्मिक घटनाक्रम के अंतर्गत गतिशील सूक्ष्मों से जुड़ते-टूटते रहते हैं। उस क्रम के अंतर्गत, यह आवश्यक नहीं है कि, सूक्ष्म-स्थूल का संयोजक-यानी व्यक्ति मृत्यु के पूर्व जो सोचता-करता है वह जन्म-जन्मांतर के क्रम में घटित हो, यह आवश्यक नहीं है। किसी भी व्यक्ति का या जीव-जन्तु का अगला जन्म कैसा और कहां होगा इसका निर्धारण 'परा-अपरा' के मध्य एक सीमा तक ही किया जा सकता है। पौराणिक या वैदिक आधार

पर जीव के संबंध में अगले जन्म को लेकर जो भी निर्धारण किया जाता है, वह कुछ सीमा तक ही सत्यापित हो पाता है। क्योंकि, उसका जानकार यदि गहन साधना से नहीं जुड़ा है, तो निश्चित मानो कि, वह वर्तमान में बैठा-बैठा तमाम लोगों को गुमराह कर रहा है।

हां; भौतिक और धार्मिक आधार पर व्यक्ति के कर्म-धर्म, संस्कार व रहन-सहन के आधार पर एक सीमा तंक हम यह निर्णय ले लेते हैं कि, इसका अगला जन्म अच्छा होगा। अच्छे संस्कार-कर्म व्यक्ति के अगले जन्म पर अच्छा प्रभाव डालते हैं। यदि किसी व्यक्ति का प्राणांत आंखों के माध्यम से होता है तो उसके सूक्ष्म को अगला जन्म लेने में अन्य सूक्ष्मों की अपेक्षा आसानी होती है। मुंह के माध्यम से हुए प्राणांत के उपरान्त सूक्ष्म का अगला जन्म अपेक्षाकृत कम अच्छा होता है। कुंडलिनी के नीचले भाग से होने वाले प्राणांत के उपरांत सूक्ष्म की गति अन्य दोनों प्राणांतों की अपेक्षा कम अच्छी होती है। इस तरह का प्राणांत, समान्यत: अकालमृत्यु, आत्महत्या या आत्मदाह आदि के अंतर्गत होता है। इसमें कभी-कभी जन्म-जन्मांतर की प्रक्रिया के अंतर्गत योनि परिवर्तन का भी क्रम उससे किसी न किसी रूप में जुड़ जाता है।

सामान्यत: मानव या जीव-जन्तु का अगला जन्म कर्म-धर्म व संस्कार आदि के अनुसार एक सीमा तक निर्धारित हो जाता है। लेकिन, विशेष परिस्थितियों में; खासकर असामान्य या आध्यात्मिक शक्तियों से जुड़े व्यक्तियों का मृत्यु के उपरान्त अगला जन्म कैसा और कहां होगा-इसका निर्धारण पहले से करना बड़ा कठिन है। हां, जन्म के उपरान्त उसका पूर्वजन्म कैसा या कहां किस रूप में हुआ था-इसका पता लगाना अपेक्षाकृत आसान है।

❑ गुरूजी! कभी-कभी ऐसा भी होता है कि, घर का कोई बड़ा बुजुर्ग मरता है तो कई दिनों तक घर के अन्य लोगों को वह स्वप्नों के माध्यम से भिन्न-भिन्न रूपों में दिखाई देता है। कहीं-कहीं तो ऐसा भी हुआ है कि, स्वप्नों के माध्यम से उस मरे हुए बुजुर्ग या वृद्ध व्यक्ति ने, यहां तक कह डाला हैं कि-मैं बहुत जल्द तुम्हारे घर में पुत्र, नाती या अन्य रूप में (गाय, कुत्ता, बैल, बिल्ली आदि) जन्म लूंगा। गुरूजी, इसके पीछे क्या रहस्य है-कृपया, समझाएं?

देखो ऐसा है-मैंने पहले भी कहा है कि, मृत्यु के उपरान्त उस व्यक्ति के सूक्ष्म को पुनर्जन्म के लिए भिन्न-भिन्न स्थितियों से होकर गुजरना पड़ता है। उसी क्रम के मध्य सृष्टि के कुछ ऐसे भी सशक्त बिंदु उससे जुड़-मिल जाते

[मृत्यु की निश्चितता-अनिश्चितता के मध्य कालचक्र के सापेक्ष में जीव की गति का चक्रीय विधान क्या होगा? इस विवादास्पद प्रकरण के अन्तर्गत -'यमराज और यमलोक' विषय से सम्बन्धित प्रश्नों के समाधान हेतु श्मशान साधक 'अज्ञान' जी से दिनांक : 14 अगस्त 1992 (पूर्वान्ह) को लिए गये लम्बे साक्षात्कार का प्रमुख अंश प्रस्तुत है -]

❑ गुरूजी! मृत्यु के देवता 'यमराज' क्या हैं, कौन हैं-यह बतायें और कृपया, 'यमलोक' की चर्चा भी करें?

जब व्यक्ति मरता है, यानी 'सूक्ष्म-स्थूल' के बीच घटनाक्रम के अंतर्गत विखंडन होता है तो उसके स्थूल (शव) का धर्म-महजब और जाति आदि के आधार पर अंतिम संस्कार होता है। अंतिम संस्कार के आधार व आकार-प्रकार पर उस पूर्व जीव (सूक्ष्म-स्थूल) के सूक्ष्म की गतिशीलता में निरंतर परिवर्तन होता रहता है। जैसे-हिंदूओं में त्रयोदशा:, मुसलमानों-ईसाइयों में चालीसवां आदि का जो अंतिम क्रम चलता है वही उस जीव के अंतिम संस्कार से जुड़ता है।

इसी क्रम में, उस पूर्व जीव (सूक्ष्म-स्थूल) के सूक्ष्म के आकार-प्रकार से यमराज की भूमिका जुड़ती है। देखो; यमराज की जो परिकल्पना है या पौराणिक ग्रंथों में जो यमलोक का वर्णन है, वो कोई आश्रम या कॉलोनी नहीं है- और न ही यमराज उसका स्वामी! 'यमराज' को शाब्दिक अर्थ में, यूं भी समझ सकते हो कि-यमों के राजा धर्मराज; जो प्राणी के मरने के उपरांत उसके कर्मों का विचार कर उसे दंड या शुभ फल देते हैं। पौराणिक ग्रंथों के आधार पर इनकी संख्या लगभग 14 है। यमलोक की जहां तक बात है-'वह लोक जहां मरने के उपरांत मानव या जीव-जन्तु का सूक्ष्म जाता है।'

देखो, यह तो हुआ तुम्हारे प्रश्न का परंपरागत प्रत्युत्तर। अब इस विवादास्पद प्रश्न की आध्यात्मिक विवेचना भी कर ली जाए. तो ज्यादा अच्छा होगा।

सूक्ष्म-स्थूल के विखंडन के उपरान्त यानी मृत्यु के उपरान्त व्यक्ति का स्थूल तो पंचतत्व में विलिन हो जाता है, लेकिन उसका सूक्ष्म जन्म-जन्मांतर के घटनाक्रम से जुड़कर पुनर्जन्म या उससे ऊपर की यात्रा के लिए गतिशील हो उठता है। अपनी सूक्ष्मीय यात्रा के अंतर्गत वह सूक्ष्म असंख्य योनियों में भ्रमण करते हुए तमाम लोकों में भी विचरण करता है। यह सब उस सूक्ष्म के जन्म-जन्मांतर के कर्म-धर्म व सृष्टि से जुड़े तमाम पक्ष-विपक्ष के असंख्य बिंदुओं के प्रतिफल पर निर्भर करता है। कहने का मंतव्य यह है कि, सृष्टि के असंख्य बिंदु जिसके घेरे में असंख्य सूक्ष्म किसी न किसी रूप में घिरे रहते हैं। उसी

अत: मैं फिर कहता हूं कि सिद्धाश्रम या ज्ञानगंज को लोकों से मत जोड़ो।

❑ गुरूजी! 'ज्ञानगंज' या 'सिद्धाश्रम' को थोड़ा और स्पष्ट करने की कृपा करें?

देखो, बात ऐसी है, जब हम जीवन को लेकर के बात करेंगे, यानी सूक्ष्म-स्थूल के संयोजन को ले करके बात करेंगे। मृत्यु को लेकर के बात करेंगे, यानी सूक्ष्म-स्थूल के विखंडन को लेकर के बात करेंगे, तो ऐसी स्थिति में किसी व्यक्ति विशेष या तथाकथित सिद्ध साधक की दृष्टि को या वक्तव्य को अंतिम या उच्चतम या सर्वोत्कृष्ट नहीं माना जा सकता। यदि स्वामी विशुद्धानंद जी ने इसी क्रम में जो कुछ कहा है, तो कहा होगा। वह सब एक सीमा तक या एक स्थिति तक कालचक्र के सापेक्ष में सार्थक या निरर्थक हो सकता है क्योंकि, स्वामी विशुद्धानंद जी जहां तक पहुंच पाए, उसके बाद भी ऐसे बिंदु शेष हैं, जो कि अभी अनछुये पड़े हुए हैं, और कब तक अनामित व अस्पष्ट पड़े रहेंगे- कहा नहीं जा सकता। जहां तक उन्होंने देखा अनुभव किया उसकी बात कही जो परोक्ष-अपरोक्ष में तमाम साधकों व उससे जुड़े व्यक्तियों के समक्ष आई। लेकिन वही सब तो साधना की चरम सीमा नहीं हो गई। जीवन और मृत्यु का सारा का सारा प्रपंच वहीं तो समाप्त नहीं हो गया। हम उनकी खोजी-सोधी आध्यात्मिक विद्याओं का सम्मान करते हैं, हम उनके दृष्टिकोण की कद्र करते हैं। लेकिन इसका यह अर्थ नहीं है कि वही चरम बिंदु है। आध्यात्मिक दृष्टि से वही सब कुछ नहीं है। ब्रह्मांड में स्थित हजारों-लाखों बिंदुओं पर अभी भी कोई साधक नहीं पहुंच पाया है। यहां तक की अभी कई लोकों का नामकरण तक नहीं हो पाया है। मैं अपनी सूक्ष्मीय यात्राओं के अंतर्गत आध्यात्मिक शोध में कुछ ऐसे लोकों में भी गया हूं जो अभी तक अनामित हैं। कई बार तो उस लम्बी अज्ञात यात्रा में मैं फंस भी चुका हूं।

अंतत: मेरे कहने का अभिप्राय यह है कि-'ज्ञानगंज' या 'सिद्धाश्रम' एक विशेष सिद्धस्थली तो हो सकती है, लेकिन आध्यात्मिक प्रशिक्षण का केन्द्र नहीं।

यमराज और यमलोक

साधना के अंतर्गत, यदि हमारे शरीर के चक्र चाहे-अनचाहे जाग्रत हो गये हों तो इसका यह कदापि अर्थ नहीं है कि, हम जो चाहे सो कर डालें। इसी संदर्भ में, मैं तुम्हें एक पूर्व घटित घटना बताता हूं-

'नौ-दस वर्ष पूर्व; एक शाम को मैं दारागंज के श्मशान पर कुछ साधना संबंधी कार्य के निमित्त बैठा हुआ था। उसी समय एकाएक वहां का आकाशीय वातावरण असामान्य सा हो गया। ऐसा लगा मानो; किसी ने सिर पर मन भर का पत्थर रख दिया हो और उसी क्रम में चारों ओर लालिमा सी दिखने लगी। उस असामान्य स्थिति को शोधने-परखने के लिए जब मैंने सूक्ष्म गतीय यात्रा प्रारंभ की तो उस घटनाक्रम में आध्यात्मिक दृष्टि से यह पता चला कि, नदी के दूसरे किनारे पर किसी सिद्ध संन्यासी ने अपना भौतिक शरीर त्यागा है। पर, उसका सशक्त सूक्ष्म तेरह सौ योजन की प्रारंभिक यात्रा नहीं कर पा रहा है। वह लौट-लौट कर नीचे की ओर आ रहा था। उसी क्रम में, विरोधी-शक्तियां उसे अपने घेरे में लेने के लिए चारों तरफ गतिशील हो चुकी थी। अन्ततः मुझे उस संन्यासी के सूक्ष्म को एक नये सूक्ष्म-मार्ग से आरंभिक यात्रा पूरी कराकर ऊपर की यात्रा के लिए यानी असंख्य योनियों व लोकों की यात्रा के लिए भेजना पड़ा। तो इस स्थिति में तुम क्या कह सकोगे कि, जिसके सारे चक्र-जाग्रत हों उसका पुनर्जन्म हो जायेगा या पुनः जन्म लेना उस सूक्ष्म की इच्छा पर निर्भर करेगा? अधिकांशतः तो ऊंपर की बातें सत्यापित हो जायेंगी लेकिन शत-प्रतिशत नहीं।

❑ गुरूजी! क्या 'सिद्ध लोक' ही सिद्धाश्रम है- क्योंकि कुछ तथाकथित धर्मगुरु व धर्माचार्य सिद्धाश्रम की बात करते हैं यह सिद्धाश्रम क्या है; और कहां पर स्थित है- कृपया, इस संबंध में भी कुछ कहें?

देखो सिद्धाश्रम जो है वो भौतिक भी हो सकता है और आध्यात्मिक भी। सच पूछो तो इस शब्द को या इसके अर्थ को बढ़ा-चढ़ा कर लोगों के सामने प्रस्तुत करना मात्र धार्मिक पाखंडियों का कोरा प्रलाप है। सिद्ध या सिद्धि से जो सूक्ष्म-व्यापक अर्थ मिलता है वो साधकों के लिए अभीष्ट साध्य, गृहस्थों के लिए अभीष्ठ लक्ष्य की पूर्ति व अन्य जीव-जंतुओं के लिए जीवन यात्रा का चरम बिंदु होता है। ऐसी स्थिति में भौतिक दृष्टि से किसी भी साधक या आध्यात्मिक प्रक्रियाओं से जुड़े व्यक्ति का सिद्धाश्रम वही होगा जहां उसे

परमानंद या परम सुख की अनुभूति होगी। वैसे, मैंने कई स्थलों पर लिखा और बोला है कि उच्चतम से उच्चतम साधना के लिए या उससे संबंधित ऋद्धि-सिद्धि की प्राप्ति के लिए पांच स्थल मुख्य हैं-पीपल, बरगद और गूलर का वृक्ष, श्मशान, आवेशयुक्त धार्मिक स्थल, वेश्या का कोठा व स्त्री का शयन कक्ष आदि। इन पांचों स्थलों पर कोई साधक ऋद्धि-सिद्धि प्राप्त करते हुए आध्यात्मिक साधना की चरम ऊंचाई तक जा सकता है। तो ऐसी स्थिति में, इन पांचों स्थलों में से किसी भी स्थल को सिद्धाश्रम बना लो-रोका किसने है? वैसे हिमालय के एक विशेष स्थल को सिद्धाश्रम कहने की जो कुछ तथाकथित धर्माचार्यों ने अवधारणा बनाई है वह शत-प्रतिशत निराधार व गलत है।

❑ गुरूजी! लेकिन तथाकथित कुछ सिद्ध साधकों ने जो ज्ञानगंज का जिक्र किया है जिसे वो सिद्धाश्रम भी कहते हैं और तिब्बत प्रदेश में कहीं इसके होने की बात कही गई है, इसके बारे में आपका क्या कहना है?

देखो, सच पूछो तो हिमालय का वह उच्चतम स्थल जो तिब्बत की ओर उन्मुख है वहीं सिद्धाश्रम की परिकल्पना तथाकथित सक्षम समर्थ साधकों द्वारा की गई है। उन्हीं में से स्वामी विशुद्धानंद महाराज को भी ले सकते हो। लेकिन, सिद्धलोक अलग है और सिद्धाश्रम अलग। सिद्धाश्रम पृथ्वी पर एक से दो, दो से चार या कई हो सकते हैं पर सिद्धलोक तो अनेक नहीं होंगे।

अभी इस समय जहां तुम बैठे हो उसे या उस स्थल के बारे में तुम अपनी क्या अवधारणा बनाओगे? यही वो स्थल है जहां से मैं 'परा-अपरा' के मध्य 'कालचक्र के सापेक्ष में जीव और उसकी गति' को लेकर के बीस-बाईस वर्षों से शोधरत हूं। यही नहीं बल्कि सूर्यास्त के उपरान्त और सूर्योदय के पूर्व के बीच मैं इस शक्तिशाली स्थल से लगभग पन्द्रह-सोलह हजार किलोमीटर दूर तक की यात्रा सूक्ष्मीय गति से सामान्य आध्यात्मिक स्थिति में कर लेता हूँ। हां; यही यात्रा दिन में यानी सूर्योदय के बाद और सर्यास्त से पूर्व के बीच सिकुड़ कर पांच-छः हजार किलोमीटर की दूरी तक आ पहुंचती है। सच पूछो तो, यहां पर कई तरह की आध्यात्मिक प्रयोगशालाएं परोक्ष-अपरोक्ष रूप में इस स्थल से जुड़ी हुई हैं जहां तुम बैठे हो।

हो या क्यों उसका मूल्यांकन करते हो? फिर साधना की सफलता का अर्थ मात्र ऋद्धि-सिद्धि ही नहीं है। इसके आगे भी बहुत कुछ होता है जो परा के अंतर्गत एक शोध व अन्त: उपलब्धि का साधन-समाधान निरन्तर बना रहता है।

साधक-साध्य और साधना जैसे व्यापक-सूक्ष्म शब्दों के अर्थ को जानने-समझने के उपरांत हम प्रमाणिक तौर पर यह नहीं कह सकते कि, साधना का अंतिम लक्ष्य या चरम लक्ष्य केवल ऋद्धि-सिद्धि ही होगा। वह तो एक क्षणिक या समसामयिक लक्ष्य या साध्य हो सकता है। पर, हर साधक के लिए नहीं। जैसे मान लो, कोई व्यक्ति सांप-बिच्छु झाड़ने का मंत्र जानता है या सम्मोहन-उच्चाटन जैसी प्रक्रियाओं से भिज्ञ है- क्या यहां भी उसकी कुंडलिनी जाग्रत करवाओगे?

अरे भाई, उच्चतम साधनाओं के लिए या संबंधित ऋद्धि-सिद्धि के लिए कुंडलिनी या अन्य चक्रों का जाग्रत होना एक स्थिति तक आवश्यक होता है। तो तुम्हीं सोचो जो साधक उस स्थिति तक पहुंचेगा तो क्या उसके चक्र स्वत: या साधना प्रक्रिया के अंतर्गत जाग्रत नहीं हो जायेंगे? अब जैसे, किसी जिले के जिलाधिकारी से यह पूछो कि क्या तुम चकबंदी या हकबंदी के बारे में कुछ जानते हो या मानवीय अधिकारों-मूल्यों से भिज्ञ हो, तो यह उपहास का ही विषय होगा न? ठीक यही स्थिति या बल्कि यूं कहो इससे हजारों गुणा उच्चतम स्थिति परा-विज्ञान के अंतर्गत साधनारत साधकों की होती है। ऐसे में, चक्रों को जाग्रत करना या उन्हें सुप्तावस्था में लाना कम से कम ऋषि-महर्षि या ब्रह्मर्षि या उसके समकक्ष साधकों के लिए एक सामान्य बात या प्रक्रिया है। हां, अनाहत चक्र के ऊपर की स्थितियों के संबंध में उन्हें भी साधना की गहराई में डूबना-तैरना पड़ता है।

सच पूछो तो, ब्रह्मांड में बहुत सी साधनाएं या उससे संबंधित ऋद्धि-सिद्धि ऐसी हैं जिसे प्राप्त करने के लिए कुंडलिनी ही क्या, कोई भी एक चक्र जाग्रत हो उसकी सफलता में विशेष व्यवधान नहीं आता। हां; परा की स्थितियों के लिए चक्रों का जाग्रत होना आवश्यक होता है। पर चक्र हर वक्त जाग्रत हों यह आवश्यक नहीं है।

❑ गुरूजी! क्या कुंडलिनी-जागरण ही अध्यात्म का अंतिम बिंदु है या कि उसके बाद भी बहुत कुछ है- कृपया, समझाएं?

सच पूछो तो, कुंडलिनी जागरण 'परा' का पहला-दूसरा सोपान है, या यूं कहो कि आरंभिक स्थिति है। हां, सकल-शिव को उच्चतम स्थिति मान सकते हो। इन दोनों के मध्य अन्य सारे चक्र 'अनाहत' से संपर्क स्थापित करते हुए जाग्रत व सुप्तावस्ता में क्रमानुसार आते रहते हैं।

❑ गुरूजी! कुंडलिनी-जागरण के बाद, यानी की जो साधक सहस्त्रार चक्र (सकल-शिव) तक जा पहुंचा है, क्या उसका पुनर्जन्म होगा? क्या, वह आवागमन से मुक्त हो जायेगा? कृपया, विस्तारपूर्वक समझाएं।

देखो ये सब कोरी बकवास है। यह तुमसे किसने कह दिया कि, कुंडलिनी जागरण के बाद शरीर धारण करने की आवश्यकता नहीं रह जायेगी या सहस्त्रार चक्र जाग्रत हो जायेगा तो उस सूक्ष्म का पुनर्जन्म नहीं होगा। ऐसा नहीं होता है। यदि कोई सूक्ष्म अपनी यात्रा करते-करते अच्छे लोकों में पहुच जाता है तो पुनर्जन्म लेना अब सूक्ष्म की इच्छा पर निर्भर करता है। जैसे सिद्धलोक है, देवलोक है, शिवलोक है आदि या अन्य अनामित लोक हैं जहां कि, सूक्ष्म पहुंचने के उपरान्त पुनर्जन्म लेना यदि आवश्यक समझता है तो ले लेता है। हां, यदि वह उसी में रम-बस गया तो पुन: जन्म लम्बे अन्तराल तक नहीं लेगा या यह भी हो सकता है कि वह सूक्ष्म कभी भी पुन: जन्म न ले। मोक्ष की स्थिति में अधिकतर सूक्ष्मों की स्वत: यह स्थिति बन जाती है कि, वह पुन: जन्म लेना आवश्यक नहीं समझता। इन सब उच्चतम स्थितियों में पहुंचने से पूर्व सूक्ष्म-स्थूल के संयोजन में, यानी भौतिक शरीर रूप में अपनी साधना के अंतर्गत कुंडलिनी से लेकर 'सकल-शिव' के मध्य सारे चक्रों को उसी तरह अपने अनुकूल बना लेता है जैसे कोई सफल मदारी अपनी एक विशेष धुन में विषधर सर्पों के साथ खिलवाड़ करता है।

अब तुम्हें यह जानकर बड़ा आश्चर्य होगा कि, कुछ विशेष लोकों में साधक सूक्ष्म रूप में या स्थूल से अलग-थलग, कुछ सशक्त सूक्ष्म आगे के लोकों में पहुंचने के लिए निरंतर साधनारत रहते हैं। उस समय, उन सशक्त साधनारत सूक्ष्मों का आकार-प्रकार मात्र एक अंगूठे जितना रहता है। उस आकार-प्रकार को भी वे सूक्ष्म अपनी इच्छानुसार साधना के मध्य लघु से लघु बनाते रहते हैं। तो ऐसी स्थिति में, चक्रों आदि की बात करना व्यर्थ हो जायेगा न!

है कि 'तर्क से खुदा नहीं मिलता' 'खुदा' श्रद्धा-विश्वास व विशुद्ध समपर्ण से मिलता है। दूसरी महत्वपूर्ण बात यह है कि, जिनकी कुंडलिनी सहज रूप से जग रही है-या जग चुकी है, उन्हें भी अज्ञानतावश कई बार यह बोध नहीं हो पाता कि- कुंडलिनी शक्ति जग रही है या जग चुकी है। एक साधक जो खूब प्रयासरत है, उसी क्रम में तनावग्रस्त भी हो चुका है, ऐसे में, वह कहीं न कहीं निश्चित गलती करेगा और कई-कई जन्मों तक उसी में लगा रहेगा। तो, तुम्हीं सोचो कि एक साधक का चक्र जन्म-जन्मांतर के कर्म-धर्म के आधार पर स्वत: जागृत हो रहा है और दूसरे का प्रयासस्त होने के बावजूद भी नहीं जागृत हो पा रहा है। या वह उस भ्रमित स्थिति को पहचान नहीं पा रहा है। ऐसी स्थिति में दोनों में अंतर हो जायेगा, न! सबसे बड़ा तंत्र तो किसी सूक्ष्म का गर्भ में प्रवेश करना है और नौ-दस माह के अंतराल में उसका बच्चे के रूप में गर्भ से बाहर आना है, यानी जन्म लेना है। तुम्हीं सोचो क्या इन तांत्रिक प्रक्रियाओं में मानव के सभी चक्र सुप्तावस्था में रहेंगे? अगर तथाकथित भ्रमित साधकों या विद्वानों की इन भ्रामक बातों को मान लिया जाये तो ब्रह्मांड का कोई सूक्ष्म कैसे गर्भ में आएगा और स्थूल से जुड़ कर मानव या जीव-जंतु का रूप कैसे धारण करेगा?

देखो; केवल मंत्र-यंत्र या पूजा-पाठ से तंत्र या तांत्रिक प्रक्रियायें नहीं चलती हैं। वह तो सूक्ष्म-स्थूल के हर परिवर्तन से जुड़ी होती हैं और तब तक जुड़ी रहेगी, जब तक सृष्टि-ब्रह्मांड का तारतम्य बना रहेगा।

इस मार्ग में, सबसे बड़ी समस्या यह है कि-बहुत से साधक न तो पढ़े-लिखे होते हैं और न ही उनमें आध्यात्मिक शक्तियों को जानने-पहचानने की तात्विक समझ होती है। और जो थोड़ा-बहुत पढ़-लिख लेते हैं वे स्वत: अपने को विद्वान समझ बैठते हैं। इन दोनों परिस्थितियों में चक्रों के जाग्रत होने या सुप्तावस्ता में रहने की प्रक्रिया से वे पूर्णत: जुड़-मिल नहीं पाते। हां; जहां विद्वता, साधना में समरसता बन जाती है वहां इस तरह की न तो भ्रामक स्थिति बनती है और न ही चक्र आदि के जाग्रत होने या न होने की समझ में ही कोई विशेष अंतर पड़ता है।

कुंडलिनी या अन्य चक्रों के जाग्रत होने में कभी-कभी जो लम्बा समय तथाकथित साधकों को लग जाता है, उसके पीछे भी कई कारण हो सकते हैं-

सबसे प्रमुख कारण तो यह है कि- साधना के अंतर्गत साधक अनभिज्ञता या अज्ञानतावश; अनुशासन व स्व-अनुशासन को गरहाई से नहीं समझ पाता। इसी क्रम में, वह यह भी नहीं जान पाता कि- गुरू परंपरा में अनुशासन के अंतर्गत कैसे रहा जाता है। परिणाम यह होता है कि, वह यह सोचने में विवश हो जाता है कि-अमुक गुरू में यह कमी है; अमुक गुरू में वह कमी है या इसी तरह की नाना प्रकार की बातें। जबकि, साधना प्रक्रिया में साधक को जानने-समझने व उनकी बातों का स्वस्थ अनुगमन करने में अनुशासन व स्व-अनुशासन का प्रयोग निरंतर करना चाहिए।

ऐसी स्थिति में, साधक के चक्रों की जागृति का अंतराल या समय कालचक्र के सापेक्ष में न्यूनतम भी हो सकता है, यदि पूर्वजन्मों की स्थितियां उसके लिए विशेष बाधक नहीं है। हां; अगर गुरू समर्थ होगा तो पूर्व जन्मों की स्थितियों में भी कोई न कोई सुधार की बात अवश्य सोचेगा। क्योंकि, गुरू के लिए शिष्य पुत्र से कम प्रिय नहीं होता है।

अन्तत: योग साधना के अंतर्गत भी तमाम ऐसे मार्ग होते हैं जिनके माध्यम से कुंडलिनी या अन्य चक्रों को अल्प समय में भी जाग्रत किया जा सकता है। मेरे कहने का मन्तव्य यह है कि, चक्रों की स्थिति किसी क्षण भी जाग्रत हो सकती है। हां; स्थायित्व के लिए योग्य गुरू का सानिध्य व अनुशासन-स्वअनुशासन के अंतर्गत साधना प्रक्रिया से जुड़ना आवश्यक है।

❑ गुरूजी! अक्सर साधकों द्वारा यह कहा जाता है कि कुंडलिनी जागरण के बिना साधना में सफलता या सिद्धि प्राप्त नहीं होती, क्या यह सच है? कृपया, इसे स्पष्ट करें।

देखो; उपरोक्त तथ्य-कथ्य को सामान्य तौर पर एक सीमा तक मान सकते हो, लेकिन उसके आगे यह पूर्णत: प्रमाणित नहीं हो पायेगा। सच पूछो तो, कान के नीचे की स्थिति 'अपरा' के अंतर्गत आती है और कान से ऊपर की स्थिति 'परा' के अंतर्गत आती है। अब जैसे; इस्लाम धर्म-मजहब को मानने वाले पांच वक्त की नमाज अदा करते हैं या खुदा की इबादत करते हैं, उनके हाथ की उंगली कानों में और सिर पृथ्वी की ओर होता है-क्या यह साधना नहीं है? तुम साधना को किसी धर्म-सम्प्रदाय विशेष में बांट कर क्यों आंकते

भई, तंत्र के बिना सूक्ष्म-स्थूल का अस्तित्व कहां रह जायेगा। और जब उन दोनों का अस्तित्व रहेगा; तो वहां तंत्र भी रहेगा। सच पूछो तो तंत्र और तंत्र साधना को लेकर के तमाम साधकों और विद्धानों के बीच एक भ्रामक स्थिति अनादि-काल से बनी हुई है; और आज भी बनी है। लोगों का मात्र ये भ्रम है कि, मंत्र या उससे संबंधित तथाकथित क्रियाओं में तांत्रिक क्रियाएं संचालित होती हैं या यज्ञ-महायज्ञ आदि से तांत्रिक क्रियाओं की पुष्टि होती है- ये सब की सब भ्रामक स्थितियां हैं। जहां तक मंत्र या तांत्रिक क्रियाओं की बात है; तो इस संबंध में मैंने कादिम्बनी के तंत्र विशेषांक (1991) में स्पष्ट कह दिया है कि- जहां विज्ञान का अंत होता है, वहीं से दर्शन का आरम्भ होता है, जहां दर्शन का अंत होता है वहीं से योग शुरू होता है और योग की चरम सीमा पर तंत्र की शुरूआत होती है। सच पूछो तो तांत्रिक प्रक्रियाएं तो उसी समय आरंभ हो गयी जिस क्षण ब्रह्मांड के अंतर्गत सृष्टि ने आकार लिया। सूक्ष्म जब गर्भ में आता है और स्थूल से जुड़कर नया आकार ग्रहण करता है- वह भी तांत्रिक प्रक्रिया है। भई, अर्द्धनारीश्वर की स्थिति को तुम क्या कहोगे? - क्या, उस स्थिति को तंत्र या तांत्रिक प्रक्रियाओं से अलग-थलग रखकर जान-परख सकते हो या उसकी सूक्ष्मतम स्थिति का परिज्ञान उसके बिना कर सकते हो। नहीं; कदापि नहीं।

तो तुम्हें अपनी जिज्ञासा का प्रत्युत्तर मिल गया न! तंत्र और उससे जुड़ी प्रक्रियाओं का संबंध वैसे ही होता है जैसे मानव या जीव-जंतुओं के शरीर में सूक्ष्म-स्थूल का संयोजन।

❑ गुरूजी! कुछ सामान्य लोग या जिनका साधना से कोई विशेष संबंध नहीं दिखता है वे भी कभी-कभी सूक्ष्म शक्तियों को देख-जान लेते हैं; ऐसा कैसे संभव होता है? कृपया समझाएं।

भई, तुमने ये कैसे समझ लिया कि वे सामान्य आदमी हैं? कभी-कभी सामान्य से दीखने वाले व्यक्तियों में भी कोई न कोई सिद्ध या अभिष्ट साधक छिपा होता है जो सूक्ष्म शक्तियों को ही क्या ब्रह्मांड की तमाम सारी स्थितियों को देखता-परखता रहता है। इसी संबंध में मैं तुम्हें एक पूर्व घटित घटनाक्रम को बताता हूं-

'सात-आठ वर्ष पूर्व की बात है। एक दिन रात को मैं श्मशान से लौट

रहा था। संयोग से पैदल था। रास्ते में एक भिखारी फटेहाल स्थिति में सामने आकर खड़ा हो गया। सामान्यत: मैं भीख मांगने वालों को पसन्द नहीं करता। उस स्थिति में भिक्षा देना मेरे लिए संभव नहीं था। पर ज्यों ही मैं दो कदम आगे बढ़ा, तुरंत यह आभास हुआ, यह भिखारी सामान्य नहीं है। मैं लौट पड़ा और उसके सामने पर्स निकाल कर बोला- 'लो बाबा जितना चाहे ले लो या सब लेना हो तो सब ले लो।' पर उस पर्स से उसने मात्र दो रुपये ही लिये, जबकि उसके अंदर लगभग साढ़े-तीन सौ रुपये थे।

तो ऐसी स्थिति में, क्या तुम उसे सामान्य ही समझोगे? वो मेरी परीक्षा ली जा रही थी, और वो भी एक भिखारी की वेश-भूषा के अंतर्गत।

वैसे भी, सभी लोगों में कुछ-न-कुछ तांत्रिक गुण तो होते ही हैं। यह बात दूसरी है कि, वे गुण सूक्ष्म से सूक्ष्म स्थिति में हों या विकृत स्थिति में हों या फिर किसी न किसी स्थिति में कुछ न कुछ तो होगा ही।

❑ गुरूजी! अनाहत चक्र के जागृत हुए बिना कोई साधक सूक्ष्म शक्तियों को देखने-समझने में सक्षम कैसे होगा?

देखो; साधक या साधना से जुड़े हुए व्यक्ति का चक्र कभी-कभी स्वत: सक्रिय हो जाता है। वैसी स्थिति में वह सूक्ष्म शक्तियों को देख-परख लेता है। हाँ; यह बात दूसरी है कि वह सक्रियता की स्थिति दो-चार या दस-पाँच क्षण की हो। ऐसे क्षणों में, कभी-कभी तो व्यक्ति प्रसन्न हो उठता है और कभी-कभी विरोधी शक्तियों से साक्षात्कार हो जाने पर भयभीत भी हो उठता है। लेकिन उन क्षणों में अनुभूति तो होगी ही। हाँ; चक्रों की सक्रियता की स्थिति समाप्त होते ही, वह पुन: सामान्य हो जायेगा।

❑ गुरूजी! लेकिन इस संदर्भ में बहुत से साधकों का यह कहना है कि चक्र कभी भी संयोग से जाग्रत नहीं होते। इसके पीछे तो साधना की एक लम्बी प्रक्रिया जुड़ी होती है। यह घटना तो जन्म-जन्मान्तर के बाद भी मुश्किल से घटती है। कृपया, इस विरोधाभास को स्पष्ट करें ?

देखो; इन सबके पीछे भी बहुत बड़ी धार्मिक कूटनीति है। बहुत से सड़क छाप अधकचरे साधक अपनी साधकीय स्थापना के लिए कई तरह की ऐसी बातें उछालते हैं जो बड़ी गोल-मोल या भ्रामक होती हैं। एक पुरानी कहावत

होते ही तुम सामाजिकता या व्यवहारिकता से इतना कट-हट जाओगे कि, जिससे तुम्हे हर वक्त एकांत की तलाश रहेगी और वह तलाश तब तक रहेगी, जब तक तुम बचते-बचाते अनाहत चक्र तक नहीं पहुंच जाओगे। ऐसी स्थिति में, 'गीता के कर्मयोग' मोहम्मद साहब की भाई-चारे की भावना और ईसा मसीह के प्रेम के संदेश आदि का क्या महत्व होगा? इसलिए हर स्थिति में, खासकर सूक्ष्म-स्थूल के संयोजन के तहत चक्रीय विधान को लेकर के कभी भी एक तरफा रास्ते की तलाश नहीं करनी चाहिए, क्योंकि हो सकता है- किन्हीं विशेष अवरोधों के अंतर्गत तुम इतना सब करने के पश्चात भी सूक्ष्म जगत की यात्रा न कर पाओ।

इस चक्रीय विधान के संबंध में, बस इतना जान-समझ लो कि- लोक-परलोक या अनामित लोकों में सूक्ष्म गति से यात्रा करने के लिए साधक को हर स्थिति में अनाहत चक्र तक पहुंचना होगा। यानी, अनाहत चक्र या चौथे शरीर से जुड़कर जाग्रत अवस्था में ही साधक अनाहत चक्र व सदाशिव के मध्य अपनी सूक्ष्मीय यात्रा तब तक कर सकता है, जब तक वह लाभ-हानि के सिद्धांत पर मूलत: आश्रित नहीं होगा। क्योंकि, वहां तो जो कुछ भी साधक बनाता- बिगाड़ता है वह स्वत: एक सिद्धांत या सूक्ष्म-स्थूल के संयोजन का भौतिक-आध्यात्मिक यात्रा विधान के अंतर्गत नया रास्ता बन जाता है। जहां तक चौथे शरीर से जुड़ने-टूटने की बात है, तो वह सब एक स्थिति तक ही संभव है। भौतिकता से परे वह सब संभव हो भी सकता है और नहीं भी।

❑ गुरूजी! विज्ञान कहता है कि, त्रिआयामी वस्तुएं ही स्थूल आंखों से देखी जा सकती हैं और सूक्ष्म-शरीर एकल आयामी होता है। तो कृपया, आप ये बताएं कि सूक्ष्म-शक्तियों को देख पाना फिर किस प्रकार संभव है, क्या अनाहत चक्र जागरण के बिना भी उनको देखा जा सकता है?

कुंडलिनी यानी की मूलाधार चक्र के सक्रीय होने से सूक्ष्म शक्तियों को देखा-परखा जा सकता है। मूलाधार चक्र के जाग्रत होने से ऊपर की बहुत ऊंची स्थिति तो नहीं देख पायेंगें, लेकिन बहुत सी योनियों की पहचान व भ्रमण संभव हो जायेगा, पर उसका तौर-तरीका थोड़ा भिन्न होगा। यानी कि देखने का अर्थ यह है कि किसी सूक्ष्म शक्ति का मात्र आभास होगा- अपने इर्द-गिर्द। यह सब

स्वप्न के माध्यम से भी देखा जा सकता है और जागृत अवस्था में आंख बंद कर लेने से भी उन शक्तियों का अनुभव होने लगेगा। लेकिन जिनका अनाहत चक्र जाग्रत है वह तो एकदम स्पष्ट देख सकता है। अतिन्द्रिय-दर्शन बहुत सहज हो जाता है। लेकिन इसकी भी कुछ न कुछ समस्याएं हैं- एक साधक जो योगिक क्रियाओं के माध्यम से चल रहा है, वहां तो उसका सीधा इन चक्रों से जुड़ाव हो जाता है। लेकिन अन्य साधनाओं में चक्रों का खुलना बड़ा आंतरिक है। वह साधक जब कभी मुख्य या प्रमुख लोकों के सूक्ष्म प्राणियों या शक्तियों को देखने लगता है तो उस बीच कभी-कभी नये भ्रम भी जन्म ले लेते हैं। जैसे मान लो, एक दुष्ट आत्मा विकृत अवस्था में है और वह आकर आपके अनाहत चक्र से अनायास जुड़ गयी तो उस स्थिति में वह आप पर भी झपट्टा मार सकती है। और इन सबसे बचने के लिए सुरक्षा की दृष्टि से जो बड़ा उपाय है, वह है- तांत्रिक क्रियाएं।

जहां तक वैज्ञानिक अवधारणाओं की बात है, तो इस संबंध में इतना ही कहना पर्याप्त है कि - अभी तो विज्ञान अपने स्व: निर्मित अर्द्धवृत पर घूम रहा है यानी कि वह अभी पदार्थ से ऊर्जा तक पहुंच पाया है। जिस दिन विज्ञान पदार्थ से ऊर्जा और ऊर्जा से फिर पदार्थ तक पहुंच जायेगा उस दिन उसे आध्यात्मिक शक्तियों व ब्रह्मांड के असंख्य सूक्ष्मों को जानने-पहचानने व परखने में विशेष कठिनाई न होगी। भई, इस विवाद के संदर्भ में; मैं सिर्फ इतना ही कहूंगा कि अभी इस अर्द्धविकसित विज्ञान को आध्यात्मिक शक्तियों को जानने-समझने में हजारों-हजारों वर्ष लग जायेंगे। हां; यदि वह कहीं अपनी यात्रा में दिगभ्रमित हो गया तो यह अंतराल और भी लम्बा-चौड़ा हो सकता है। इसलिए अनाहत चक्र और सदाशिव के जागृत स्थिति में उन दोनों के मध्य साधक ब्रह्मांड के असंख्य सूक्ष्मों व उससे संबंधित शक्तियों को जिन परिस्थितियों में जानता-समझता है, वह स्वयं एक ऐसा विशिष्ट आध्यात्मिक विज्ञान है जो वर्तमान विज्ञान (भौतिक) की समझ से परे है।

❑ गुरूजी! तंत्र-साधना में इन चक्रों का क्या महत्व है? क्या चक्रों के जागृत हुए बिना भी तांत्रिक क्रियाएं या प्रक्रियाएं संभव हैं? कृपया, समझाएं।

[मृत्यु की निश्चितता-अनिश्चितता के मध्य कालचक्र के सापेक्ष में जीव की गति का चक्रीय विधान क्या होगा? इस विवादास्पद प्रकरण के अन्तर्गत -'अतिन्द्रिय दर्शन का मूल-अनाहत चक्र' विषय से सम्बन्धित प्रश्नों के समाधान हेतु श्मशान साधक 'अज्ञान' जी से दिनांक : 15 जुलाई 1992 (सांय) को लिए गये लम्बे साक्षात्कार का प्रमुख अंश प्रस्तुत है -]

❑ गुरूजी! प्रेत-योनि, देव-योनि व अन्य योनियों को आपने स्पष्ट किया। इन योनियों को मुख्यत: चौथे शरीर यानी की मनस शरीर से जोड़ा जाता है। इस चौथे शरीर (जिसे अनाहत चक्र भी कहते हैं) को अतिन्द्रिय दर्शन का मूल आधार कहा गया है- कृपया, इसे विस्तार से समझाएं?

देखो, सूक्ष्म-स्थूल के संयोजन के अन्त: में; सभी चक्रों में अनाहत चक्र विशेष महत्वपूर्ण होता है, क्योंकि सूक्ष्म जगत में झांकने का द्वार यही है। इस चक्र के सक्रीय होते ही अंदर-बाहर के समस्त रास्ते खुल जाते हैं। रास्तों के खुलने का अर्थ है कि- यहां से हमारी यात्रा, या यूं कहो कि, सूक्ष्म-यात्रा एकदम स्पष्ट हो जाती है। और ब्रह्मांड का मुख्य बिंदु 'सकल-शिव' जहां पहुंच कर हम आगे की उड़ान आध्यात्मिक प्रक्रिया के अंतर्गत भर सकते हैं। जहां तक भिन्न-भिन्न योनियों की बात है, तो प्रेत-योनि विरोधी व दुष्ट व्यक्तियों की योनि है और देव योनि अच्छी शक्तियों की योनि है। अगर मान लो, हम अनाहत चक्र में न भी पहुंच पाए और जन्म-जन्मांतर या अन्य किसी प्रभाव से हमारी कुंडलिनी जाग्रत अवस्था में या विशेष हरकत में आ गई है तो भी हम अन्य योनियों में सूक्ष्म गति से आ-जा सकते हैं। वैसे, अनाहत चक्र पर पहुंचने के बाद तो हम सूक्ष्म जगत को पहचानने की गहन क्षमता प्राप्त कर ही लेते हैं।

सामान्यत: कोई भी साधक या साधना प्रक्रिया से जुड़ा हुआ व्यक्ति अपनी यात्रा मूलाधार से आरंभ करता है, लेकिन ब्रह्मांड में कुछ ऐसे विशेष साधक हुए हैं और आज भी हैं जो अपनी सूक्ष्म यात्रा अनाहत चक्र से ही आरंभ करते हैं। यद्यपि, यह कार्य आसान नहीं है। इस विरोधाभास से तमाम लोगो में यह जिज्ञासा जन्म ले सकती है कि, यह दो तरफा यात्रा कैसी? लेकिन, सच पूछो तो; इस संबंध में मेरी स्पष्ट अवधारणा यह है कि- जब हम लाभ-हानि या जीवन-मरण से परे हटकर केवल सूक्ष्म-स्थूल की बात करते हैं या उसके मध्य आध्यात्मिक दृष्टि से शोधरत होते हैं तो, एक निश्चित रास्ता अपनाने के लिए हम कदापि बाध्य नहीं हैं। वैसे भी; मूलाधार से व्यक्ति जब चलता है तो सामाजिक या भौतिक दृष्टि से, यहां तक कि धार्मिक दृष्टि से भी तमाम रास्तों के मध्य कुछ ऐसी अड़चने चाहे-अनचाहे आ जाती हैं जो साधक को दिग्भ्रमित कर देती हैं। उस भ्रमित स्थिति में; वह साधक जो उस प्रक्रिया से सीधे-सीधे जुड़ा है- गाहे-बेगाहे नुकसान भी उठा सकता है। सच पूछो तो, कुंडलिनी जाग्रत

जैसे, मान लो कि- किसी परिवार में पति या पत्नी ने एक-दूसरे के प्रभाव-कुप्रभाव से त्रस्त होकर आत्महत्या या आत्मदाह कर लिया। तो यह निश्चित मानो कि उस भुक्तभोगी का विकृत सूक्ष्म उस स्थिति में; तब तक अप्रसन्न रहेगा जब तक उसका पुनर्जन्म नहीं हो जाता है। पर उसका पुनर्जन्म होना भी आसान नहीं है। ऐसे में; वह सूक्ष्म निरंतर भिन्न-भिन्न आकार प्रकार लेकर तब तक उस व्यक्ति को प्रभावित करता रहेगा (जिसने आत्महत्या या आत्मदाह के लिए विवश किया) जब तक वह भी किसी अप्रिय घटना के तहत विनष्ट होकर उससे सूक्ष्म रूप में आकर जुड़ नहीं जायेगा। इसी क्रम में, ऐसे विकृत-सूक्ष्म अन्य विकृत सूक्ष्मों से जुड़-मिलकर एक मानव विरोधी शक्तियों का समूह तैयार कर लेते हैं जो घटनाओं-दुर्घटनाओं में निरंतर सहयोगी होते रहते हैं या कभी-कभी, बड़ी-बड़ी दुर्घटनाओं के घटित होने का मूल स्रोत बन जाते हैं।

वैसे; सामान्यतौर पर ब्रह्म राक्षस, सशक्त प्रेत, जिन्न, भ्रूण-हत्याओं से जुड़े विकृत सूक्ष्मों के समूह- घरों में आग लगाना, पत्थर बरसाना, शरीर पर के कपड़ो को विनष्ट कर देना आदि मानव विरोधी कार्यों को किसी भी घटनाक्रम के अंतर्गत करते-रहते हैं। इन सब दुष्ट-शक्तियों को मानव या जीव-जंतु विरोधी कुकृत्यों को करना अच्छा लगता है; या यूं कहो कि-इनकी यह एक प्रवृत्ति बन जाती है। कभी-कभी अविद्या-तंत्र के विक्षिप्त तथाकथित साधक भी दुष्ट-विरोधी शक्तियों के संग्रह-समूह द्वारा इस तरह की मानव विरोधी घटनाओं-दुर्घटनाओं को घटित कर या करा देते हैं। हां; इन सब कृत्य-कुकृत्यों के पीछे उनका कोई न कोई जन्म-जन्मांतर का स्वार्थ अवश्य जुड़ता-टूटता है।

❑ गुरूजी! क्या ऐसी घटनाओं-दुर्घटनाओं को रोका भी जा सकता है?

हां; आध्यात्मिक शक्तियों के बल पर इन दुर्घटनाओं को रोका भी जा सकता है? यद्यपि, यह कार्य आसान नहीं हैं। इसकी पूर्ति के लिए यज्ञ-महायज्ञ आदि की आवश्यकता तांत्रिक प्रक्रिया के अंतर्गत पड़ सकती है।

संक्षेप में; बस इतना समझ लो कि- प्रकृति में किसी भी विरोध-अवरोध का समाधान कठिन अवश्य हो सकता है, लेकिन असंभव नहीं।

अतिन्द्रिय दर्शन का मूल- अनाहत चक्र

नहीं भई; बस संक्षेप में इतना समझ लो कि-इन शक्तियों के नाम अलग-अलग हैं और साधना-पूजा-इबादत की प्रक्रिया में भिन्नता है। लेकिन इन तमाम सारी शक्तियों का स्तर या आकार-प्रकार एक सीमा तक मिलता-जुलता है।

देखो न; मानवता-इंसानियत, आपसी भाई-चारा, प्रेम-व्यवहार की बात तो हर धर्म-महजब के लोग करते रहते हैं, पर हां; करने-धरने का तौर-तरीका अलग-अलग हो सकता है। किसी निश्चित स्थान से घर तक पहुंचने के लिए रास्ते, चाहे जितने बना लो, लेकिन पहुंचना तो घर ही है न! ठीक इसी तरह आध्यात्मिक शक्तियों के साथ भी होता है। हां; भौतिक अज्ञानतावश, तुम धर्म-महजब के अंतर्गत एक-दूसरे के विपरीत कोई अमानवीय निर्णय ले डालो, यह अलग बात है।

अब जैसे-पीर-मजार या समाधि स्थल आदि को भी लोग भौतिक स्तर पर शक्ति का स्त्रोत मान लेते हैं। यह बात दूसरी है कि-ऐसे स्थलों पर लोगों की भौतिक मनोकामनाएं अधिकांशत: पूरी हो जाती हैं, पर इन्हें आध्यात्मिक शक्तियों के अंतर्गत रखना न्यायोचित नहीं है।

जैसे-बाबा कीनाराम के समाधिस्थल पर बाबा अवधूत राम ने शक्ति की स्थापना कर दी। उसे भी लोगों ने सामाजिक स्तर पर शक्ति स्थल मान लिया। पाण्डचेरी के अरविंद मठ पर अरविंद जी का समाधि स्थल है। वहां भी लोग जाते हैं, उनको शांति मिलती है तथाकथित कार्य सिद्धि भी होती रहती हैं। तो ऐसा नहीं है कि-ये सारी की सारी परंपराएं केवल मुस्लिम महजब में ही हैं। फिर, यदि हम इस तरह से अलगाववाद की परंपरा को जन्म देने लगेंगे तो पुनर्जन्म के सारे धर्म-सिद्धांत गड़बड़ा जायेंगे। पुनर्जन्म के सिद्धांत तो सभी पर एक निश्चित प्रक्रिया के अंतर्गत ही लागू होते हैं। इसमें जाति-मजहब का भेद नहीं है। प्राकृतिक-आध्यात्मिक तथ्य व प्रमाण किसी घटनाक्रम के अंतर्गत सभी पर समान रूप से लागू होते हैं चाहे वह हिंदू हो, चाहे वह मुस्लिम हो या चाहे वह ईसाई आदि हो।

उदाहरण के तौर पर तुम्हीं सोचो कि-कोई भी व्यक्ति चाहे किसी भी धर्म-महजब का हो, खायेगा तो मुंह से ही, देखेगा तो आंख से ही, सुनेगा तो कान से ही और चलेगा तो पैर के बल ही; सर के बल तो चलेगा नहीं। ठीक इसी तरह-धार्मिक-आध्यात्मिक मान्यताओं व प्रक्रियाओं के अंतर्गत पुनर्जन्म का सिद्धांत भिन्न-भिन्न सूक्ष्मों के साथ निरंतर कालचक्र के सापेक्ष में लागू होता

रहता है। देखो; धार्मिक विकृतियों के तहत, किसी तथ्य प्रमाण को मानने या न मानने से प्राकृतिक-आध्यात्मिक प्रक्रियाओं में कोई फर्क थोड़े ही न पड़ेगा।

मान लो; कोई गैर-हिंदू या सनातनी व्यक्ति मरा। उसके स्थूल को भौतिक या तथाकथित स्व: निर्मित धार्मिक आधार पर- चाहे मिट्टी में समर्पित कर दो, चाहे अग्नि में समर्पित कर दो या चाहे जल आदि में। अंतिम भौतिक समर्पण-तुम्हें पंचतत्व में ही करना होगा। उसके उपरांत- स्थूल शरीरों से अलग-थलग होकर सभी के सभी सूक्ष्म अपनी यात्राओं को पूरा करने में लगे रहेंगे और जन्म-जन्मांतर तक कर्म-धर्म व जीवन से जुड़े असंख्य बिंदुओं से संपर्क-संबंध स्थापित करते हुए स्थिति परिवर्तन- रूप परिवर्तन में स्वत: या दूसरों के द्वारा तब तक लगे रहेंगे जब तक सृष्टि का क्रम चलता रहेगा। जहां तक धर्म-मजहब या सम्प्रदाय की बात है; उससे हमारी-तुम्हारी प्राकृतिक-आध्यात्मिक प्रक्रियाएं सृष्टि के सापेक्ष में स्वत: जुड़ती-टूटती रहती हैं न कि भौतिक-धार्मिक मजहबी बंटवारे-विभाजन के अंतर्गत।

सबसे बड़ा व विभत्स कटु सत्य तो यह है कि-जितने भी धर्म-मजहब सम्प्रदाय बने या बंटे वे सबके सब सनातन धर्म के विरोध में आकर खड़े हो गये। अब तुम्हीं सोचो; क्या इससे प्राकृतिक-आध्यात्मिक मान्यताएं सृष्टि के सापेक्ष में जुड़-टूट जायेंगी। सूक्ष्म-स्थूल, सबका-सब प्रकृति-अध्यात्म के अंतर्गत स्वत: बनता-जुड़ता रहता है- वह भी कालचक्र के सापेक्ष में, न कि धर्म-मजहब या सम्प्रदाय के सापेक्ष-निरपेक्ष में।

❑ गुरूजी! कुछ घटनाएं-दुर्घटनाएं अक्सर सुनने में आती हैं, जैसे-घर में एकाएक आग लग जाना, पत्थरों का बरसना, ताले में बंद चीजों का गायब हो जाना, पहने हुए कपड़ों का एकाएक फट जाना-आदि-आदि। गुरूजी इन घटनाओं के पीछे मुख्य कारण क्या-क्या रहते हैं? कृपया, स्पष्ट करें।

देखो; किसी भी घटनाक्रम के अंतर्गत उपरोक्त सारी की सारी घटनाओं के घटित होने के पीछे विरोधी व दुष्ट शक्तियों का हाथ होता है। यह बात दूसरी है कि- मानव या जीव-जंतु विरोधी ये दुष्ट शक्तियां कितनी प्रबल सशक्त हैं जो बड़ी से बड़ी घटना-दुर्घटना परोक्ष-अपरोक्ष में स्वत: या दूसरों के माध्यम से घटित कर देती हैं। और इन घटनाओं-दुर्घटनाओं का स्त्रोत कैसे बनता-बिगड़ता है; इसे संक्षेप में यूं समझो-

❑ गुरूजी! आपके कहने का अर्थ यह हुआ कि-भूत-प्रेत-पिशाच और ब्रह्मराक्षस आदि भटकती हुई आत्माओं का स्त्रोत हैं। लेकिन गुरूजी; लोग इन्हें भी तो सिद्ध करते हैं?

हां; ये सबकी सब भटकती हुई आत्माएं हैं। सच पूछो तो, होता यह है कि-ये दुष्ट विरोधी भटकती हुई आत्माएं जब कभी किसी घेरे में आ फंसती हैं या किसी व्यक्ति से अनायास जुड़ जाती हैं तो वह तरह-तरह के इनसे काम लेता है। कभी-कभी तो इसी काम लेने के चक्कर में, काम लेने वाला भी अपने जीवन से हाथ धो बैठता है। इन सबका सहयोग अधिकांशत: मानव के लिए घातक सिद्ध होता है। क्योंकि जैसी प्रकृति इन दुष्ट-विकृत आत्माओं (सूक्ष्मों) की होगी, वैसे ही उससे काम लेने वाला भी ढल जायेगा। अंतत: उसकी भी मूल प्रकृति उन दुष्ट-विकृत आत्माओं जैसी हो जाती है। अन्तिम समय में, उन सबसे जुड़े लोगों की मृत्यु इतनी दु:खमय और हृदय विदारक हो जाती है कि-उसके मुंह से दुर्गन्ध, मवाद, गंदा खून आदि आने लगता है। और जगह-जगह से उसका शरीर सड़ने लगता है। अन्ततोगत्वा।, वह भी भूत-प्रेत योनि में जा फंसता है। हर दृष्टि से ये शक्तियां लोगों के लिए घातक ही सिद्ध होती हैं।

❑ गुरूजी! अभी पीछे आपने परी (ऐंजिल) का नाम लिया, तो क्या यह भी दुष्ट आत्मा है? मैंने तो सुना है कि-ये परियां बहुत सौम्य-सुंदर होती हैं?

हां; परियों में भी तरह-तरह के भेद-विभेद होते हैं। उनमें-अधिकांश-सशक्त, सुंदर व सामान्य लावण्य युक्त होती हैं। लेकिन इन्द्र-लोक की परी-अप्सराएं अलग होती हैं। मैंने यहां पर जिन परियों की बात की है-वे ईसाइयों के कब्रिस्तान से संबंधित हैं। इनका बाह्य आवरण सामान्यत: श्वेत होता है। ये भ्रमण पर भी रात्रि या मध्यरात्रि में निकलती हैं। कभी-कभी तो ये परियां राह चलते लोगों पर प्रभावी हो जाती हैं और तरह-तरह से उनको परेशान भी करती हैं। हां; कभी-कभी, उन्हीं प्रक्रियाओं के अंतर्गत उन प्रभावी लोगों का कुछ असंभव सा-दीखने वाला कार्य भी कर देती हैं। पर, अंतत: उनसे प्रभावित लोगों का अंत अच्छा नहीं होता।

❑ गुरूजी! ये परी, अप्सरा या यक्षिणी आदि आपके अनुसार अलग-अलग होती हैं। लेकिन सौंदर्ययुक्त तो ये तीनों हैं। आखिर फिर इनमें भेद-विभेद कहां पर होता है?

देखो; भौतिक रूप में-गुंडा, डाकू, पहलवान और अधिकारी; सब के सब शक्तिशाली होते हैं। पर, तीनों की शक्ति और उसका उपयोग अलग-अलग ढंग से होता है। ठीक इसी तरह परी, अप्सरा और यक्षिणियों की शक्तियों में भेद-विभेद होता है। परी-अप्सरा तो किसी न किसी पर प्रभावी हो सकती है। अपने स्वार्थ के अनुरूप ये दोनों या इससे संबंधित वर्ग अपनी-अपनी शक्तियों का प्रदर्शन करती रहती हैं। पर, यक्षिणी की शक्ति साधना-तपस्या द्वारा साधकों को प्राप्त होती है। यक्षिणियों द्वारा प्राप्त शक्ति का प्रयोग साधक उनके आदेशानुसार या आवाहन के द्वारा करता रहता है। जिस तरह सिद्ध पीठों में शक्तियां हैं- दुर्गा, काली, कल्याणी, ललिता, कामाख्या या वैष्णों देवी के रूप में; ठीक उसी तरह यक्षिणियों की भी शक्तियां हैं। यक्षिणियों की शक्ति की विशेषता यह है कि-ये तीव्र गति से चलती हैं। ये भी कई प्रकार की होती हैं। मुख्यत: चौबीस प्रकार की यक्षिणियों का जिक्र आता है। उनमें कुछ प्रमुख हैं जैसे-विचित्रा, सुलोचना, धूम्रा, मेखला, कालकर्णी, श्मशानी, चक्रपाली, घंटाकर्णी, विभ्रमा, विशाला, महामाया, चंद्रिका, मदना, वट-यक्षिणी, शोभना, लक्ष्मी, महेन्द्रिका, सुंदरी, शंखिनी आदि-आदि।

ये सब की सब यक्षों की आराध्य देवियां हैं। ये यक्षों की पत्नियां नहीं हैं जैसा कि कुछ लोग समझते हैं। ये सब की सब यक्ष जाति की देवियां हैं। साधना के अंतर्गत ये भिन्न-भिन्न रूपों में आती हैं। कोई बहन के रूप में, कोई मां के रूप में, कोई प्रेमिका के रूप में और कोई-कोई पत्नी के रूप में भी आती है।

मुस्लिमों में 'जिन्नाद' जो होते हैं-वे भी शक्ति के द्योतक होते हैं। क्योंकि-कोई मर कर जिन्नाद थोड़े ही ना बन पायेगा।

❑ गुरूजी! हिन्दू शक्तियां या मुस्लमानी शक्तियां, क्या अलग-अलग हैं? कृपया, इसे भी स्पष्ट करें।

भौतिक जीवन के अंतर्गत बहुत सारी इच्छाओं, वासनाओं या किसी अधूरेपन के कारण अतृप्त रहते हैं, मरने के बाद उनका सूक्ष्म उसी अतृप्तता की पूर्ति के लिए निरंतर वर्षों-वर्षों तक ब्रह्मांड के निचले सतह में भटकते-सरकते रहते हैं। इसी भटकाव में अपनी पूर्व इच्छाओं-वासनाओं की तृप्ति के लिए तरह-तरह के उपद्रव करते रहते हैं। ऐसी विकृत-दुष्ट आत्माएं किसी 'सूक्ष्म-स्थूल' युक्त भौतिक शरीर पर गाहे-बेगाहे प्रभावी होती रहती हैं। और अपने प्रभाव में लेकर उसके माध्यम से अपने पूर्व की अतृप्त इच्छाओं की पूर्ति करती रहती हैं।

जैसे, मान लो कि-एक व्यक्ति मृत्यु के उपरांत प्रेत-योनि में चला गया। उस व्यक्ति का सूक्ष्म, जब तक उसके स्थूल से जुड़ा हुआ था तब तक उसके अंदर कामी प्रवृति बहुत थी। और इसी अतृप्त अवस्था में ही उसकी मृत्यु हो गयी। निश्चित मानो कि-वह प्रेत-योनि में आकर कामवासना की तृप्ति के लिए ब्रह्मांड के निचले सतह पर इधर-उधर भटकता रहेगा। हां; इस बीच यदि वह किसी युवा व सुंदर स्त्री को अपने घेरे में पा जायेगा तो, उस पर प्रभावी हो जायेगा और उसका उपभोग किसी न किसी रूप में, तब तक करता रहेगा जब तक वह महिला स्वास्थ्य की दृष्टि से जीर्ण-शीर्ण न हो जायेगी। यहां तक कि कभी-कभी तो कुछ ऐसे प्रबल विकृत 'सूक्ष्म' ब्रह्म राक्षस या जिन्न के रूप में महिलाओं को अपने घेरे में ले लेते हैं और उनसे पतिवत व्यवहार क्रूरता के साथ करने लगते हैं। इस संबंध में मैं तुम्हें एक पूर्व की घटना बताता हूं-

दस-ग्यारह वर्ष पूर्व ब्रह्म राक्षस के प्रभाव से युक्त एक महिला मेरे पास आयी। बलिया की रहने वाली उस महिला को; ब्रह्म राक्षस पति के रूप में आकर अक्सर उसे रात्रि में परेशाान किया करता था। एक रात-जब वह ब्रह्म राक्षस उसके पास से लौट कर चला गया तो थोड़ी देर बाद उसका पति आया। उसने पति से कहा- अभी तो आप थोड़ी देर पहले परेशान कर चुके हैं, अब फिर परेशान करने चले आये। इतना सुनते ही उसके पति को यह शक होते देर न लगी कि, मेरी पत्नी चरित्रहीन है। वह धीर-धीरे उससे कटने लगा। कुछ दिन बाद जब वस्तुस्थिति का लोगों को ज्ञान हुआ, यानी उस महिला की बातों पर विश्वास हुआ तब उसका वहीं के स्थानीय तांत्रिक द्वारा उपचार शुरू हुआ। तांत्रिक प्रक्रिया के अंतर्गत एक दिन वह ब्रह्म राक्षस उस तांत्रिक पर प्रभावी हो गया। वह महिला को देख कर घर लौटा और छत पर बारजे के सहारे खड़ा

ही हुआ था कि पूरा बारजा टूट कर नीचे आ गया और उस तांत्रिक के हाथ-पैर टूट गये। उसके उपरान्त उसने उस महिला की समस्या को देखना बंद कर दिया। उस दुर्घटना के बाद जब वह समस्यायुक्त महिला मेरे पास आई, तो मैंने करीब डेढ़ माह में प्रबल तांत्रिक प्रक्रियाओं के अंतर्गत उस महिला को उस तथाकथित ब्रह्म राक्षस से मुक्त कराया। उसके बाद वह महिला अपने पति के साथ सामान्य जीवन जीने लगी। तो, अपने शोधकार्य के अंतर्गत इस तरह की तमाम समस्यायुक्त महिलाओं व पुरूषों की समस्या मेरे सामने आयी और यथासंभव मैंने उनकी समस्याओं का तांत्रिक प्रक्रियाओं के अंतर्गत समाधान किया।

कभी-कभी तो, इन दुष्ट व विकृत आत्माओं के प्रभाव से लोगों का जीवन ही नष्ट हो जाता है।

❑ गुरूजी! क्या कोई सामान्य मानव ही मर कर ब्रह्म राक्षस बनता है या कि यह अलग से कोई शक्ति है?

हां भई; मृत्यु के उपरांत ही तो व्यक्ति का 'सूक्ष्म' प्रेत-योनि या दुष्ट प्रकृति से जुड़ेगा। ऐसे विकृत व दुष्ट प्रवृत्ति के सूक्ष्मों से धीरे-धीरे ब्रह्मांड के निचले सतह के क्षेत्र का तथाकथित क्षेत्र विरोधी शक्तियों का क्षेत्र बन जाता है जो गाहे-बेगाहे लोगों को तरह-तरह से प्रभावित करता रहता है। पर, इतना अवश्य है कि, सामान्य या धर्म-कर्म से जुड़ा व्यक्ति मृत्यु के उपरांत जल्दी प्रेत-योनि से नहीं जुड़ता। हां; कभी-कभार कोई निर्दोष सूक्ष्म प्रेत-योनि या विरोधी शक्ति के घेरे में आ फंसता है-यह अलग बात है। लेकिन सामान्यत: ऐसा कम होता है।

❑ गुरूजी! मैं जानना यह चाह रहा था कि-जैसे यक्षिणियों का एक वर्ग है, क्या उसी तरह से ब्रह्म राक्षसों की भी अलग से कोई सत्ता है?

नहीं भई, दोनों में बहुत अंतर है। यक्षिणियों की शक्ति का अनुभव या उनकी सिद्धि साधना द्वारा प्राप्त होती है। जबकि ब्रह्म राक्षसों की शक्ति सामान्यत: न चाहते हुए भी लोगों को परेशान करने के लिए स्वत: प्रभावी हो जाती है। फिर, यक्षिणियां-प्रेत या ब्रह्म राक्षसों की तरह कोई भटकती हुई आत्मा थोड़े ही न होती हैं। वह तो शक्ति का एक पुंज है जो साधना-तपस्या द्वारा ही प्राप्त होता है।

[मृत्यु की निश्चितता-अनिश्चितता के मध्य कालचक्र के सापेक्ष में जीव की गति का चक्रीय विधान क्या होगा? इस विवादास्पद प्रकरण के अन्तर्गत - 'प्रेत, ब्रह्मराक्षस व अन्य शक्तियां-विषय से सम्बन्धित प्रश्नों के समाधान हेतु श्मशान साधक 'अज्ञान ' जी से दिनांक: 14 जुलाई 1992 (पूर्वान्ह) को लिए गये लम्बे साक्षात्कार का प्रमुख अंश प्रस्तुत है -]

❑ **गुरूजी! मृत्यु के बाद कुछ आत्माएं भटकती हैं और भटकती हुई इन आत्माओं को 'प्रेत' की संज्ञा दी जाती है। गुरूजी, यह प्रेत क्या है? ऐसी शक्तियों को प्राय: नुकसान करते सुना जाता है। कृपया, इसे विस्तारपूर्वक समझाएं?**

हां; जब तक किसी मृत व्यक्ति के सूक्ष्म (आत्मा) का पुनर्जन्म नहीं हो जाता, तब तक वह ब्रह्मांड में भिन्न-भिन्न योनियों में घूमता-भटकता रहता है। सामान्यत: मानव के भौतिक जीवन के कर्म-धर्म मृत्योपरांत सूक्ष्म की यात्रा में सहयोगी होते हैं। पर, कभी-कभी कुछ तथाकथित सूक्ष्म (आत्मा) अन्य विरोधी शक्तियों के सानिध्य में आकर स्वयं विरोधी शक्ति के रूप में व्यवहार करने लगते हैं। जिन्हें भौतिक भाषा में, तुम भूत-प्रेत कह सकते हो। वैसे, भूत-प्रेत, जिन्न आदि का वास्तविक स्त्रोत मानव के भौतिक जीवन के विकृतियों का संयोजन भी होता है। इसी के अंतर्गत-हत्या, आत्महत्या, अकालमृत्यु या असामयिक मृत्यु से युक्त सूक्ष्म- भूत-प्रेत, ब्रह्मराक्षस, जिन्न, एंजिल्स (परियां) आदि की योनियों में चले जाते हैं। चूंकि; ऐसे लोगों का भौतिक जीवन तमाम विकृतियों व घृणित कार्यों से जुड़ा-धुला होता है, इसलिए मृत्यु या असामयिक मृत्यु के उपरान्त उनका सूक्ष्म जल्दी पुनर्जन्म की स्थिति में नहीं आ पाता है। हां; इसी बीच यदि वह सूक्ष्म (आत्मा) विरोधी शक्तियों के रूप में ब्रह्मांड के निचले सतह पर रम-बस गया, तो सैंकड़ों-हजारों वर्ष तक स्वयं तो भटकता ही रहता है, साथ में भौतिक प्राणियों को भी भूत-प्रेत, ब्रह्मराक्षस या जिन्न आदि के रूप में परेशान करता रहता है।

देखो, सच पूछो तो- आत्मा(सूक्ष्म) का जो स्वभाव है वह एक स्थिति तक गलत या मानव विरोधी नहीं होता है यानी वह सूक्ष्म आरंभिक स्थितियों में निश्छल निष्कपट होता है। सामान्यत: जब वह दुष्ट या विकृत आत्माओं (सूक्ष्मों) के चक्कर में फंस-रम जाता है तो उस पर दुष्टता या तमाम विकृतियों की परतें चढ़ती जाती हैं और एक विषम स्थिति में आकर वह भूत-प्रेत, ब्रह्मराक्षस या जिन्न आदि का रूप धारण कर लेता है। नये विकृत रूप में आकर वह सूक्ष्म-स्वत: दुष्टता या क्रूरता का व्यवहार करने लगता है। इससे उसका मूल स्वभाव पीछे छूट जाता है। इसी क्रम में, बहुत से ऐसे व्यक्ति जो अपने

'प्लेन चिट' वैज्ञानिक प्रक्रिया नहीं है। क्योंकि इसमें बहुत सारी कमियां हैं। सबसे बड़ी कमी यही है कि जब किसी आत्मा को बुला लेते हैं, तो उसे वापस भेजने में बड़ी दिक्कत आती है। इसे संक्षेप में यूं समझो कि- मान लो, किसी पुरुष साधक ने एक मृत आत्मा को बुला लिया और आने वाली आत्मा एक महिला की है। वह उसे वापस लौटा पाने में सक्षम नहीं हो पाया। ऐसे में, वह मृत महिला की आत्मा उसे अपनी कुप्रवृतियों से जोड़ लेगी और तब तक नहीं छोड़ेगी जब तक वह हर तरह से तृप्त-संतृप्त न हो जायेगी। हो सकता है, इस कुप्रक्रिया में उस साधक का जीवन ही अंधकारमय हो जाये। मैं पुनः कहता हूं- 'प्लेन चिट' कोई अच्छी चीज नहीं है। यह तो बच्चों का एक झुनझुना है, खिलौना है।

❑ गुरूजी! क्या ऐसा भी होता है कि- पुनर्जन्म की प्रक्रिया में एक बार मानव रूप में आने के बाद आत्मा (सूक्ष्म) पुनःजीव-जंतु की योनि में चली जाए ?

हां; होता तो अवश्य है लेकिन बहुत कम। जैसे कि-वर्षों पहले एक व्यक्ति की समस्या पर मैं आध्यात्मिक दृष्टि से कार्यरत था। बार-बार उसकी समस्या को सुलझाने का प्रयास कर रहा था लेकिन कोई न कोई व्यवधान ऐसा आ जाता था कि जिससे उसकी समस्या पूरी तरह से हल नहीं हो पाती थी। अंत में, मुझे उसके पूर्व जन्मों में जाना पड़ा। उसी क्रम में, मैंने उसके तीन जन्म के पूर्व उसे सर्प के रूप में पाया। यानी वह सर्प योनि में था। बस यहीं से उसकी समस्या का समाधान भी निकल आया। इस विगत घटनाक्रम से, तुम संक्षेप में बस इतना समझ लो कि- इस तरह की घटनाएं होती अवश्य हैं लेकिन बहुत कम। इसलिए योनि परिवर्तन जन्म-जन्मांतर की प्रक्रिया में सम्भव है; असम्भव नहीं।

प्रेत-ब्रह्मराक्षस व अन्य शक्तियां

था। फिर भी, विरोधी शक्तियों के घेरे में उसका सूक्ष्म अकारण ही जा फंसा। अब यहां उसके कर्म-धर्म तो बेकार हो गये। क्योंकि उसका सूक्ष्म ब्रह्म राक्षस के घेरे में आ गया। वही ब्रह्मराक्षस उसके विरोध का कारण बन गया। यद्यपि, ऐसा होता बहुत कम है।

यहां पर मेरे कहने का तात्पर्य यह है कि- मानव की समस्याओं का मूल कारण व आधार पूरा का पूरा पूर्वजन्मों पर ही आधारित हो; यह आवश्यक नहीं है। लेकिन, व्यक्ति की समस्याओं का अधिकांश कारण पूर्वजन्मों से अछूता भी नहीं रहता।

❑ गुरूजी! मृत्यु के बाद किसी व्यक्ति विशेष का क्या हुआ ? उसका पुनः जन्म हुआ की नहीं; हुआ भी तो कहां किस रूप में हुआ; क्या यह सब जाना-समझा जा सकता है? कृपया, इसे बतलाएं।

हां भई; सब कुछ जाना-समझा जा सकता है। किसी व्यक्ति के पुनर्जन्म व उसके बाद की स्थितियों का पता लगाया जा सकता है। उसने नया जन्म ग्रहण किया या नहीं, वह जन्म ले चुका है तो कहां है, किस हाल में है- सब पता किया जा सकता है। इसको आध्यात्मिक शक्तियों के माध्यम से जाना-समझा जा सकता है। लेकिन फिर भी यह सब सरल-आसान नहीं है। इस सब को जानने-समझने की प्रक्रियाओं में बहुत सारी दिक्कतें भी हैं। जैसे, मान लो कि- हम सब ऐसे व्यक्ति के बारे में जानना-समझना चाहते हैं, जिसकी मृत्यु कई वर्षों पहले हो चुकी है। हो सकता है-इस बीच वह पुनर्जन्म भी ले चुका हो। हम ज्यों ही आध्यात्मिक शक्तियों द्वारा उसके सूक्ष्म (आत्मा) से सम्बन्ध स्थापित करने का प्रयास करेंगे, त्यों ही वह (सूक्ष्म-स्थूल के संयोजन के रूप में यानी बच्चे के रूप में जहां भी होगा) मूर्च्छित हो जायेगा। और जानने-समझने की उस प्रक्रिया तक वह मूर्च्छावस्था में पड़ा रहेगा। इस बीच मान लो- किसी ने उसके स्थूल को वहां से हटा दिया तो उसका सूक्ष्म कहां जायेगा। ऐसे में उसकी मृत्यु तक हो सकती है। तो समझ गये न; इस जानने-समझने की प्रक्रिया में कितना खतरा रहता है। यही नहीं; बल्कि उसका सूक्ष्म जानने वाले व्यक्ति को भी तब तक प्रभावित करता रहेगा जब तक वह येन केन प्रकारेण उसका पुनर्जन्म नहीं करा देता है। हां; अगर वह साधक उस सूक्ष्म को पुनर्जन्म कराने

में सक्षम नहीं हो पाया तो उसके (सूक्ष्म) द्वारा किसी घटनाक्रम के अन्तर्गत उसका (साधक) भी प्राणांत हो सकता है। इसीलिए जब किसी के बारे में जानने-समझने की विशेष आवश्यकता होती है तो इस आध्यात्मिक प्रक्रिया को रात्रि में या मध्य रात्रि में किया जाता है। जिससे उसके स्थूल को कोई खतरा न होने पाये।

❑ गुरूजी! इस विवादास्पद विषय को एक-आध उदाहरण के साथ समझाने की कृपा करें?

देखो; मैंने अपने आध्यात्मिक शोध के अंतर्गत बहुत से सूक्ष्मों व व्यक्तियों के पूर्वजन्मों में झांका है। इनमें से दो-एक जगह मुझे भी उलझना पड़ा। वर्षों पहले की एक घटना है-

टोकियो की एक युवा महिला थी। वर्षों पहले एक घटनाक्रम में उसकी अकाल मृत्यु हो गयी। ब्रह्मांड में उसका सूक्ष्म इधर-उधर घूम रहा था। आध्यात्मिक अध्ययन के अन्तर्गत अनायास वह मुझसे टकरा गयी यानी उसका सूक्ष्म मेरे अध्ययन के घेरे में आ गया और थोड़ी गहराई में जाने पर उसने अपनी पूर्व कथा सांकेतिक भाषा में बता डाली। यद्यपि वह हिन्दी, अंग्रेजी नहीं जानती थी; इसलिए मुझे अन्य आध्यात्मिक माध्यमों से उसकी पूर्वकथा को जानना-समझना पड़ा। उसने सांकेतिक भाषा में जो कुछ भी बताया उसका सारांश यह था कि- 'वह एक अच्छे सम्पन्न परिवार में जन्मी और संस्कारित ढंग से बड़ी हुई। अनायास एक घटनाक्रम के अंतर्गत उसका प्रेम एक ऐसे व्यक्ति से हो गया जो उसे मात्र उपभोग की वस्तु समझने लगा। उसी असफलता के अंतर्गत उसने आत्महत्या कर ली। उसकी पूर्वकथा जानने-समझने के उपरान्त जब मैंने उसे वापस भेजना चाहा तो वह वापस जाने को तैयार नहीं हुई। अन्ततः पुनर्जन्म कराने का आश्वासन देकर किसी तरह उसे वापस भेजा। तो मेरे कहने का तात्पर्य यह है कि तमाम तरह के खतरे ऐसे कार्यों में निरंतर बने रहते हैं।

निःसंदेह हम मरे हुए व्यक्तियों के सूक्ष्मों से सम्पर्क कर सकते हैं लेकिन इन सब कार्यों के लिए विशेष सावधानी रखनी होगी।

❑ गुरुजी! 'प्लेन-चिट' के माध्यम से भी तो किसी मृत आत्मा से संपर्क किया जा सकता है? कृपया, इस संबंध में भी कुछ कहें ?

[मृत्यु की निश्चितता-अनिश्चितता के मध्य कालचक्र के सापेक्ष में जीव की गति का चक्रीय विधान क्या होगा? इस विवादास्पद प्रकरण के अन्तर्गत - 'पुनर्जन्म और मृत - आत्माओं की खोज -' विषय से सम्बन्धित प्रश्नों के समाधान हेतु श्मशान साधक 'अज्ञान' जी से दिनांक : 13 जुलाई 1992 (पूर्वाह्न) को लिए गये लम्बे साक्षात्कार का प्रमुख अंश प्रस्तुत है -]

❑ गुरूजी! आपकी समस्त बातों पर गौर करने से यह लगता है कि-मानव या जीव-जंतु के समस्त समस्याओं का कारण उसके पूर्वजन्मों में ही निहित या समाहित है। क्या यह अवधारणा पूर्णतः सही है? कृपया, इस संबंध में कुछ कहें।

देखो; मानव के अधिकांश समस्याओं का मूल कारण उसके पूर्वजन्मों से किसी न किसी रूप में जुड़ा होता है। वैसे यह पूर्णतः आवश्यक नहीं है कि, व्यक्ति के हर समस्याओं का स्रोत पूर्वजन्मों से जुड़ा हो। जैसे मान लो कि- एक ऐसा आदमी है, जिसके पूर्वजन्मों के कर्म न तो बहुत अच्छे थे और न ही बहुत खराब। ऐसी स्थिति में, उसका वर्तमान जन्म तो सामान्य होना चाहिए। लेकिन वही व्यक्ति, (चूंकि जीवन तमाम सजीव-निर्जीव बिंदुओं से होकर गुजरता है) अनेक घटनाक्रमों के अंतर्गत असामान्य सा दीखने लगता है। इसी क्रम में, एक बच्चा पैदा हुआ। उसका पूर्वजन्म एकदम सामान्य रहा। लेकिन वर्तमान जन्म में; अधार्मिक वातावरण में पलने-पुषने के कारण उसका संस्कार इतना अदल-बदल गया कि, वह अनैतिक कार्यों में रुचि लेने लगा। उसी क्रम में, उसने एक दिन यह भी देखा कि- 'उसके शराबी-एय्याशी पिता को पुलिस पकड़ ले गयी। तो ऐसी परिस्थिति में उसके पतन का जो कुछ भी कारण बना वह पूर्वजन्मों से विशेष संबंधित नहीं रहा न! इसे, तुम यूं समझो कि- शक्ति व सामर्थ्य का सांमजस्य एक गुण्डे व्यक्ति में विद्यमान हो सकता है, पहलवान में भी और एक सक्षम अधिकारी में भी। लेकिन तीनों अपनी-अपनी शक्ति व सामर्थ्य का प्रदर्शन भिन्न-भिन्न ढंग-तरीके से करेंगे। गुण्डे की प्रकृति विध्वंसात्मक होगी, पहलवान की चुनौतीपूर्ण और अधिकारी की रचनात्मक व समाजोपयोगी। तो सोचो, इन तीनों तरह के शक्तियुक्त व्यक्तियों के यहां जो भी बच्चा पैदा होगा, उसका जीवन क्रम किसी न किसी रूप में प्रभावित होगा कि नहीं। हां; किसी न किसी रूप में अवश्य प्रभावित होगा। ऐसी परिस्थिति में उन सबके पूर्वजन्मों का प्रतिफल उन्हें पूरा नहीं मिल पायेगा। इसी क्रम में, एक अन्य उदाहरण देखो-

किसी एक व्यक्ति की किसी विशेष घटनाक्रम के अंतर्गत मृत्यु हो गयी। मृत्यु के उपरान्त उसका सूक्ष्म अपनी प्रथम यात्रा में तेरह सौ योजन की दूरी भी नहीं तय कर पाया कि, रास्ते में विरोधी शक्तियों ने उसे घेर लिया और उसे बंधक बना लिया। जबकि वह नियमित रूप से पूजा-पाठ करने वाला व्यक्ति

उसी क्रम में, उन तीनों को लेकर एक अन्य संभावना भी व्यक्त की जा सकती है। हो सकता है उस बच्ची का सूक्ष्म गर्भधारिणी के गर्भ में आने के उपरान्त स्थूल से जुड़कर वह सशक्त सांमजस्य न बना पाया हो जो उस प्रक्रिया के अंतर्गत बनना चाहिए था। इसके पीछे उसके तथाकथित माता-पिता के अन्य विरोधों का भी सूक्ष्मीय सहयोग-असहयोग हो सकता है। जैसे मान लो कि- कोई अविद्या तंत्र का साधक, जिससे उसके माता-पिता का कोई न कोई विरोध रहा हो और उसी के अंतर्गत उसने गर्भधारिणी के गर्भ को गर्भपात के माध्यम से नष्ट कर दिया। दो-तीन बार गर्भपात कराने के उपरांत जब उस अविद्या तंत्र के साधक का प्रभाव, प्रभावहीन हो गया होगा, तब कहीं जाकर उस बच्ची ने जन्म लिया- यह भी संभव हो सकता है। वैसे, इस तरह के घृणित कर्म करने वाले साधक को निश्चित पातकी कहा जा सकता है। तो इस विगत घटनाक्रम में तरह-तरह के भौतिक-आध्यात्मिक अवरोध-सहयोग हो सकते हैं; जिसके अंतर्गत दो-तीन बार गर्भपात के उपरान्त गर्भधारिणी ने उस बच्ची को जन्म दिया।

❑ **गुरूजी! गर्भपात स्वत: हो या किसी के माध्यम से हो या किसी अन्य कारण से हो, आपकी दृष्टि में उसका पुनर्जन्म कठिन होगा। गर्भपात एक जघन्य कुकृत्य है। इससे प्रभावित सूक्ष्मों के हित में भौतिक आधार पर क्या कोई धार्मिक कृत्य भी किया जा सकता है, जिससे सूक्ष्म का कुछ न कुछ लौकिक-पारलौकिक कल्याण हो?**

हां; किया जा सकता है। गर्भपात स्वत: हो या किसी अन्य कारण से हो, दोनों स्थितियों में कर्म काण्डीय परंपरा के अतंर्गत त्रयोदशा: या चालीसवां आदि की विधिवत व्यवस्था होनी चाहिए। पर, यह सब धार्मिक कृत्य तीन माह के उपरांत के गर्भपात के लिए ही संभव व हितकर हो सकता है। उसके पूर्व के गर्भपात के लिए इन धार्मिक कर्म-काण्डीय कृत्यों की कोई आवश्यकता नहीं है, क्योंकि उससे उस सूक्ष्म पर कोई विशेष प्रभाव नहीं पड़ता।

पुनर्जन्म और मृतआत्माओं की खोज

से आपसी विरोध के कारण व इसी तरह के अन्य भौतिक-आध्यात्मिक कारणों से गर्भपात की स्थिति बनती है। अत: एक जीव अपने सूक्ष्म रूप में, जब सूक्ष्मीय यात्रा में चलता है तो उसे हजारों-हजारों बिंदुओं से गुजरना पड़ता है। इनमें कुछ ऐसे भी सजीव-निर्जीव बिंदु होते हैं जो उस सूक्ष्म को (जो अपनी यात्रा पर निकला है) अनायास प्रभावित करने लगते हैं। कभी-कभी एक दूसरे के प्रभाव में आकर वह एक ऐसा समूह बना लेते हैं जो निरंतर मानवीय संरचना के लिए किसी न किसी रूप में घातक सिद्ध होता है। ऐसे समूह सामान्यत: गर्भपात की स्थिति उत्पन्न करने में निरंतर प्रयत्नशील रहते हैं। हां; कभी-कभी भ्रूण में सूक्ष्म-स्थूल का सांमजस्य प्रबल हो जाता है तो गर्भपात की स्थिति नहीं बन पाती। अब कोई गर्भधारिणी सात-आठ मांह के बच्चे का तो गर्भपात जल्दी नहीं करवायेगी न! संक्षेप में, तुम इतना समझ लो कि- एक बार गर्भपात कराने या होने में गर्भधारिणी का लगभग 25,000 से लेकर 1,25,000 तंतु नष्ट हो जाते हैं। हां; इन तंतुओं को पुन: स्थापित करने या जीवित करने में जिन तांत्रिक प्रक्रियाओं का उपयोग होगा, उसमें लगभग करोड़-सवा करोड़ रुपये व्यय होंगे।

❑ किन्तु गुरूजी! कई बार ऐसा भी होता है कि गर्भ स्वत: ही सातवें-आठवें माह में नष्ट हो जाता है। तो क्या, ऐसी आत्माओं (सूक्ष्मों) का भी पुनर्जन्म कठिन होगा?

देखो; गर्भपात चाहे स्वत: हो या किसी चिकित्सक या अन्य माध्यम से करवाया जाए, पर भ्रूण के सूक्ष्म-स्थूल का विखंडन तो होगा ही। ऐसे घटनाक्रम में गर्भपात का कारण और उससे संबंधित दोषी की विवेचना तो की जा सकती है लेकिन गर्भपात के अंतर्गत सूक्ष्म तो प्रभावित होगा ही। और उसकी दुर्गति भी निश्चित होगी। दरअसल, स्वत: गर्भपात होता क्यों है; इसको समझो-

मान लो, किसी व्यक्ति की किसी घटनाक्रम में अकाल मृत्यु हो गयी। उसके सूक्ष्म ने असंख्य योनियों में भटकते-बहकते किसी तरह पुनर्जन्म के लिए अपनी यात्रा पूरी की, और उसी क्रम में किसी गर्भधारिणी के गर्भ में प्रवेश कर गया। लेकिन वह सूक्ष्म स्वत: इतना परिपक्व -सशक्त नहीं हो पाया था कि, नौ-दस माह तक गर्भ में रहने के बाद जन्म लेता। इसके साथ-साथ वह गर्भधारिणी भी उस स्थिति में नहीं आ पायी थी जिससे वह सूक्ष्म जीव रूप में

भी हो सकता है कि, वह सूक्ष्म (आत्मा) दो-तीन-बार स्वत: गर्भपात की स्थिति से गुजरने के उपरान्त बच्चे के रूप में जन्म ले ले और मानव रूप में जीवन जीने का उपक्रम करे। यह पूरी प्रक्रिया यदि छ: सात माह में उस सूक्ष्म के साथ पूरी नहीं हो पाती है तो उसको पुन: जन्म लेंने में लम्बा समय लग सकता है। हां; इस क्रम में; अन्य लोग सहयोगी बन सकते हैं; जैसे- माता-पिता, साधक या चिकित्सक आदि।

संक्षेप में, इस विवादास्पद तथ्य को ऐसे भी समझ सकते हो कि- वह सूक्ष्म जिसका भ्रूण के रूप में स्वत: गर्भपात हुआ है, उसका कोई न कोई अंश-बिंदु पूर्वजन्मों के धर्म-कर्म से अवश्य जुड़ा रहा है। विगत सारी प्रक्रियाओं के अंतर्गत वह सूक्ष्म इतना प्रबल नहीं हो पाया, जिससे वह गर्भधारिणी के गर्भ में नौ-दस माह तक बच्चे के रूप में जन्म लेता। हो सकता है; इस अधूरे क्रम को पूरा करने में गर्भधारिणी व उसके पति का धर्म-कर्म उचित सहयोग न दे पाया हो। परं, अंतत: प्रभावित तो वह सूक्ष्म होगा जो स्वत: गर्भपात की प्रक्रिया के अंतर्गत गर्भ में ही स्थूल से अलग-थलग हो गया। ऐसे में; ऐसे सूक्ष्म का पुनर्जन्म सामान्य सूक्ष्मों की अपेक्षा कठिन तो होगा ही।

❑ गुरूजी! मैं एक दंपति को जानता हूं। सोलन (हि.प्र.) की उस महिला को हर सातवें माह गर्भपात स्वत: ही हो जाता था। और यह गर्भपात का क्रम विवाह के उपरान्त लगभग पांच वर्षों तक चलता रहा। तब कहीं उसके बाद उस महिला ने एक कन्या को जन्म दिया। तो गुरूजी, उस महिला के साथ किस विशेष कारण से ऐसा होता रहा-कृपया, समझाएं?

इस घटना के पीछे पूर्व जन्मों के कर्मों का प्रतिफल जुड़ा हुआ है। इसके साथ-साथ यह भी हो सकता है कि, पूर्व जन्मों में वह बच्ची और उसके माता-पिता आपसी विरोधी रहे हों। और तीनों एक-दूसरे से जुड़कर, एक-दूसरे को तब तक प्रभावित करते रहे जब तक उन तीनों के आपसी विरोध का प्रतिफल घटते-घटते शून्य तक नहीं पहुंच गया। विरोध का प्रतिफल शून्य तक पहुंचते ही उस बच्ची के सूक्ष्म ने गर्भधारिणी के गर्भ से जीव रूप में जन्म लिया। हां; यदि उस बच्ची व उसके माता-पिता के बीच के विरोध का कुछ अंश अवशेष होगा, तो वह बच्ची किसी घटनाक्रम से प्रभावित होकर उन्हें पुन: कष्ट-दुख पहुंचा सकती है।

सारे मानव, जीव-जन्तु किसी न किसी घटनाक्रम के माध्यम से किसी न किसी रूप में प्रभावित होते रहेंगे। इसके साथ ही साथ आपसी द्वेष, संघर्ष, युद्ध, बहुआयामी भ्रष्टाचार आदि की वृद्धि निरंतर होती रहेगी।

❑ गुरूजी! आपने अभी कहा कि- जिस जीव की भ्रूणहत्या हो जाती है, उसका पुनर्जन्म बड़ा कठिन हो जाता है। कृपया, इसे थोड़ा और स्पष्ट करें?

देखो, ऐसा है कि- जीव गर्भ में; तीन माह के उपरान्त पूर्णत: स्थापित हो जाता है। यानी 'सूक्ष्म-स्थूल' का संयोजन निर्मित हो जाता है। गर्भ में स्थित वह सजीव भ्रूण के रूप में आकार लेने लगता है। पंचतत्त्व से निर्मित वह सजीव भ्रूण गर्भ में अशुद्ध अवस्था में तब तक रहता है, जब तक वह विकसित होकर शिशु के रूप में प्रसव पीड़ा के उपरान्त गर्भ से बाहर नहीं आ जाता है। यहां तक कि, वह नवजात शिशु भी मां के साथ धार्मिक व सनातनी पद्धति के आधार पर सवा माह तक अशुद्ध माना जाता है। ऐसी स्थिति में, यदि उस सजीव भ्रूण की (जो नौ-दस माह बाद गर्भ से बाहर नवजात शिशु के रूप में आने वाला है) गर्भपात द्वारा हत्या कर दी जाती है या उसको नष्ट कर दिया जाता है तो उस गर्भ के साथ-साथ उसके सूक्ष्म-स्थूल का विखंडन भी अशुद्धावस्था में रह जायेगा। तुम्हीं सोचो कि-गर्भपात द्वारा मुक्त वह सूक्ष्म अशुद्धावस्था में तेरह सौ योजन की यात्रा करके पुनर्जन्म के लिए असंख्य योनियों में भ्रमण कैसे करेगा? फिर, मानव योनि में पुन: आने के लिए उस तथाकथित सूक्ष्म को 1,84,000 योनियों से लेकर 4,00, 000 योनियों तक की यात्रा तो करनी ही होगी। ऐसी विषम स्थिति में, वह सूक्ष्म जब पुनर्जन्म की यात्रा करने में असमर्थ होगा तो निश्चित ही इधर-उधर भटकेगा। यह भटकाव कितना लम्बा होगा, यह नहीं कहा जा सकता। इस अनियमित भटकाव के अंतर्गत वह सूक्ष्म निरंतर विकृत होने के साथ-साथ मानव विरोधी शक्तियों से क्रमिक रूप में जुड़ता चला जायेगा। अपने आयु का 17-18 वर्ष भटकाव की स्थिति में पूरा कर लेने के बाद वह सूक्ष्म ब्रह्मराक्षस या मानव विरोधी जिन्न से कम प्रभावशाली नहीं होगा। बल्कि उस स्थिति में अपने-आकार-प्रकार में परिवर्तन भी वह अपनी इच्छानुसार कर सकता है।

ऐसी स्थिति में; वह विकृत व शक्तिशाली सूक्ष्म जिसे भी कमजोर पायेगा; उसे किसी न किसी रूप में प्रभावित कर देगा। सामान्यत: ऐसे विकृत सूक्ष्म,

गर्भपात करने व करवाने वाले को निरंतर किसी न किसी रूप में प्रभावित करते रहते हैं। उसके अन्दर-बाहर प्रतिशोध की भावना कूट-कूट कर भर जाती है। युवावस्था में, इसके विकृत शक्ति का कुप्रभाव किसी न किसी रूप में ब्रह्मांड के इधर-उधर; चलते-भटकते वह ब्रह्मराक्षस के 17-18 आयामों में कहीं न कहीं विकृत रूप में जुड़ जाता है और सैंकड़ों-हजारों वर्ष तक इधर-उधर भटकता रहता है। हां; इन विकृत शक्तियों से किसी को मुक्ति दिलाना आसान नहीं होता है। क्योंकि, यज्ञ- अनुष्ठान आदि का भी प्रभाव इन विकृत शक्तियों के ऊपर न के बराबर पड़ता है। जहां तक तांत्रिक प्रयासों का प्रश्न है तो वहां पर कभी-कभी धर्म-अधर्म की मान्यताएं आकर टकरा जाती हैं। फिर बिना शुद्धिकरण के बहुत से धार्मिक प्रयास सफल भी नहीं हो पाते हैं।

यही सब मुख्य कारण हैं जिनके कारण भ्रूणहत्या से संबंधित सूक्ष्म का पुनर्जन्म नहीं हो पाता है। इसलिए भ्रूणहत्या करने-करवाने वाले से संबंधित व्यक्ति को यदि पातक-महापातक कहा जाये तो कोई अन्याय परक बात न होगी।

❑ गुरूजी! ऐसे में, भ्रूणहत्या से संबंधित आत्माओं (सूक्ष्मों) की अंतत: गति क्या होगी?

सैंकड़ों-हजारों वर्षों तक ब्रह्मांड में इधर-उधर भटकती रहेंगी। गाहे-बेगाहे लोगों को परेशान करती रहेंगी। ऐसी आत्माएं (सूक्ष्म) असंख्य योनियों में भ्रमण कर पुनर्जन्म के लिए तेरह सौ योजन की यात्रा अपने से पूरी नहीं कर पायेंगी। हां; कभी-कदापि किसी सिद्ध साधक की निगाह ऐसे सूक्ष्म (आत्मा) पर अनायास पड़ जाती है तो उसका उद्धार किसी न किसी रुप में हो जाता है। लेकिन उद्धार से पहले उन्हें एक बार पुन: किसी गर्भ में प्रवेश करके जन्म लेना पड़ता है। पर, इस तरह की प्रक्रिया कभी-कदापि दो-चार सूक्ष्मों के साथ ही हो पाती है। संक्षेप में, तुम बस इतना समझ लो कि- ऐसे सूक्ष्मों की गति अधिकांशत: रचनात्मक नहीं होती है।

❑ लेकिन गुरूजी! उस सूक्ष्म की ऐसी दुर्गति हुई क्यों? आखिर गर्भपात से वही क्यों प्रभावित हुआ?

देखो; इस दुर्गति के पीछे कई सारे कारण हो सकते हैं। जैसे- पूर्वजन्मों के कर्मों के कारण, माता-पिता के कर्मों के कारण, पूर्वजन्मों में अन्य लोगों

प्रतिफल किस को कब-कैसे और किस रूप में मिलता है। क्षण भर के लिए मान लो कि-जिस जीव की गर्भ में ही भ्रूणहत्या हो गयी है; वह यदि सामान्य गति से यात्रा करने के उपरान्त जन्म लेता और बड़ा होकर समाज, देश या विश्व का एक महत्वपूर्ण व्यक्ति बनता, तो उससे मानवता को कुछ न कुछ मिलता न! ऐसे में, तुम्हीं सोचो कि उस जीव की भ्रूणहत्या करने या करवाने वाले ने एक जघन्य अपराध किया या नहीं। तो इस तरह की तमाम सारी घटनाओं से जुड़-टूट कर मानव स्वयं अपने विनाश व पतन का रास्ता बनाता रहता है, और तथाकथित धर्मभीरू लोग इसे ईश्वर की इच्छा कह कर संतोष करते रहते हैं।

❑ लेकिन गुरूजी! फिर जनसंख्या पर नियंत्रण कैसे होगा? क्योंकि, आज की प्रमुख समस्या बढ़ती हुई आबादी भी तो है। क्या, जनसंख्या की रोकथाम का कोई स्वच्छ विकल्प आप बता सकते हैं?

देखो; कालचक्र के सापेक्ष में ब्रह्मांड में स्थित प्रत्येक सूक्ष्मों या 'सूक्ष्म-स्थूल' के संयोजन के स्थायित्व के प्रति आध्यात्मिक या भौतिक दृष्टि से एक संभावना निश्चितता-अनिश्चितता के मध्य व्यक्त की जा सकती है, न कि बिना किसी घटनाक्रम के एक स्पष्ट नीति या संविधान का निर्धारण करके, नीति या संविधान का निर्धारण तो किसी विशेष घटनाक्रम के अंतर्गत ही किया जा सकता है।

जरा सोचो, महाभारत कालीन कौरव-पाण्डव युद्ध में, 18 अक्षौहिणी (लगभग) सेना वीरगति को प्राप्त हुई या उनके 'सूक्ष्म-स्थूल' का भौतिक-आध्यात्मिक दृष्टि से विखंडन हुआ। उन सैनिकों का घर परिवार भी तो रहा होगा। तो क्या, उस युग-काल में भी भ्रूणहत्या, नसबंदी या इसी तरह के घृणित प्रक्रियाओं से जनसंख्या को नियंत्रित किया जाता था। नहीं न! ये सब की सब अप्राकृतिक प्रक्रियाएं तो मानवीय असफलताओं के द्योतक हैं। फिर, जनसंख्या की वृद्धि या संकुचन से इतना घबड़ाते क्यों हो? संसाधन जुटाओ, पृथ्वी के अनुपयोगी भूभागों का छेदन करके अन्न उपजाओ, शुद्ध जल आदि की व्यवस्था करो जिससे प्रकृति या ब्रह्मांड में स्थित प्रत्येक जीव का भरण-पोषण व सामान्य तृप्ति हो सके। हां, जनसंख्या की वृद्धि या संकुचन के लिए प्राकृतिक ढंग से सोचो या प्रकृति को स्वयं सोचने-करने दो।

यदि इन सबके विपरीत भी, तुम अपने से कुछ करना-धरना चाहते हो तो, निम्न वैदिक ऋचा पर ध्यान दो-

इदं वेद स एव गर्भं न चकार,

इदं न वेद स एव गर्भं चकार।

वैदिक या पौराणिक काल की जिन स्त्रियों ने इस तथ्य को जाना-समझा, उन्होंने या तो गर्भ ही नहीं धारण करवाया या करवाया भी तो मात्र दो या एक संतान के लिए। जिससे उस कुल-गोत्र की वंश-परंपरा नियमित रुप से चलती रहे।

बहुत सी स्त्रियों ने जब यह सुना कि-जीव को गर्भ में रहते हुए नौ माह तक घोर अधंकार के मध्य रौरव नर्क से गुजरना पड़ता है तो उन्होंने आजीवन गर्भ ही नहीं धारण करवाया या करवाया भी तो मात्र दो-एक संतान के लिए जिससे वंश परंपरा चलती रहे। तो यह हुआ; जनसंख्या नियंत्रित करने का एक स्वस्थ भौतिक समाधान।

आज भी, राजस्थान या अन्य ऐसे विकसित राज्य; जो सांस्कृतिक दृष्टि से विकसित हैं, वहां की स्त्रियां-आमा हल्दी, गाजर के बीज या इसी तरह के अन्य प्राकृतिक संसाधनों द्वारा अपने परिवार को नियंत्रित करती हैं।

फिर भी, मैं तो यही कहूंगा कि-जनसंख्या का नियंत्रण जो तुम लोग भौतिक दृष्टि से करना चाहते हो, वह सब का सब आध्यात्मिक दृष्टि से न्यायोचित नहीं है। भई; प्रकृति-ब्रह्मांड में असंख्य योनियों में विचरण या भ्रमण करने वाले असंख्य सूक्ष्मों को जीव रुप में पृथ्वी पर क्यों नहीं आने देते? उन्हें स्थूल से जुड़कर सशरीर रुप में भौतिक जीवन जीने से क्यों रोकते हो?

यदि मैं उंन तथाकथित राक्षसी प्रकृति से युक्त व्यक्तियों से यह कहूं कि-तुम सब जनसंख्या को अप्राकृतिक ढंग से रोकने के बजाय, स्वयं अपने जीवन का परित्याग क्यों नहीं कर देते? अपने 'सूक्ष्म-स्थूल' को स्वयं विखंडित क्यों नहीं कर देते? सच पूछो तो; यह सब धार्मिक-आध्यात्मिक अज्ञानता का मात्र द्योतक है।

यदि इसी अज्ञानता के तहत भ्रूणहत्या या उससे संबंधित घृणित कुकृत्य को निरंतर तथाकथित कानूनी संरक्षण मिलता रहा; तो धीरे-धीरे ब्रह्मांड का अधिकांश भाग इतना दूषित व दोषयुक्त हो जायेगा कि पृथ्वी पर स्थित तमाम

भ्रूणहत्या से सम्बन्धित लोगों की भौतिक-आध्यात्मिक विवेचना। अब प्रश्न यह उठता है कि-उस भुक्तभोगी सूक्ष्म के आगे की यात्रा कैसी और किस रुप में होगी, जो भ्रूणहत्या जैसे घृणित घटनाक्रम में फंस कर भौतिक शरीर नहीं धारण कर पाया।

इस जटिल-विवादास्पद विषय के सम्बन्ध में बस इतना समझ लो कि जिस भ्रूण की हत्या हुई है उससे जुड़े सूक्ष्म का पुनर्जन्म बहुत ही कठिन हो जायेगा। इस तरह के हजारों-लाखों सूक्ष्मों में से दो-एक का ही पुनर्जन्म हो पाता है। हाँ; इसके विपरीत जैसे-जैसे वह मानव विरोधी शक्ति के रूप में प्रबल होता जाता है और उस बीच यदि कोई सूक्ष्म-स्थूल का संयोजन यानी मानव उस विकृत के घेरे में आ जाता है या उससे ग्रसित हो जाता है तो उससे उसको मुक्त कराना बहुत कठिन हो जाता है। क्योंकि, वह सूक्ष्म अपने स्थूल से जबरन यानी भ्रूण हत्या के अन्तर्गत अशुद्ध अवस्था में मुक्त हुआ है। ऐसे में, उसे किसी मानव शरीर से मुक्त कराने में बहुत सारे कर्म-काण्डीय विधान व तांत्रिक प्रयास आदि भी विशेष सफल नहीं हो पाते। इस सम्बन्ध में, तुम्हें एक पूर्व की घटना सुनाता हूँ-

'वर्षों पहले एक महिला चिकित्सक की समस्या मेरे पास आयी। वह महिला मेडिकल कॉलेज में प्रोफेसर थी। धीरे-धीरे वह रोगग्रस्त होने लगी। कई माह तक अस्वस्थ रहते-रहते वह उठने-बैठने में भी असमर्थ हो गयी। रात-रात भर उसे भयानक आकृतियाँ दिखाई देती थी। तमाम सारी चिकित्सा से थक हार कर एक दिन उसका चिकित्सक पति मेरे पास आया। उसकी सारी व्यथा सुनने के बाद मैंने उस समस्या का सूक्ष्म निरीक्षण किया। विस्तृत विवेचना के लिए मैं उस अस्वस्थ महिला चिकित्सक से भी समय निकाल कर मिला। जब मैंने उससे पूछा कि तुमने कितने गर्भपात किये या कराये हैं? क्षण भर मौन रहने के बाद उसने धीरे से कहा-'सैंकड़ों किए हैं।' उसकी इस बात से मुझे लगा कि व्यक्ति अपने क्षणिक स्वार्थ के लिए कितने हद तक नीचे गिर सकता है। चिकित्सक पति द्वारा अपनी चिकित्सक पत्नी के स्वस्थ होने का उपाय पूछने पर मुझे कठोरता के साथ यह कहना पड़ा कि-'तुम्हारी इस चिकित्सक पत्नी ने जाने-अनजाने में इतने सारे जघन्य अपराध कर डाले हैं जिसका प्रायश्चित भी असम्भव सा है। हाँ, उस असम्भव को सम्भव बनाने के लिए उतने यज्ञ-महायज्ञ करने होंगे जितनी संख्या में इसने भ्रूण-हत्यायें की हैं। वैसे थोड़ा-बहुत

जो सम्भव था, वह मैंने कर दिया था। हाँ; आगे की प्रक्रिया न तो वो लोग कर पाये और सम्भवत: आर्थिक दृष्टि से उसके लिए समर्थ भी नहीं थे।'

इस तरह उस चिकित्सक महिला को सैकड़ों विकृत व विरोधी शक्तियों के घेरे में फंस जाना पड़ा और कुछ माह उपरान्त यह दुखद समाचार सुनने को मिला कि-एक विशेष घटनाक्रम में वह इतनी भयाक्रान्त हो गयी कि उसी क्रम में उसका सूक्ष्म-स्थूल अलग-थलग हो गया।

उपरोक्त घटनाक्रम को, ध्यान में रखते हुए यह नि:संकोच रूप से कहा जा सकता है कि-अगर भ्रूणहत्या को कानूनी संरक्षण मिल गया है और जिसने ऐसी घृणित व्यवस्था की है उसके लिए तो परेत या राक्षस शब्द भी हल्का पड़ेगा। संक्षेप में, तुम बस इतना समझ लो कि इन विकृत-घिनौनी अंसख्य घटनाओं से हमारी सामाजिक व सांस्कृतिक व्यवस्था भी विकृत होती जा रही है। यह कुकृत्य किसी भी स्थिति में मानवीय नहीं हो सकता।

❑ गुरूजी! गर्भपात के अतिरिक्त जो अन्य तरीके जनसंख्या की रोकथाम के लिए प्रयोग में लाये जाते हैं, क्या उनमें भी कोई दोष है?

देखो, तुम्हारे शरीर में करोड़ों तन्तु हैं। यहाँ तक कि मनुष्य के सिर में लगभग पौने तीन करोड़ तन्तु होते हैं। शरीर के अन्दर व्याप्त ये असंख्य तंतु कर्म-धर्म और अधर्म के आधार पर जागृत व नष्ट होते रहते हैं। इसी क्रम के अन्तर्गत गर्भपात या उससे सम्बन्धित प्रक्रियाओं में शरीर के बहुत सारे तन्तु क्रमिक गति से नष्ट होने लगते हैं। असंख्य तन्तुओं के नष्ट होते ही मानव विक्षिप्तावस्था या भयानक स्थायी रोगों से जुड़ जाता है। कहने का तात्पर्य-उस मानव के अन्दर की सुख-शान्ति शनै: शनै: नष्ट होने लगती है। इसी प्रक्रिया के अन्तर्गत धीरे-धीरे व्यक्ति का सूक्ष्म-स्थूल क्षीण होने लगता है। और किसी विशेष घटनाक्रम के अन्तर्गत असामयिक स्थिति में एक दूसरे से अलग-थलग हो जाता है। यानी वह आकस्मिक मृत्यु की चपेट में आ जाता है।

भ्रूणहत्या की जहाँ तक बात है, वह तो एक महाजघन्य अपराध है। उस घटनाक्रम से जुड़े सारे के सारे लोग किसी न किसी क्रम में अपने विनाश की भूमिका स्वयं तैयार करने लगते हैं। हाँ, यह बात दूसरी है कि, उस कुकृत्य का

[मृत्यु की निश्चितता-अनिश्चितता के मध्य कालचक्र के सापेक्ष में जीव की गति का चक्रीय विधान क्या होगा? इस विवादास्पद प्रकरण के अन्तर्गत - 'भ्रूणहत्या-सूक्ष्म की दुर्गति' विषय से सम्बन्धित प्रश्नों के समाधान हेतु श्मशान साधक 'अज्ञान' जी से दिनांक : 1 जुलाई 1992 (सांय) को लिए गये लम्बे साक्षात्कार का प्रमुख अंश प्रस्तुत है-]

❑ गुरूजी! आज गर्भपात को कानूनी संरक्षण प्राप्त है, अतः गर्भपात के आंकड़े निरंतर बढ़ते ही जा रहे हैं। क्या, ये भ्रूण हत्याएँ भी मृत्यु के अन्तर्गत आती हैं और लोगों पर इसका क्या प्रभाव-कुप्रभाव पड़ता है? कृपया, इसे समझाएँ।

ये जो नियम-कानून हैं, यह तो सामाजिक व्यवस्था चलाने के लिए हैं। लेकिन यदि इस तरह के नियम-कानून से हमारे जीवन को किसी तरह का आघात लगता है या वह नष्ट होता है तो ऐसे नियम-कानून अपराधिक हैं, गलत हैं, क्योंकि अपराधिक प्रवृत्तियों को पुष्ट करने वाले कानून भी तो अपराध के अन्तर्गत आयेंगे और ऐसे कानून को बनाने वाला भी आध्यात्मिक दृष्टि से निश्चित अपराधी होगा। पूर्व जन्म के आधार पर वह उन तमाम सूक्ष्मों (आत्माओं) का किसी न किसी रूप में विरोध का एक कारण बन सकता है। जैसे दंड देने वाला न्यायाधीश अपराधिक प्रवृत्ति से कहीं न कहीं, किसी न किसी रूप में घटनाक्रम के अन्तर्गत जुड़ता है। वैसे ही भ्रूणहत्या सम्बन्धी कानून बनाने वाला भी अपराधिक प्रवृत्ति से जुड़ता-टूटता रहता है। कभी-कभी तो भ्रूणहत्या के अंतर्गत भुक्त-भोगी का सूक्ष्म, हत्या, आत्महत्या से सम्बन्धित सूक्ष्म से भी ज्यादा भयानक व क्रूर विरोधी शक्ति के रूप में उभर कर आता है और सैकड़ों-हजारों वर्ष तक ब्रह्मांड की विभिन्न स्थितियों को ये सूक्ष्म प्रभावित व दूषित करते रहते हैं।

जैसे, मान लो कि-एक सूक्ष्म असंख्य योनियों में भ्रमण करने के उपरान्त किसी गर्भ में आया और तीन माह में वह जीव रूप में आ गया। तत्पश्चात उस महिला ने गर्भपात करवा दिया। यानी उस जीव की भ्रूणहत्या हो गयी। अब उस घटनाक्रम में, भ्रूणहत्या से सम्बन्धित अपराधी कौन-कौन होंगे?-वह चिकित्सक जिसने भ्रूणहत्या की, वह उपचारिका जिसने उस घृणित कार्य में सहयोग दिया, वह सड़ी-गली कानूनी व्यवस्था जिसके अन्तर्गत वह सूक्ष्म, स्थूल से जुड़कर एक नया भौतिक शरीर नहीं धारण कर पाया और इसके साथ-साथ वह गर्भधारिणी जिसने गर्भपात करवाया। गर्भपात जैसे कुकृत्य से जुड़े ये सब के सब किसी न किसी रूप में निश्चित आध्यात्मिक अपराधी सिद्ध होंगे। हाँ; इस आधार का प्रतिफल कितना-कितना होगा, यह अलग बात है। यह हुई

है कि-किसी घटनाक्रम के अंतर्गत सूक्ष्म-स्थूल शरीरों का किसी न किसी रूप में प्रभावित होना। हां; जहां तक परिवेश के प्रभावित होने की बात है, वह किसी न किसी रूप में, व्यवस्था यानी भौतिक व्यवस्था के मूल बिंदुओं से अवश्य जुड़ती-टूटती है। जिसके अंतर्गत, एक विशेष क्रम में इस तरह की सामूहिक घटनाएं-दुर्घटनाएं होती रहती हैं। अब भौतिक रूप में, तुम इस तरह की सामूहिक घटनाओं के लिए दोषी चाहे जिस किसी को भी मान लो पर आध्यात्मिक दृष्टि से यह आवश्यक नहीं है कि वही मूलत: दोषी हो।

भ्रूणहत्या-सूक्ष्म की दुर्गति

गुरूजी! आज के युग में, मानव जिस तरह से चिंताओं और परेशानियों से घिरा हुआ है; और वह अतिशय से तनावग्रस्त है। इसका अर्थ यह हुआ कि- ऐसे वातावरण से उसके सूक्ष्म-स्थूल शरीरों का ह्रास हो रहा हैं, तो क्या अंत में वही प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष रूप से उसकी मृत्यु-विनाश का कारण बन जायेगा? कृपया, इस संबंध में कुछ कहें।

देखो;इन सबके पीछे कई सारे आध्यात्मिक-भौतिक कारण होते हैं। इन कारणों में सबसे प्रमुख कारण यह है कि-गौत्र या वशं-परंपरा में ये जो तमाम सारे घटनाक्रम में अकालमृत्यु, हत्या या आत्म हत्या की घटनाएं होती हैं वो सामान्यत: उस कुल-खानदान के लिए किसी रूप में भिन्न-भिन्न समस्याओं का कोई न कोई कारण बन जाती हैं। इनमें चिंता, भय, अत्यधिक क्रोध, अनुशासन हीनता, भ्रष्टता आदि के साथ-साथ जीव के सूक्ष्म-स्थूल के संयोजन को किसी न किसी रूप में प्रभावित करना एक प्रमुख स्त्रोत बन जाता है। यहां तक कि इन कारणों का प्रभाव जीव के 'सूक्ष्म-स्थूल' पर जन्म-जन्मान्तर तक किसी न किसी रूप में पड़ता रहता है।

इन सब विवादों या कारणों का निराकरण या समाधान अंतिम कर्मकाण्ड, यज्ञ-महायज्ञ आदि के अंतर्गत हो सकता है। हां; यदि इन सब धार्मिक कृत्यों को तांत्रिक प्रक्रिया के अंतर्गत किया जाए तो समाधान का प्रतिफल और स्थायी हो सकता है।

❑ गुरूजी! क्या इन्हीं कारणों से हत्याएं या आत्म-हत्याएं अधिक घटित हो रही हैं?

हां; पूर्णत: तो नहीं लेकिन मुख्यत: इन सब घटनाओं के पीछे यही सब कारण किसी न किसी घटनाक्रम से जुड़ जातें हैं। जैसे, मान लो कि-एक आदमी ने आत्महत्या की, अब प्रश्न यह उठता है कि- उसने आत्महत्या क्यों की? इस घटना के लिए मुख्यत: दोषी कौन है? वह मरने वाला व्यक्ति तो कागज पर दो-चार पंक्ति लिख कर हमेशा-हमेशा के लिए चला गया कि-'मैंने आत्महत्या

इसलिए की कि-फलां लड़की ने मुझसे विवाह करने से इंकार कर दिया या मैं अपनी तमाम सारी भौतिक परेशानियों से ऊब-थक चुका हूँ।' पर, घटनाक्रम में इस घटना के लिए मुख्यत: दोषी कौन है? वह लड़की या वो तमाम सारी भौतिक परेशानियां या और कोई। हां; कोई न कोई बिंदु तो इस घटना का कारण तो बनेगा ही। हो सकता है; वह बिंदु भौतिक हो या आध्यात्मिक। पर, दोषी तो कोई न कोई, किसी न किसी रूप में होगा ही। आत्महत्या करने वाले व्यक्ति के पूर्वजन्मों के आधार पर यह भी संभव हो सकता है कि, वह लड़की उसके पूर्व जन्म की शत्रु रही हो। और इस वर्तमान जन्म में उसकी मृत्यु का प्रेमिका के रूप में कारण बन गई हो। और उसी क्रम में, एक भौतिक बहाना यह बन गया कि उस लड़की ने विवाह नहीं किया इसलिए उस व्यक्ति ने आत्महत्या कर ली। इस आत्महत्या के क्रम में, उस व्यक्ति के मां-बाप भी आंतरिक कष्ट निश्चित रूप से पायेंगे। इसके पीछे भी जन्म-जन्मान्तर का कारण हो सकता है। हां;किसी न किसी घटनाक्रम के तहत-हत्या, आत्महत्या या अकालमृत्यु संबंधी घटनाओं का क्रम तब तक जारी रहेगा, जब तक इस पर कोई न कोई भौतिक-आध्यात्मिक अवरोध क्रमिक रूप में नहीं लग जाता।

❑ गुरूजी! यह तो दो-चार व्यक्तियों के बीच की बात हुई। लेकिन, जब बड़े पैमाने पर हत्याएं या आत्महत्याएं होती हैं- जैसे, पिछले दिनों 'मण्डल-आयोग' को लेकर तमाम सारे युवकों ने आत्मदाह किया, वह क्या था? उसके मुख्य कारण क्या थे?

देखो; जितनी भी अकाल मृत्यु या हत्या-आत्महत्या से संबंधित मौतें होती हैं, उनके पीछे कोई न कोई गहरा व प्रभावशाली कारण अवश्य छिपा होता है। कभी-कभी दुष्ट-आत्माओं या विरोधी परा-शक्तियों का भी कुप्रभाव व्यक्ति पर पड़ जाता है। यह कुप्रभाव सामूहिक स्तर पर भी हो सकता है। पुनर्जन्म संबंधी कारण भी हो सकते हैं। उस परिवेश का भी एक कुप्रभाव हो सकता है, जहां इस तरह की सामूहिक या व्यक्तिगत घटनाएं किसी घटनाक्रम में घटित होती हैं। और इन सब के पीछे मुख्य कारण तो वही है, जिसकी चर्चा हो चुकी

वह भी किसी घटनाक्रम के तहत कर्मों के माध्यम से। लेकिन वह मृत्यु का पर्याय तब तक नहीं बनेगा, जब तक उस पर कोई विशेष कुप्रभाव आरोपित न हो। किसी घटनाक्रम में फंस कर उसकी मृत्यु अनिश्चितता के मध्य निश्चित हो जाये, यह अलग बात है। मेरे कहने का आशय यह है कि, उसके पीछे तमाम सारे ऐसे बिंदु भी आ जुड़ते हैं जो किसी विशेष घटनाक्रम के तहत उसको दुर्बल बना देते हैं। यानी उसके सूक्ष्म-स्थूल के संयोजन का संतुलन बना-बिगाड़ देते हैं। उपरोक्त परिस्थितियों (बाह्य-आंतरिक) के अंतर्गत, तुम स्थूल की जीर्णता को कर्म से जोड़ सकते हो। लेकिन वही उसका शत-प्रतिशत मूल कारण होगा, यह आवश्यक नहीं है। इस प्रकरण के अंतर्गत तुम्हें दो ऐसे उदाहरण देता हूँ-जिससे तुम्हारे अंदर का भ्रम दूर हो जाये-

पहला- एक साधक जो राजयोग की साधना के अंतर्गत खेचरी मुद्रा में किसी निर्जन स्थान पर वर्षों से बैठा है। पन्द्रह-बीस वर्ष तक उसने अन्न-जल कुछ भी ग्रहण नहीं किया। वर्षों उपरान्त जब वह अपनी साधना पूरी करके ध्यान तोड़ेगा, उठेगा तो तुम्हें उसके शरीर पर थोड़ी बहुत झुर्रियां तो अवश्य दिखाई देंगी, लेकिन उस स्थिति में उसका आन्तरिक शरीर जर्जर होने के बजाय प्रबल होगा। उसके सूक्ष्म-स्थूल का संयोजन इतना प्रबल हो जायेगा कि, वह किसी भी क्षण मृत्यु पर टेक लगा सकने में सक्षम होगा। इस तरह से, उसी साधना प्रक्रिया में वह साधक अपने जीवन का सैंकड़ों वर्ष सरलता से पार कर लेता है। तो ऐसे में उस साधक के शरीर की जीर्णता-शीर्णता तुम कर्मों के आधार पर नहीं पहचान पाओगे न!

दूसरा- एक ऐसा भौतिक प्राणी है जो निरंतर भोग-विलास व तथाकथित अनैतिक कार्यों में अपना जीवन व्यतीत कर रहा है। धन-ऐश्वर्य के आवरण में वह निरंतर तुम्हें बाह्य रूप में स्वस्थ व सशक्त दीखता है। पर, उसका आंतरिक शरीर शनैः शनैः दुर्बल होता जा रहा है। उसके तथाकथित कर्म उसे किन्हीं विशेष कारणों के अंतर्गत किसी न किसी रूप में प्रभावित कर रहे हैं। उसके सूक्ष्म-स्थूल का संयोजन बिगड़ता जा रहा है। तो ऐसे में, किसी घटनाक्रम के तहत उसकी मृत्यु निश्चित-अनिश्चित हो सकती है।

उपरोक्त दोनों उदाहरणों से तुम बस इतना समझ लो कि-मृत्यु का निर्धारण पूर्व से नहीं होता है। वह तो किसी विशेष घटनाक्रम के तहत निश्चितता-अनिश्चितता के मध्य घटित होती रहती है। सूक्ष्म-स्थूल का संयोजन टूटता-जुड़ता रहता है। हां; उसका कर्म एक सीमा तक आधार अवश्य बनता है।

❑ गुरूजी! फिर व्यक्ति चाहे तो कर्मों से अपनी आयु को बढ़ा-घटा भी सकता है?

हां-हां; बिल्कुल घटा-बढ़ा सकता है। अगर आप साधना-वाधना कुछ नहीं जानते हो, पर एक काम तो कर ही सकते हो जीवन का अधिक से अधिक समय प्रसन्नता व व्यस्तता के साथ व्यतीत करो; समझ लो-तुम्हारे जीवन का अन्तराल दस-पांच वर्ष अवश्य बढ़ जायेगा। फिर, साधना प्रक्रिया के अंतर्गत, तुम अपनी आयु दस-पांच वर्ष ही क्या, सौ-पचास वर्ष तक बढ़ा सकते हो। राजयोग की कई साधनाएं ऐसी हैं जिसके अंतर्गत साधक अपनी इच्छानुसार जितना चाहे उतना जी सकता है। यहां तक कि-जब तक उसका स्थूल एकदम से जर्जर नहीं हो जाता है, तब तक वह सूक्ष्म-स्थूल के संयोजन के अंतर्गत जीवन जीता रहता है।

यदि सूक्ष्म-स्थूल के संयोजन से युक्त जीवन किसी विरोधी शक्ति या अन्य अवरोधात्मक बिन्दुओं से प्रभावित नहीं है तो वह कर्म-धर्म के आधार पर अपना जीवन बढ़ा सकता है और इसके विपरीत उसका जीवन किसी घटनाक्रम के तहत विशेष परिस्थितियों में घट भी सकता है।

अतः कर्म जो है-एक जीवन जीने का माध्यम बनता है। वह स्थूल और सूक्ष्म का पोषक हो सकता है उसको परिपक्व बना सकता है और उसको आगे बढ़ाने की एक चेतना दे सकता है। लेकिन कर्म ही हमारे विनाश का पूर्णतः कारण हो; ऐसा नहीं है। कारण तो हमारा सूक्ष्म और स्थूल का संयोजन ही बनता है। हम चाहे माध्यम किसी को बना लें।

वहां उपस्थित यज्ञ में भाग लेने वाले अन्य पंडित व आचार्य मेरे प्रत्युत्तर की प्रतिक्षा करने लगे। थोड़ी देर शांत रहने के बाद मैंने उन भययुक्त पंडित जी को समझाते हुए कहा-' पंडित जी, आप बिल्कुल न घबराएं। यज्ञ-महायज्ञ आदि में इस तरह की परिक्षाएं होती रहती हैं। फिर रात्रि को जो घटित हुआ उसकी जानकारी मुझे पहले से ही थी। और जिनसे आप अनायास डर गये, उन्हें तो मैंने गंगा के किनारे के अवरोधों को दूर करने के लिए भेजा था। वे आप लोगों के शुभचिंतक थे और अपनी सूक्ष्मीय तरंगों से वे आपको ब्रह्मा के कार्य व जिम्मेदारी का बोध करा रहे थे। आप निश्चिंत होकर इस महायज्ञ को पूर्ण होने में सहयोग दें। वैसे, कोई चिंता की बात नहीं है।' उसके बाद कहीं जाकर पंडित जी आश्वस्त हुए और विधिवत ढंग से उस महायज्ञ का समापन हुआ।

उपरोक्त घटनाक्रम के अंतर्गत, उस भयावह स्थिति में कुछ भी घट सकता था। वे पंडित जी उस भयावह स्थिति में विक्षिप्तावस्था तक में जा सकते थे। तो मेरे कहने का आशय यह है कि अच्छे कार्यों में भी कोई न कोई व्यवधान किसी न किसी रूप में उपस्थित हो जाते हैं। यदि उन्हें समय से दूर न किया जाए, तो हो सकता है उसका प्रतिफल किसी भी स्थिति में सार्थक न बन पाए।

इन विवादास्पद संदर्भों के संबंध में, मैं केवल इतना ही कहूंगा कि- विधि-विधान के तहत किसी घटनाक्रम में मृत्यु की निश्चितता को अनिश्चितता में परिवर्तित किया जा सकता है, लेकिन उस क्रम घटित घटना को एक दम से नहीं टाला जा सकता। हां; घटनाक्रम में उपस्थित व्यवधान को टाला-हटाया जा सकता है।

वैसे, यह सब तभी संभव है जब हम धार्मिक-अंधविश्वासों को बिल्कुल महत्व न दें। क्योंकि, सामान्यत: होता यह है कि-' किसी घटनाक्रम में; जब कुछ घट-टल जाता है तो लोग यही राग अलापते हैं कि-ईश्वर की यही इच्छा थी, यही नियति थी, नियति का ही सब खेल है-आदि-आदि। यद्यपि इस तरह से राग अलापना एक घटिया स्तर की प्रक्रिया है, मिथ्या प्रलाप है। जरा सोचो- जब तुम मकान बनवाते हो तो बड़े गर्व से कहते हो कि-यह मकान मैंने बन वाया है। या कहीं किसी विशेष कार्य में सफलता प्राप्त करते हो तो धड़ल्ले से कहते हो कि-यह सब मेरे अथक प्रयास का प्रतिफल है। लेकिन वहीं, जब तुम किसी घटनाक्रम के तहत हार-थक जाते हो; तो विवश होकर यही न कहते हो कि-

यह सब तो ईश्वर की इच्छा थी, नियति थी, आदि। तो क्या, इस तरह का स्वार्थयुक्त प्रलाप व्यक्ति के लिए उचित है? नहीं न!'

इस क्रम में, संक्षेप में बस इतना समझ लो कि-विधानगत घटनाओं का निर्धारण पूर्व से या पूर्व जन्मों के धर्म-कर्म पर आधारित होता है। लेकिन, भौतिक-आध्यात्मिक प्रयास से पूर्व निर्धारित घटना या घटनाक्रम के प्रभाव-कुप्रभाव को प्रभावहीन करके घटाया-मिटाया जा सकता है। पर, विधानगत घटनाओं से इतर घटनाओं का पूर्व निर्धारण हो ही, यह आवश्यक नहीं है।

❑ गुरूजी! कुछ विद्वानों का यह कहना है कि-देह की आयु तो पूरी नहीं हुई थी, किन्तु उस देह से किये जाने वाले कर्म क्षीण हो गये थे; अत: मृत्यु हो गई। इस सबंध में आप का क्या मत है-कृपया, स्पष्ट करें?

देखो; जो लोग इस तरह की बातें करते हैं, वे लोग या तो किसी भ्रम में जी रहे हैं या ऐसे परिवेश में रहते हैं जहां कुछ इस तरह की घटनाएं घट जाती हैं जिसे वे समझ-देख नहीं पाते। पर, इन भ्रामक तथ्यों को हम आध्यात्मिकता या मानवीय स्तर से नहीं जोड़ सकते। क्योंकि, जब किसी के कर्म क्षीण होंगे यानी सूक्ष्म-स्थूल का संयोजन बिगड़ेगा तो निश्चित मानो, उसके बाह्य या आंतरिक शरीर पर भी उसका कुछ न कुछ प्रभाव अवश्य पड़ेगा। जैसे, इस तरह से समझो कि-सबसे पहले सूक्ष्म (आत्मा) असंख्य योनियों में भ्रमण करने के उपरान्त भौतिक जीवन में आने के लिए किसी स्त्री के गर्भ में प्रवेश करता है। तीन माह के उपरान्त, वह सूक्ष्म; स्थूल से सांमजस्य स्थापित कर लेता है। नौ-दस माह तक गर्भ में रहने के उपरान्त देह रूप में प्रसव पीड़ा के बाद गर्भ के बाहर आ जाता है। उस समय वह नवजात शिशु होता है। सामान्यत: छ: माह तक उसको पूर्व जन्म की स्मृतियां याद आती रहती हैं जिसे उसका सूक्ष्म किसी न किसी रूप में अनुभव करता रहता है। जैसे-जैसे वह बच्चा बड़ा होता जायेगा, वैसे-वैसे वह अपने जीवन के छोटे-मोटे लक्ष्य निर्धारित करेगा। उन लक्ष्यों की पूर्ति के तहत उसके कर्म बने बिगड़ेंगे। इससे यह लगता है कि- कर्म पहले से निर्धारित नहीं थे। हां; विधानगत कुछ तथाकथित घटनाक्रम निर्धारित हो, यह अलग बात है। ऐसे में, सामान्यत: क्षीण तो उसका स्थूल होगा,

[मृत्यु की निश्चितता-अनिश्चितता के मध्य कालचक्र के सापेक्ष में जीव की गति का चक्रीय विधान क्या होगा? इसे विवादास्पद प्रकरण के अन्तर्गत - 'घटनाओं का पूर्व-निर्धारण -- ?' विषय से सम्बन्धित प्रश्नों के समाधान हेतु श्मशान साधक 'अज्ञान' जी से दिनांक : 30 जून 1992 (पूर्वान्ह) को लिए गये लम्बे साक्षात्कार का प्रमुख अंश प्रस्तुत है-]

❑ गुरूजी! जीवन में घटने वाली समस्त घटनाएं क्या पूर्व निर्धारित नहीं हैं?

देखो; जहां तक पूर्व निर्धारण की बात है, तो इसको समझने के लिए- विधि, विधान और व्यवधान को समझना होगा। आप जब कोई अच्छा कार्य करते हो, तो कोई न कोई विघ्न उपस्थित हो जाता है। यानी की व्यवधान पड़ जाता है। तो उस व्यवधान को किसी न किसी उपक्रम के तहत हटाया जा सकता है। मान लो, आप तीव्र गति से गाड़ी चला रहे हो। एकाएक सामने सड़क पर दुर्घटना की स्थिति बन गई। लेकिन आपके सूक्ष्म-स्थूल का संयोजन इतना प्रबल है कि, मृत्यु का भय आपको प्रभावित नहीं कर पाता ऐसी स्थिति में, आपके बुद्धि-विवेक से दुर्घटना किसी न किसी तरह टल जायेगी। यह तो हुआ व्यवधान जो किसी न किसी घटनाक्रम में किसी अन्य माध्यम से टल-घट जाता है। लेकिन कुछ विधानगत घटनाएं किसी भी घटनाक्रम में टलना कठिन होती हैं। उस उपक्रम में विधान के अन्तर्गत घटना तो निश्चित घटेगी। हां; यह बात दूसरी है कि उसका प्रभाव व्यक्ति पर कितना और किस रूप में पड़ता है। इसी संदर्भ में, मैं तुम्हें एक उदाहरण देता हूँ-

'लगभग डेढ़ वर्ष पूर्व की बात है-मैं गंगा किनारे एक संभ्रांत परिवार में महाशत चण्डी का यज्ञ करवा रहा था। दूसरे दिन मध्यरात्रि की बात है, यज्ञ में जिन्होंने ब्रह्मा का स्थान लिया था वे (पंडित जी) बरामदे में तख्त पर लेट गये। झपकी आते ही उन्होंने देखा कि, एक अधेड़ उम्र का व्यक्ति सिर पर लकड़ियों का बड़ा सा बोझा लिये उनके सामने आकर खड़ा हो गया। और कड़कती आवाज में बोला- 'ब्रह्मा बनते हो' देखते हैं! कैसे ब्रह्मा बनते हो? इतना कहने के पश्चात् उसने लकड़ी का बोझ उनके सिरहाने जमीन पर पटक दिया। धम्म की तीव्र ध्वनि सुनते ही पंडित जी उठ कर बैठ गये। घंटों कांपते रहे। यहां तक की वे रातभर ढंग से सो भी नहीं पाये। दूसरे दिन सुबह जब मैं यज्ञ-स्थल पर पहुंचा, तो उन्हें भयावह स्थिति में पाया। पूछने पर, उन्होंने पूर्व रात्रि की बीती सारी घटना क्रमिक ढंग से सुना डाली। सुनाते वक्त भी वे भयाक्रांत थे। यहां तक की, उसी भयावह स्थिति में मुझसे यह भी कह डाला कि- गुरूजी! अब आप किसी दूसरे पंडित जी को ब्रह्मा का स्थान दे दीजिये। मुझे बहुत भय लग रहा है। इतना सब सुनने के उपरान्त मुझे अनायास थोड़ी सी हंसी आ गई।

स्थिति में रह पायेगा? उनके सूक्ष्मों की जन्म-जन्मांतर के लम्बे अंतराल में क्या स्थिति बनेगी? कृपया समझाएं।

देखो ऐसा है कि- प्रकृति का विरोध-प्रतिरोध करके कोई यह चाहे कि, सूक्ष्म-स्थूल का संयोजन या वियोजन शत-प्रतिशत सार्थक हो, यह उसकी भूल है, भ्रम है। आध्यात्मिक और भौतिक दृष्टि से भी प्रकृति विरोधी घटनाक्रम या यूं कहो कि संकल्प कभी भी पूर्णत: सार्थक नहीं हो सकता। इस विवादास्पद क्रम को यूं समझो कि, ब्रह्मचर्य या परमहंस की स्थिति चाहे क्षण भर की हो चाहे वर्ष भर की हो चाहे शतक की हो या उससे लम्बे अंतराल की। भई इस क्रम में पति-पत्नी भी तो जीते हैं। पता नहीं किस धर्मान्ध धर्माचार्य ने इस तरह की कठोर उक्तियों के साथ भ्रमित करने का प्रयास किया है। मैं पौराणिक आख्यानों की बात तो नहीं करता हूँ लेकिन आध्यात्मिक आधार पर इतना अवश्य कहूंगा कि वशं-परंपरा का निर्वाह करना भी एक सार्थक मानव धर्म है। इस धर्म से च्युत होकर जीवन पर्यन्त अविवाहित रहना, ब्रह्मचर्य या परमहंस होने का राग अलापना-व्यक्ति के मोक्ष या मुक्ति का रास्ता तो बन सकता है लेकिन सूक्ष्म-स्थूल से निर्मित जीव के आंतरिक सूक्ष्म का सार्थक पर्याय नहीं बन सकता। भला सोचो यह सब कितना विवादास्पद व भ्रमयुक्त लगता है कि तथाकथित लोग जो ब्रह्मचर्य या परमहंस की स्थिति में अपने को समझते हुए सूक्ष्म (आत्मा) को तमाम योनियों में भ्रमण करने की बात तो दहाड़-दहाड़ कर करते हैं लेकिन भौतिक योनियों से दूर भागते हैं, जबकि उनकी भी सृष्टि उन्हीं भौतिक योनियों के माध्यम से हुई है। ऐसे में, उन कतिपय धार्मिक स्तंभों को आध्यात्मिक दस्यु कहा जाए तो मेरी दृष्टि में ज्यादा अनुचित नहीं होगा। अरे भई एकांत में एकांत तो सभी ढूंढ लेते हैं, भीड़ में कोई एकांत ढूंढो तो आध्यात्मिक या भौतिक दृष्टि से कोई बात बने। प्रकृति के विपरीत स्थिति में रहने वाले तथाकथित लोग अपना वर्तमान जीवन एकाकी कर ही डालते हैं, इसके साथ-साथ जन्म-जन्मातंर तक अपने सूक्ष्म को इधर-उधर भरमाते-भटकाते रहते हैं। मेरी दृष्टि में, या यूं कहो भौतिक-आध्यत्मिक दृष्टि में बिना अर्द्धनारिश्वर की स्थिति प्राप्त किये व्यक्ति जो कुछ भी आध्यात्मिक या भौतिक दृष्टि से करता-धरता है वह प्रकृति या ब्रह्मांड के लिए उपयोगी हो यह आवश्यक नहीं है।

घटनाओं का पूर्व निर्धारण-?

आध्यात्मिक समस्याओं की बात उठाई हैं, बहुत अच्छा किया। क्योंकि इस क्रम में तमाम सारी विधवा स्त्रियों का वर्तमान जीवन तो नष्ट होता ही है, आगे के पुनर्जन्मों में भी उनकी आध्यात्मिक-भौतिक स्थिति सामान्य हो यह आवश्यक नहीं है। यदि हम भौतिक या आध्यात्मिक स्तर पर कर्मों के आधार पर स्त्रियों की वैधव्यता का आकलन करेंगे तो निश्चित कहीं-न-कहीं किसी-न -किसी रूप में भ्रमयुक्त हो जायेंगे। अगर कोई स्त्री युवावस्था में विधवा होती है तो उस घटनाक्रम के तहत यह भी तो सोचा जा सकता है कि उसका वह पति जो अल्पायु में मरा पूर्वजन्मों में उसका शत्रु या विरोधी रहा हो। यहां प्रश्न यह उठता है कि उस स्त्री का ही पति क्यूं मरा, वही विधवा क्यूं हुई। सामान्यत: आध्यात्मिक व भौतिक प्रक्रियाओं के अतंर्गत होता यह है कि पति-पत्नी का संबंध जन्म-जन्मांतर का होता है और आगे के जन्मों के लिए भी यह क्रम बना रहता है। कम से कम दस जन्मों तक यानी दस शतक तक दोनों का संबंध जन्म-जन्मांतर के मध्य किसी न किसी रूप में अवश्य बना रहता है।

मान लो-कोई स्त्री अल्पायु में विधवा हो गई। ऐसी स्थिति में उसके मृत पति का सूक्ष्म पहले तो जल्दी पुनर्जन्म की स्थिति में नहीं आ पाता और यदि आ भी जाता है तो वह सूक्ष्म-स्थूल का संयोजन धारण करके उस विधवा स्त्री से तब तक अलग-थलग रहता है जब तक वह अपना सूक्ष्म-स्थूल विखंडित करके मृत्योपरांत पुनर्जन्म नहीं ले लेती। इस प्रक्रिया के अंतर्गत कभी-कभी ऐसा भी होता है कि कोई स्त्री जो युवावस्था में विधवा हो गई है, अपने सूक्ष्म व स्थूल के संयोजन से तमाम घटनाक्रमों को पार करते हुए यानी मृत्यु की निश्चितता पर टेक लगाते हुए अपने जीवन काल का लम्बा समय विधवावस्था में ही बीता डालती है। यदि उसने विधवावस्था की स्थिति में अपने जीवन का साठ-सत्तर वर्ष व्यतीत कर दिया है तो उस स्थिति में उसके उस पूर्व पति के सूक्ष्म का क्या होगा जो साठ-सत्तर वर्ष पूर्व अपने स्थूल को छोड़ कर यानी मृत्योपरांत स्थूल से अलग हो गया था। ऐसे में यह भी हो सकता है कि-वह व्यक्ति पुनर्जन्म लेकर दूसरी स्त्री के साथ वैवाहिक संबंध स्थापित कर ले और अपनी पूर्व स्त्री के मरने के उपरान्त स्वयं भी मृत्यु को प्राप्त हो जाए यानी किसी घटनाक्रम के अंतर्गत अपना सूक्ष्म-स्थूल विखंडित करके सूक्ष्मावस्था में आ जाए। इस स्थिति में एक अंतराल तक के लिए पहली स्त्री का जीवन तो अपने पूर्व पति के सापेक्ष में सार्थक हो जायेगा, लेकिन दूसरी स्त्री का जीवन स्वत: वैध्वय रूप में आ जायेगा। इसी क्रम में आध्यात्मिक व भौतिक क्रियाओं-प्रक्रियाओं के अतंर्गत दो-तीन जन्मों के उपरांत उन दोनों स्त्रियों का भौतिक जीवन उस व्यक्ति से स्वत: जुड़ जाता है। ऐसे में किसी विशेष घटनाक्रम के अंतर्गत वह व्यक्ति स्वत: अनायास दो-दो-तीन-तीन स्त्रियों का पति बन जाता

है। तो इस क्रम में स्त्री या पुरुष पक्ष को जिनकी मृत्यु वैवाहिक जीवन के उपरान्त अल्पायु में हो चुकी है वे करीब दस शतक तक आध्यात्मिक-भौतिक व्यापक परिपेक्ष में इधर-उधर भटकते रहते हैं। जीव-जन्तुओं व पशु-पक्षियों में यह दस शतक का अंतराल सौ शतक तक का होता है।

उपरोक्त विवेचना के आधार पर यह निश्चित मानो कि, स्त्री का विधवा होना या पुरुष का विधुर होना, खासकर अल्पायु में जन्म-जन्मांतर के लिए अच्छा नहीं होता। आध्यात्मिक दृष्टि से ऐसी स्थित में स्त्री या पुरुष जो अल्पायु में विधवा या विधुर हो गये हैं, उनका पुन: विवाह कर देना चाहिए-वह भी एक वर्ष के अंदर। इससे लम्बा अंतराल देना भौतिक व आध्यात्मिक दृष्टि से उचित नहीं है। यदि वे दोनो पुन: किसी घटनाक्रम में विधुर या विधवा हो जाते हैं तो उनका पुन: विवाह कर देना चाहिए। हां; इस प्रक्रिया में समय का अंतराल एक वर्ष से छ: माह कर देना चाहिए। इस प्रक्रिया से मैं मानता हूं कि, हमारी-तुम्हारी तथाकथित धार्मिक मान्यताओं को थोड़ी-बहुत ठोकर तो अवश्य लगेगी, लेकिन तमाम सारे उन स्त्री-पुरुषों को जो विधवा या विधुर होकर जीवन बीता रहे हैं उनका भौतिक-आध्यात्मिक दृष्टि से जन्म जन्मांतर के लिए सार्थक कल्याण हो जायेगा। इस प्रक्रिया से मानव या अन्य योनि को सबसे बड़ा लाभ यह होगा कि बहुपत्नी-प्रथा या बहुपति प्रथा की कुपरंपराएं धीर-धीरे समाप्त होने लगेंगी और आगे चलकर एक लम्बे अंतराल के बाद यह भी संभव हो सकता है कि इस तरह की कुप्रथाएं समाज में न के बराबर दिखाई दें। हां, इस प्रक्रिया के अंतर्गत यदि कोई स्त्री-पुरुष किसी विशेष घटनाक्रम के अंतर्गत दीर्घायु में विधवा या विधुर होते हैं तो उनका सांकेतिक विवाह-पीपल, बरगद, आम, महुआ, आंवला, गूलर, आदि वृक्षों से करा देना चाहिए जिससे उनका अगला जन्म तो सार्थक हो सके। इस सार्थक बहु आयामी क्रम में भौतिक व आध्यात्मिक दृष्टि से अंतरजातिय-विवाह व स-गोत्रीय विवाह पर भी स्वत: एक सार्थक अवरोधक लग जायेगा जो देश-समाज व विश्व के लिए मानवीय दृष्टि से उपयोगी होगा।

❑ गुरूजी! आपने वैवाहिक जीवन की सार्थकता को समझाते हुए जन्म-जन्मांतर की तमाम सारी बातें कह डाली, लेकिन इसके विपरीत जो लोग जीवन पर्यन्त अविवाहित, ब्रह्मचर्य से या परमहंस की स्थिति में रहने का व्रत या संकल्प ले लेते हैं-उनकी सार्थकता आपकी दृष्टि में क्या होगी? क्या उन लोगों का सूक्ष्म, स्थूल से अलग होकर यानी मृत्योपंरात सामान्य

पैर शिथिल नहीं पड़ जाते हैं। हां, उसके अंग जब शिथिल पड़ जायेंगे तो वह तैरना बंद करके जलाश्य में डूब जायेगा। ठीक इसी क्रम में जीव सूक्ष्म-स्थूल के संयोजन से तब तक गतिशील रहता है जब तक दोनों के बीच विखंडन की स्थिति नहीं बन जाती। इस क्रम में, सबसे बड़ी विडम्बना यह है कि जब अपने प्रयासों के तहत हम हार जाते हैं तो उस घटनाक्रम में हर घटना को निश्चित मान लेते हैं और जीत जाते हैं तो उस घटना को अनिश्चित मान लेते हैं। एक उदाहरण देखो-

मान लो एक अस्पताल में चार बच्चे एक ही समय में पैदा हुए। पैदा होने का काल परिवेश सबका करीब-करीब एक जैसा रहा। जीवन के लम्बे अंतराल के बाद एक बच्चा तो नेता बन गया, दूसरा आई. एस. अधिकारी, तीसरा चोर डाकू और चौथा अकाल मृत्यु का शिकार हो गया। तो यहां तुम क्या सोचोगे। क्या उस समय की ज्योतिषिय गणना गलत थी? नहीं, ऐसी बात नहीं है। सच पूछो तो, उन चारों बच्चों के मां-बाप के संस्कार, उनका बाह्य व आतंरिक परिवेश, धार्मिक-अधार्मिक संस्कार व उनके जीवन से जुड़े असंख्य स्पष्ट-अस्पष्ट बिंदु उनके बीच हुए परिवर्तन के मुख्य कारण बन गये। हां; इन कारणों के मध्य तुम कर्म-भोगने-भुगाने की बात को भी थोड़ा-बहुत ले सकते हो, लेकिन पूर्णत: नहीं। फिर इन उपरोक्त संदर्भों के अंतर्गत धार्मिक ग्रन्थों में जो कुछ भी पढ़ा-लिखा गया है वह पूरा का पूरा सही हो यह आवश्यक नहीं है। क्योंकि ब्रह्मांड में ब्रह्म के अतिरिक्त सब का सब अपूर्ण है और कब तक अपूर्ण रहेगा यह नहीं कहा जा सकता।

❑ गुरूजी! आपने कहा कि स्थूल-शरीर बार-बार बदलता रहता है; तो यह बदलने की प्रक्रिया क्या पिछले जन्मों के कर्मों पर आधारित होती है? कृपया, इसे भी समझाएं।

देखो ऐसा है कि जन्म-जन्मातर की प्रक्रिया में जो सूक्ष्म, स्थूल से जुड़कर बार-बार भौतिक शरीर धारण करता है उसमें कर्मों का फल उसकी इस लम्बी सूक्ष्म-स्थूल के संयोजन-वियोजन की यात्रा में सहयोगी हो सकता है, एक मुख्य भूमिका का निर्वाह कर सकता है लेकिन वही प्रमुख या सब कुछ हो यह आवश्यक नहीं। क्योंकि जीव के सूक्ष्म-स्थूल के संयोजन-वियोजन के

संदर्भ में मैंने पहले भी कहा है कि-किसी व्यक्ति या जीव-जन्तु का जीवन तमाम सारे जीवन्त बिन्दुओं से घिरा रहता है। जैसे स्वामी विवेकानंद को ही ले लो; अब कर्म या कर्मफल के आधार पर इनके आध्यात्मिक व भौतिक व्यक्तित्व-कृतित्व का अध्ययन या तुलनात्मक अध्ययन नहीं किया जा सकता हैं न! उनके जन्म-जन्मांतर का कर्मफल जो भी रहा हो, पर उनके अल्प-जीवन का जो भी प्रतिफल देश-समाज और विश्व को मिला, क्या उसमें परमहंस जी की आध्यात्मिक साझेदारी नहीं थी? थी, अवश्य थी। तो ऐसे कतिपय दृष्टांत के अंतर्गत तुम सामान्य तरीके से यह नहीं कह-सोच सकते कि सब कुछ कर्म या कर्मफल पर ही आधारित होता है। हां; कर्म या उसका प्रतिफल किसी जीव के लिए विशेष उपयोगी हो यह अलग बात है।

तुलसी के इस कथन- 'परहित धर्म सरस नहीं कोऊ' पर एक विहंगम दृष्टि डालें तो लगेगा कि विश्व में न तो इससे बड़ा कार्य है और न ही कोई धर्म। हां; ऐसे कर्मों का फल जीव के सूक्ष्म-स्थूल के संयोजन-वियोजन को कभी न कभी किसी न किसी रूप में अवश्य मिलता है। लेकिन, यदि हम पौराणिक स्मृतियों के आधार पर धर्म-कर्म की व्याख्या करेंगे या करने का प्रयास करेंगे तो निश्चित मानो- कहीं-न-कही किसी-न-किसी भ्रम में अवश्य फंस जायेंगे। इसलिए हर व्यक्ति को अपना लक्ष्य-रास्ता स्वयं तय करना पड़ता है। हां; उसके कर्म-धर्म के मध्य कोई सहयोगी बन जाए यह अलग बात है। संक्षेप में बस इतना समझ लो कि जन्म-जन्मांतर का कर्म और उसका प्रतिफल कभी निरर्थक नहीं जाता। लेकिन इसके विपरीत कुकर्मों का प्रच्छालन न हो पाये ऐसा भी नहीं है । क्योंकि संकल्प-विकल्प के साथ-साथ समस्या-समाधान की भी यात्रा किसी न किसी रूप में निरंतर होती रहती है।

❑ गुरूजी! कुछ स्त्रियां जो युवावस्था में विधवा हो जाती हैं या अल्प-आयु से ही वैधव्य जीवन व्यतीत करने के लिए विवश होती हैं, क्या उन पर उनके पूर्व जन्मों के कर्मों का प्रभाव पड़ता है? गुरूजी, आपकी दृष्टि में क्या वह सब उचित है जो समाज में इन विधवाओं के साथ हो रहा है? कृपया, इस पर भी कुछ कहें ।

देखो जहां तक कर्म या कर्मफल की बात है, उससे संबंधित बहुत सारी बातें तो मैंने तुम्हें बता ही दी हैं। हां, यहां पर तुमने जो विधवाओं की भौतिक-

से निकाल कर मार दिये जाते हैं। ऐसे में तुम क्या कहोगे कि, उनको अपने कर्मों का फल भोगना पड़ेगा या पड़ रहा है।

इसी क्रम में दूसरी घटना सुनो- दिल्ली महानगरी में कुछ वर्षों पहले जैन बंधु वनस्पति घी में सूअर और गाय की चर्बी मिलाते पकड़े गये। लाखों-लाखों लोगों की धार्मिक भावनाओं को इस प्रक्रिया के अंतर्गत ठेस ही नहीं लगी बल्कि उन असंख्य लोगों ने गहरे में ग्लानि व अंत: कष्ट का अनुभव किया। तो ऐसे में तुम्हीं बताओ कि जो जैन सम्प्रदाय के लोग सूर्यास्त के बाद भोजन नहीं करते, मुंह पर पट्टी बांधकर घुमा करते हैं- उनके अनुयायी इस दुष्कर्म में लिप्त पाये गये। वर्तमान में तो उन्होंने अपने बुरे कर्मों का न तो कोई प्रायश्चित किया न ही फल भोगा।

उपरोक्त दोनों घटनाओं को लेकर यह भी तो सोचा जा सकता है कि इन धर्म-पिशाचों ने अपने बुरे कर्मों के प्रभाव को दबाने-छिपाने के लिए बहुत से ऐसे धर्म गुरूओं का सानिध्य प्राप्त कर लिया है जो उनके कुप्रभावों को नष्ट करते जा रहे हैं। यद्यपि, उनके इन असंख्य कुकर्मों का फल उन धार्मिक गुरूओं को भी थोड़ा-थोड़ा भोगना होगा। फिर इस क्रमिक घटनाक्रम में राम-कृष्ण के साथ-साथ गौतम बुद्ध, परमहंस, ईसा मसीह व मोहम्मद साहब आदि धार्मिक पैगंम्बर भी तो नहीं बच पाये। मेरा ख्याल है कि, इन महापुरूषों व अवतारी विशिष्ठ लोगों के आदि-अंत के मध्य तुम्हारी जिज्ञासा कहीं न कहीं अवश्य शांत हो जायेगी।

फिर इस विवादास्पद क्रम को तुम दूसरी तरह से भी सोच सकते हो- हिमालय की कंदराओं में या चित्रकूट के जंगलों में सैंकड़ों साधक दो-दो ढाई-ढाई सौ वर्ष से पड़े हुए हैं यानी उनके सूक्ष्म-स्थूल का संयोजन जीवंत रूप में कार्यरत है। तो क्या सत्तर-अस्सी साल की आयु में- प्रयाग, काशी, मथुरा, अयोध्या आदि धार्मिक नगरों में मरना आवश्यक है? फिर विदेशों में भी तो लोग सौ-सौ डेढ़-डेढ़ सौ साल तक जीवित रहते हैं। जब मृत्यु की निश्चितता-अनिश्चितता के बीच इतना बड़ा भ्रम छिपा हुआ है तो कर्म भोगने-भागने के मध्य कितना बड़ा भ्रम न छिपा होगा। गीता का कर्म-योग तुम्हें सत्य मार्ग पर चल कर कार्य करने के लिए एक रास्ता तो दे सकता है लेकिन वह जीव के 'जन्म-मृत्यु-जन्म' के मध्य या बाह्य रूप में जुड़े हुए असंख्य बिन्दुओं का समाधान हो ऐसा आवश्यक नहीं है। वस्तुत: होता यह है कि हर धर्म-सम्प्रदाय

के धार्मिक ग्रंथ या उनका आध्यात्मिक चिंतन हमें अखंड ब्रह्म तक पहुंचने का थोड़ा बहुत मार्ग तो अवश्य प्रशस्त करता है लेकिन आदि से अंत तक वह रास्ता सीधा-सीधा चला जाये यह आवश्यक नहीं है। फिर ईश्वर की प्रदत्त दो वस्तुएं कभी समान नहीं होती हैं।

निश्चित कर्म भोगने-भोगाने के लिए हमारे तथाकथित धर्माचार्यों ने जो पट्टा लिख रखा है वही धर्म के विनाश की सबसे बड़ी सीढ़ी है और जिस दिन वे धर्मभीरू धर्माचार्य इस तरह का पट्टा लिखना बंद कर देंगे; धर्म को समझने की कोशिश करेंगे उसी दिन से यह निश्चित मानो कि, मृत्यु जैसे व्यापक परिवर्तन के मध्य उत्पन्न भय से बहुत से लोग भयमुक्त तो होंगे ही, साथ-साथ मृत्यु की निश्चितता को अनिश्चितता में परिवर्तित करने के लिए तमाम सारे उपक्रमों को ढूंढे-खोजेंगे। क्योंकि अभी-अभी मैंने कहा कि, मृत्यु एक व्यापक परिवर्तन है जिसमें सूक्ष्म-स्थूल जीव से अलग-थलग हो जाते हैं। ऐसे में; कर्मों के भोगने-भोगाने वाले तथ्य बहुत ज्यादा प्रमाणित नहीं बन पाते। हां, थोड़ा बहुत हो यह अलग बात है।

धर्म जो है, कर्मफल को घटाने-बढ़ाने के लिए उपयोगी हो सकता है। पर हम पहले से धर्म की आड़ में यह पट्टा नहीं लिख सकते हैं कि आपका जन्म किसी ऑफिस में क्लर्की करने के लिए हुआ है। तीन-तीन बच्चों को पैदा करने के लिए हुआ है या गलत-सही ढंग से पैसा कमाने के लिए हुआ है। हां; किसी घटनाक्रम के अंतर्गत फंस कर कोई यह सब कार्य करे; यह अलग बात है। सच पूछो तो मनुष्य या किसी भी योनि में जीव का जन्म सूक्ष्म-स्थूल के संयोजन से एक निश्चित-अनिश्चित दूरी तक आध्यात्मिक और भौतिकता के मध्य कुछ तथाकथित कर्मों के साथ यात्रा करने के लिए होता है। हां; इस यात्रा के अंतर्गत जन्म-जन्मांतर मृत्यु या सूक्ष्म-स्थूल के विखंडन जैसे सत्यापित तथ्यों से जीव किसी न किसी घटनाक्रम में जुड़ता-टूटता रहता है। इस लम्बी यात्रा में वह अपने या दूसरे द्वारा आरोपित-प्रत्यारोपित कार्यों को घटाने-बढ़ाने के साथ-साथ कुछ न भोगता-भुगाता रहता है। यद्यपि मानवहत्या या गौ हत्या जैसे कुकृत्यों का प्रायश्चित जन्म-जन्मांतर तक जीव के सूक्ष्म-स्थूल के संयोजन-विखंडन के मध्य लम्बे अंतराल तक चलता रहता है। जैसे मान लो- कोई व्यक्ति नदी में तैर रहा है तो वह तब तक तैरता रहेगा जब तक उसके हाथ-

घटनाक्रम के तहत किसी व्यक्ति के स्थूल का सूक्ष्म से अलग-थलग हो जाना, या मृत्यु का पर्याय बन जाना कभी-कभी दुखद-सुखद अनुभुति का मिश्रण बन जाता है।

सामान्यत: स्थूल के जीर्ण-शीर्ण होने पर किसी वृद्ध-असहाय व्यक्ति के आंतरिक व बाह्य शरीर से जब किसी घटनाक्रम के अंतर्गत सूक्ष्म-स्थूल का विखंडन होता है यानी मृत्यु होती है, तो उसके कुछ क्षण पूर्व से लेकर छ: माह पूर्व तक निरंतर किसी न किसी रूप में सूक्ष्म-स्थूल के विखंडन का संकेत उसे मिलता रहता है, यानी मृत्यु का। तमाम सारे संकेतों में- मुख्यत: कान में भर्राहट की आवाज, नाक के ऊपरी कोर का सीधे दोनो आंखों से दिखाई न देना, बार-बार शरीर के मुख्य अंगों पर क्रमश: तीव्र व मंद गति से स्पंदन, बीच-बीच में कभी-कभी जिव्हा द्वारा खट्टे-मीठे का उचित अनुभव न कर पाना, कामीय भावनाओं में तीव्रता से उथल-पुथल मच जाना व स्वप्न आदि के माध्यम से निरंतर मृत्यु की संभावना अनिश्चितता के बीच निश्चित होती रहती है। लेकिन इसके विपरीत अकाल मृत्यु के अंतर्गत इस तरह के संकेत न के बराबर मिलते हैं। क्योंकि घटनाक्रम के अंतर्गत व्यक्ति जिसकी अकालमृत्यु निश्चित होने वाली है वह किसी न किसी भौतिक या आध्यात्मिक कारणों के तहत इतना प्रभावी हो जाता है कि, वह करीब-करीब मृत्यु के सभी संकेतों को जानने-समझने में विवश व असहाय बन जाता है। जैसे; मान लो, दो व्यक्तियों के बीच किसी घटनाक्रम में कोई घातक संघर्ष आरंभ हो गया उसी क्रम में एक ने दूसरे की हत्या कर दी, तो इन दोनों व्यक्तियों के मध्य मृत्यु के संकेत इतने दब-खप जाते हैं कि न तो हत्या करने वाले को पूर्व संकेत मिल पाता है और न ही भुक्तभोगी को। स्वप्न आदि के माध्यम से जो थोड़ा बहुत पूर्व संकेत मिलता भी है वह भी घटनाक्रम की भूमिका के तहत सामान्यत: प्रभावी नहीं हो पाता। हां; अध्यात्म से जुड़ा कोई सशक्त साधक अपनी अदृश्य शक्तियों के माध्यम से घटनाक्रम के पूर्व संकेतों को जान-पहचान ले और घटनाक्रम के प्रभाव को इतना प्रभावहीन कर दे कि, जिससे मरने वाला मरने से बच जाये और मारने वाला मारने के दोष से वंचित हो जाये- यह भी संभव हो सकता है।

❑ गुरूजी! एक व्यक्ति का जीवन किस तरह पूर्वजन्म के अच्छे-बुरे कर्मों द्वारा प्रभावित होता है ? कृपया, समझाएं।

देखो ऐसा है-एक आदमी का जीवन सैंकड़ों बिंदुओं से आकर जुड़ता

है। जिस तरह से किसी सूक्ष्म-स्थूल के संयोजन -विखंडन से मृत्यु जुड़ती है उसी तरह से जन्म भी जुड़ता है। अगर मृत्यु हुई है तो फिर जन्म भी होगा। और अगर उस जीव के पास अच्छे कर्मों का संचय है तो उसे उसका अच्छा प्रभाव मिलेगा। उसी तरह से बुरे कर्मों का बुरा प्रभाव मिलेगा। लेकिन कभी-कभी ऐसा होता है कि कर्म उसके बुरे जरूर थे किंतु उसे एक ऐसे व्यक्ति का सानिध्य मिल गया जिससे उसके बुरे कर्म निरंतर प्रभावहीन होते चले गये। और बुरे कर्म प्रभावहीन होने से वह सात्विक परंपरा में आ जायेगा। फिर उसके लिए यह जरूरी नहीं है कि उन कर्मों का प्रभाव उस पर पड़े ही। लेकिन ऐसा कम ही होता है। क्योंकि भौतिक परंपरा में कर्म करने वाले को उसका प्रभाव भोगना ही पड़ता है।

❑ गुरूजी! कुछ धर्मग्रंथों में कहा गया है कि कुछ निश्चित कर्मफलों को भोगने की सीमा तक के लिए यह जीवन दिया जाता है-कर्मफल का यह सिद्धांत कहां तक ठीक है? कृपया, स्पष्ट करें।

अगर धर्मग्रंथों में ऐसा कहा गया है तो यह सब बातें निश्चित रूप से उलझावपूर्ण स्थिति पैदा करती हैं। और जहां तक निश्चित कर्मों को भोगने की बात तथाकथित विद्वान कहते हैं तो भई मैंने यह पहले ही कह दिया है कि मृत्यु को निश्चित नहीं माना जा सकता। हां; किसी घटनाक्रम के अंतर्गत अनिश्चितता के मध्य निश्चित हो जाए यह अलग बात है। तो तुम्हीं सोचो कि जब मृत्यु की निश्चितता-अनिश्चितता के मध्य एक भ्रम छिपा हुआ है तो कर्मों को भोगने-भागने का झंडा लेकर भीड़ में चलना कितना उचित है? इस संदर्भ में तुम्हें मैं एक उदाहरण देता हूं जिससे तुम्हारा यह भ्रम भी काफी हद तक दूर हो जायेगा- जैसे कुछ प्रमुख धनाढयों ने धर्म की आड़ में सैंकड़ों-हजारों बड़े-बड़े मंदिरों का निर्माण करवाया, और तमाम धर्मभीरुओं को उन्होंने कुत्ते-बिल्ली की तरह सोने की जंजीर से बांध कर रखा है। हां; इस क्रम में उन धर्म-पिशाचों ने व्यवस्था का जम कर शोषण किया है। धर्म की आड़ में अच्छे-बुरे कर्मों को तो छोड़ो- यहां तक की बंबई, कलकत्ता जैसे महानगरों में इनके बड़े-बड़े स्लॉटर-हाउस (कसाईबाडा) हैं। जहां पर सात-सात आठ-आठ माह के बछड़े गाय के पेट

जाता है। हां; इस पुनःजन्म की प्रक्रिया के अन्तर्गत वह अपना सारा का सारा विगत अतीत विस्मृत कर देता है। जिससे उसे नया जीवन जीने में कोई विशेष कठिनाई न हो। वैसे तुम्हीं, बताओ, यह व्यापक परिवर्तन हुआ न ! पर, हम अपनी अज्ञानतावश तब तक उस व्यक्ति की मृत्यु को लेकर रोते-गाते रहते हैं जब तक उसे हर दृष्टि से विस्मृत नहीं कर लेते।

चाहे वह व्यक्ति किसी धर्म-मजहब का हो, मृत्यु जैसे व्यापक परिवर्तन के उपरांत उसका सूक्ष्म पुनः किसी न किसी रूप में एक भ्रूण से जुड़कर एक नई पहचान तो बनायेगा ही। हां उसके आगे हिन्दू-मुस्लिम, सिख-ईसाई आदि-आदि भी जोड़ दो- क्या फर्क पड़ता है।

❑ गुरूजी! अपवाद रूप में कोई सूक्ष्म यदि स्थूल से अलग होकर पुनः जुड़ जाए तो उसे क्या कहा जायेगा- कृपया, इसे स्पष्ट करें ?

देखो ऐसा है कि, सामान्यतः ऐसा होता नहीं है। अपवाद के रूप में कभी-कभार कुछ सूक्ष्म-स्थूल के संयोजन-वियोजन के मध्य किसी विशेष घटनाक्रम के तहत इस तरह की घटना घटित हो जाती है। जैसे मान लो- 'किसी व्यक्ति की मृत्यु हो गई। लोग उसके पार्थिव शरीर को यानी स्थूल को अंतिम संस्कार हेतु श्मशान या कब्रिस्तान में ले जा रहे हैं। उस शव यात्रा या परेत-यात्रा के मध्य वह सूक्ष्म सामान्यतः कभी-कभी परिक्रमा करता है। उसी परिक्रमा के अंतर्गत विशेष परिस्थितियों में वह अपने पूर्व पार्थिव शरीर से आकर जुड़ जाता है और वह मरा हुआ व्यक्ति पुनः सूक्ष्म-स्थूल के संयोजन से जीवित हो उठता है। इस प्रक्रिया का क्रम तेरह सौ योजन के अंदर ही होता है उसके बाहर किसी भी स्थिति में संभव नहीं है। मेरी दृष्टि में इस तरह की घटनाओं के पीछे जो सबसे बड़ा रहस्य है वो यह है कि, उस व्यक्ति के सूक्ष्म-स्थूल का विखंडन पूर्णतः यानी शत-प्रतिशत नहीं हो पाया होगा। इसी वजह से वह भौतिक अवस्था में मरा हुआ व्यक्ति पुनः जीवित हो उठा।

कभी-कभी ऐसा भी होता है कि, मान लों किसी व्यक्ति को सर्प ने काट लिया। चिकित्सकों व लोगों ने उसे मृत घोषित करके नदी या किसी जलाश्य में बहा दिया। जल में उस व्यक्ति का पार्थिव सा दिखने वाला स्थूल कुछ दिनों

बाद पुनः सजीव हो उठता है। यानी उसके सूक्ष्म-स्थूल का संयोजन पुनः बन जाता है। तो ये निश्चित मानो कि इस आध्यात्मिक प्रक्रिया में भी उसके सूक्ष्म-स्थूल का विखंडन पूर्णतः नहीं हो पाया था। या इस घटनाक्रम के अंतर्गत तुम यह भी सोच सकते हो कि, प्राणवायु उसके ब्रह्मांड के किसी जागृत तंतु से जुड़ा हुआ था। विषाक्त स्थूल होने के कारण वह मृत्यु सदृश्य हो गया परन्तु मरा नहीं। उसके असंख्य तंतुओं ने आंतरिक विष को जल में विलीन कर दिया और वह जागृत अवस्था में आ गया। इस प्रक्रिया के अंतर्गत भी कभी-कभी आदमी मरणोपरान्त भी (भौतिक दृष्टि से) पुनः जीवित हो उठता है।

लेकिन यदि मरे हुए व्यक्ति का पार्थिव शरीर अग्नि को समर्पित कर दिया जाता है या पंच-तत्व में विलीन कर दिया जाता है तो स्थूल-सूक्ष्म के संयोजन की कोई संभावना नहीं बनती।

❑ गुरूजी! फिर वास्तविक मृत्यु क्या है-कृपया, इसे स्पष्ट करें?'

मेरी दृष्टि में, सच पूछो तो मृत्यु एक सुखद अनुभूति है। एक सामान्य जीवन के अंतर्गत यदि व्यक्ति निष्कपट है, निश्छल है, कर्म के प्रति उसकी आस्था है, परहित की भावना से ओत-प्रोत है और बहुत सारे मानवीय गुणों से वह जुड़ा हुआ है तो मृत्यु उसके लिए एक सुखद अनुभूति है। उसके आंतरिक सूक्ष्म के लिए ऐसा परिवर्तन है जो मुक्ति या एक ऐसे नये जीवन से उसे जोड़ सकता है जो भौतिक-आध्यात्मिक दृष्टि से यश या महानता का निश्चित द्योतक होगा।

वैसे भी, एक व्यक्ति अपने जर्जर, रोगग्रस्त शरीर को (स्थूल) ढोते-ढोते जब थक-हार जाता है तो उसे भौतिक-आध्यात्मिक दृष्टि से एक नये परिवर्तन की आवश्यकता होती है। अब तुम ही सोचो कि उस जर्जर, रोगग्रस्त व्यक्ति का जिसने जीवन का लम्बा अंतराल मनुष्य रूप में जी-भोग लिया है- बिना सूक्ष्म-स्थूल के विखंडन के यानी मृत्यु के उसे नया जीवन या नया आयाम कैसे मिलेगा। ये तो हुआ उस सूक्ष्म-स्थूल के संयोजन का विखंडन जो किसी अंतिम घटनाक्रम के तहत जहां उसका स्थूल अब आगे यात्रा करने में असमर्थ था। उस घटनाक्रम में अनिश्चितता के मध्य मृत्यु यानी सूक्ष्म-स्थूल के मध्य एक निश्चितता तय हुई। लेकिन इसके विपरीत अकालमृत्यु या किसी विशेष

[मृत्यु की निश्चितता-अनिश्चितता के मध्य कालचक्र के सापेक्ष में जीव की गति का चक्रीय विधान क्या होगा? इस विवादास्पद प्रकरण के अंतर्गत-'मृत्यु और कर्मफल' विषय से सम्बंधित प्रश्नों के समाधान हेतु श्मशान साधक 'अज्ञान' जी से दिनांक: 17 जून 1992 (सांय) को लिए गये लम्बे साक्षात्कार का प्रमुख अंश प्रस्तुत है ।]

❑ गुरूजी! अब मैं आपसे यह जानना चाहता हूं कि वास्तव में मृत्यु क्या है? हृदय गति का, श्वास का रूक जाना या शरीर का ठंडा हो जाना ही क्या मृत्यु है- कृपया, इसे समझाएं ?'

देखो मेरी दृष्टि में मृत्यु एक सुखद अनुभूति है। सूक्ष्म-स्थूल के बीच एक ऐसा परिवर्तन है जो सूक्ष्म को नये आयाम में जाने के लिए प्रेरित करता है। या यूं समझो कि, सूक्ष्म इस सुखद प्रक्रिया के अंतर्गत स्थूल से अलग होकर एक नये स्थूल से जुड़ने के लिए एक सुनहला अवसर पाता है।

जहां तक हृदय गति का या श्वास के रुक जाने को एकदम से मृत्यु मान लिया जाये, यह शत-प्रतिशत आवश्यक नहीं है। क्योंकि कभी-कभी ऐसा होता है कि, भुक्तभोगी व्यक्ति की प्राणवायु जाकर ब्रह्मांड में अटक जाती है। व्यक्ति की खोपड़ी को भी ब्रह्मांड कहते हैं। उसकी उस स्थिति से जब हम उस व्यक्ति को नहीं बचा पाते हैं। तो अंतत: उस व्यक्ति का सूक्ष्म मृत्यु या सूक्ष्म-स्थूल के बीच व्यापक परिवर्तन से जुड़ जाता है। फिर पता नहीं क्यों लोग इस व्यापक परिवर्तन से घबराते हैं या दुखी होते हैं । सच पूछो तो; उस व्यक्ति के शरीर के सूक्ष्म को मन भर विकृत स्थूल के बोझ से क्षण भर में मृत्यु के माध्यम से मुक्ति मिल गई। तो यहां पर दुख या प्रलाप का मेरी समझ से कोई औचित्य नहीं है। लेकिन भौतिक जगत में मृत्यु जैसे व्यापक परिवर्तन के अन्तर्गत लोगों के द्वारा दुख व्यक्त करना या प्रलाप करना भी सार्थक इसलिए बन जाता है कि उसी क्रम में उस सूक्ष्म के निमित्त कर्मकांडी स्त्रोत का कोई न कोई आधार बनता है। क्योंकि मृत्यु सूक्ष्म और स्थूल के बीच एक ऐसा परिवर्तन है जो उस स्थूल को पुन: नहीं जोड़ सकता। जैसे मान लो- कोई एक आदमी है। अब यहां पर सूक्ष्म-स्थूल का जुड़ाव उस आदमी के रूप में है। उस आदमी की मृत्यु के उपरान्त सूक्ष्म उसके स्थूल से अलग हो जायेगा और उसका स्थूल मात्र पार्थिव बनकर रह जायेगा। यहां पर जो परिवर्तन होगा उसकी गणना न तो भौतिक परिवर्तन में होगी न ही रासायनिक परिवर्तन के अंतर्गत। हां; इस परिवर्तन को आध्यात्मिक प्रक्रिया के अंतर्गत लिया जा सकता है। इस व्यापक परिवर्तन के अंतर्गत वह सूक्ष्म असंख्य योनियों की यात्रा करने के उपरान्त किसी के गर्भ में जाकर नया स्थूल या नया शरीर प्राप्त कर लेता है। वह सूक्ष्म, स्थूल के साथ जुड़कर प्रसव पीड़ा के उपरान्त एंक नई पहचान के रूप में पृथ्वी पर पुन: आ

में वह अन्य विरोधी सूक्ष्मों से चाहे-अनचाहे अनायास जुड़ जाता है। ऐसी स्थिति में उसका भ्रम व भटकाव इतना तीव्र हो जाता है जिससे वह सूक्ष्म अपनी पूर्व यात्रा का विस्मरण तक कर जाता है। तुम्हीं सोचो, ऐसी स्थिति में हम तेरह सौ योजन के पूर्व की यात्रा को एकदम से जंगल का राज्य कैसे मान लेंगे। यह बात दूसरी है कि हर सूक्ष्म को यह प्राथमिक यात्रा स्वयं तय करनी पड़ती है। हां; इसको गतिशील बनाने के लिए भौतिक जीवन के अंतर्गत उस सूक्ष्म के निमित्त किया गया त्रयोदशाः संस्कार या चालीसवां आदि उपयोगी सिद्ध हो सकता है।

मृत्यु और कर्मफल

तब तक भौतिक दृष्टि से परेशान करता रहेगा जब तक वह भी अपने स्थूल-सूक्ष्म के संयोजन से अलग होकर उसके सूक्ष्म से जुड़ नहीं जायेगा। इसी क्रम में दूसरी घटना बताता हूं-मान लो एक प्रेमी-प्रेमिका या पति-पत्नी हैं। किसी दुर्घटना में दोनों की अकाल मृत्यु हो गई, तो यह निश्चित मानो कि उन दोनों का सूक्ष्म ब्रह्मांड में भिन्न-भिन्न स्थितियों में भटकता रहेगा और अपने विगत भौतिक जीवन के अतिरिक्त भाग की पूर्ति के लिए किसी न किसी को अपना माध्यम अवश्य बनायेगा। हां, यह बात दूसरी है कि उसके घेरे में कौन स्त्री-पुरूष आ फंसता है।

उपरोक्त दोनों उदाहरणों से तुम इतना तो समझ ही गये होगे कि, मानव या जीव-जन्तु की योनि में किसी व्यक्ति या जीव-जन्तु का किसी घटनाक्रम के अन्तर्गत आकस्मिक विनाश उसके सूक्ष्म को कितना भटकाता-भरमाता है। यहीं नहीं; कभी-कभी तो उस जीव के सूक्ष्म (आत्मा) का पुनर्जन्म इतना कठिन व जटिल हो जाता है कि, उसकी पूर्ति के हेतु उस सूक्ष्म को हजारों-हजारों वर्ष तक भिन्न-भिन्न योनियों में भटकना पड़ता है। तब कहीं जाकर उसका पुनर्जन्म हो पाता है।

❑ गुरूजी! आपका यह कहना कि, आकाशीय-शक्तियां एक आत्मा को जबरन बंधक बना लेती हैं, लेकिन मैंने तो सुना है कि ऊपर भी एक व्यवस्था है तथा छोटी शक्तियों के ऊपर बड़ी शक्तियों का नियंत्रण रहता है जो कि भिन्न-भिन्न लोकों में वास करती हैं। तो ऐसी व्यवस्था के रहते किसी को जबरन बंधक कैसे बनाया जा सकता है । कृपया, इसे समझाएं?

'भई पहले वह आत्मा (सूक्ष्म) तेरह सौ योजन की तत्कालिक यात्रा तो पूरी करे। तब कहीं जाकर उन विशिष्ट शक्तियों से उसका संबंध हो पायेगा। सामान्यत: होता यह है कि सूक्ष्म द्वारा तेरह सौ योजन की यात्रा के पूर्व ही उसको किसी न किसी विरुद्ध शक्ति का बंधक बन जाना पड़ता है। इस प्रक्रिया को भौतिक स्तर पर यूं समझो- मान लो कोई एक ऐसा व्यक्ति है जो भौतिक दृष्टि से ईमानदार, कर्मशील व स्पष्ट वक्ता है। कुछ अपरिहार्य कारणों से उसका

किसी से वाद-विवाद हो जाता है, वह एक घटनाक्रम का रूप ले लेता है। उसी घटनाक्रम में पुलिस उसे थाने में ले जाकर बंद कर देती है और भौतिक स्वार्थों के तहत तमाम धाराओं के अंतर्गत उस पर कई झूठे आरोप लगा दिये जाते हैं। जबकि ऊपरी व्यवस्था के कर्णधार अच्छी तरह जानते हैं कि वह ईमानदार कर्मठ व्यक्ति है। यह सब जानते हुए भी यह कर्णधार उसकी उचित व्यवस्था व न्यायोचित समाधान नहीं कर पाते क्योंकि वह निचली व्यवस्था द्वारा दोषी सिद्ध हो चुका है। ऐसे में तुम क्या करोगे? ठीक इसी तरह कभी-कभी आध्यात्मिक परिवेश में भी सूक्ष्मों के साथ इसी घटनाक्रम के तहत कुछ ऐसा घट जाता है जिसके अंतर्गत वर्षों तक उसे बंधक के रूप में इधर-उधर भटकना पड़ता है। हो सकता है इसके पीछे जन्म-जन्मातंर का भी कोई कारण आड़े आता हो।'

❑ गुरूजी! इसका अर्थ तो यह हुआ कि तेरह सौ योजन के पहले जंगल का राज्य है?

एकदम से जंगल का राज्य तो नहीं कहा जा सकता क्योंकि इसी प्रक्रिया से गुजर कर या यात्रा करके तमाम सूक्ष्म पुनर्जन्म के उपरान्त मानव योनि या अन्य योनियों में जन्म तो लेते ही हैं। हां, जो इस प्रक्रिया के अंतर्गत बंधक बन जाते हैं या फंस जाते हैं उन्हें तो भटकना ही पड़ता है। फिर यह तेरह सौ योजन की यात्रा प्रत्येक सूक्ष्म को अपने ही बल पर करनी पड़ेगी। यद्यपि यात्रा बहुत कठिन नहीं है । अगर किसी व्यक्ति का कर्म-धर्म अपने भौतिक जीवन में प्रकृति विरोधी नहीं रहा, तो मृत्युपरांत उसके सूक्ष्म के लिए यह यात्रा कठिन नहीं बल्कि बहुत आसान है। अच्छे कर्म वाले के लिए सामान्यत: कोई ऐसी रुकावट नहीं आती जिससे उसका सूक्ष्म इधर-उधर लम्बे अरसे तक भटके। लेकिन अगर किसी व्यक्ति ने अपने भौतिक जीवन को बहुत नाटकीय ढंग से जीया-भोगा है तो मरने के बाद आप क्या सोचते हो कि वह सूक्ष्म रूप में सीधे स्वर्ग पहुंच जायेगा, या उसे जन्नत मिल जायेगी? कभी-कभी होता यह है कि व्यक्ति भौतिक-आध्यात्मिक भ्रम के तहत अपना पूरा का पूरा जीवन गुजार देता है। ऐसे में मृत्यु के उपरान्त उसके सूक्ष्म को भटकाव या भ्रम की स्थिति से किसी न किसी रूप में जुड़ना पड़ सकता है। कभी-कभी तो इस भटकाव की स्थिति

❑ गुरूजी! पुनर्जन्म के ही संदर्भ में, आत्मा कई बार नया जन्म ग्रहण नहीं कर पाती और लम्बे समय तक उसे इधर-उधर भटकना पड़ता है। उस लम्बे अन्तराल में उसके साथ क्या-क्या बीतता है और उसके भटकाव के मुख्य कारण कौन-कौन से होते हैं-कृपया, विस्तार से समझायें?

यह तुमसे किसने कहा कि-आत्मा नया जन्म नहीं ले पाती? देखो, नया जन्म या पुनर्जन्म तो सूक्ष्म(आत्मा) का कभी न कभी तो होता ही है। हां; कभी-कभी उस सूक्ष्म का नया जन्म या पुनर्जन्म होने में सैंकड़ों-हजारों वर्ष लग जाते हैं।

इसी संदर्भ में, मैं तुम्हें एक शोधपरक विगत घटनाक्रम का संक्षिप्त वृतांत सुनाता हूं जो वर्षों पहले मेरे परा-संबंधी शोधकार्य से जुड़ी हुई थी-

'पन्द्रह-सोलह वर्ष पूर्व-मैंने एक बहुत पुराने ब्रह्म-प्रेत का पुनर्जन्म कराने का शोधपरक प्रयास किया। कालचक्र के सापेक्ष में, यह शोधपरक प्रयास मैंने कामाख्या से किया था। इस शोधपरक प्रयास में कोई विशेष व्यवधान न आने पाये, इसलिए मैंने श्मशान को मुख्य स्त्रोत बनाया। लेकिन सावधानी बरतने के उपरान्त भी एक ऐसा व्यवधान आ गया जिसे निर्दयतापूर्वक दूर करना मुझे धर्म संगत न लगा। घटना कुछ इस प्रकार हुई कि-मेरे द्वारा तेरह सौ योजन की ऊंचाई से किया गया प्रयास चाहे-अनचाहे कामाख्या के एक वृद्ध अघोर साधक के आध्यात्मिक क्षेत्र से जाकर टकरा गया। या यूं कहो कि उस पर अनायास उस विध्वंसक साधक की दृष्टि पड़ गयी। उसने स्वभाववश उस ब्रह्म प्रेत को जिसका मैं पुनर्जन्म करा रहा था, उसे बंधक बना लिया। सूक्ष्मीय गति से समझाने-बुझाने के उपरान्त भी उसने उस सूक्ष्म को अपने बन्धन से मुक्त नहीं किया। लगभग दो वर्ष बाद जब उस अघोर साधक की मृत्यु हुई, तब कहीं जाकर वह ब्रह्मप्रेत उसके सूक्ष्म-स्थूल के संयोजन से तो मुक्त हो गया, लेकिन सूक्ष्म से मुक्त नहीं हो पाया। अंतत: धार्मिक विवशता के अंतर्गत मुझे उन दोनों सूक्ष्मों का पुनर्जन्म करवाना पड़ा। क्योंकि यदि मैं ऐसा न करता तो मेरे ऊपर आध्यात्मिक दृष्टि से धार्मिक अवहेलना का आरोप निश्चित रूप से लगता। जबकि भौतिक जीवन में उस अघोर साधक ने मेरे साथ शत्रुवत व्यवहार किया था।'

इस विगत शोधपरक प्रसंग से, तुम बस इतना समझ लो कि, 'जन्म-मृत्यु-जन्म' के बीच किसी भी घटनाक्रम में सूक्ष्म-स्थूल के संयोजन के साथ जो घटित होता है उसके पीछे कोई न कोई ऐसा कारण अवश्य होता है जो उसके सनय (पुराना) संदर्भों से कहीं न कहीं जुड़ता है। क्योंकि कारण के बिना किसी भी घटनाक्रम का विधान ही नहीं बनेगा। अब जैसे मानो-किसी व्यक्ति की असमय में मृत्यु हो गई और उसका सूक्ष्म, स्थूल से अलग होकर भिन्न-भिन्न योनियों में भ्रमण करने के लिए निकल पड़ा। इस प्रक्रिया के अंतर्गत यह निश्चित मानो कि कोई न कोई अवरोध अवश्य आयेगा, जो उसके सूक्ष्मीय गति में अवरोध का कारण बनेगा। वह अवरोध दशक-शतक से लेकर हजारों वर्ष का भी हो सकता है। उसके इस लम्बे अंतराल के मध्य उस अवरोधक की भूमिका महत्वपूर्ण हो जाती है। अवरोधक की सूक्ष्मता और विराटता के आधार पर उस सूक्ष्म को भटकाव का समय तब तक गुजारना पड़ता है जब तक वह भी सूक्ष्मीय विकृतियों के तहत सूक्ष्मता से विराटता का रूप धारण नहीं कर लेता। यहां पर मेरे कहने का तात्पर्य यह है कि, अकाल मृत्यु (विशेषकर जलने, डूबने की दुर्घटना या आत्महत्या आदि से) के अंतर्गत व्यक्ति - मानव या जीव-जन्तु का सूक्ष्म जो स्थूल से अलग-थलग होकर पुनर्जन्म के निमित्त सूक्ष्मीय यात्रा आरंभ करता है वह कहीं न कहीं किसी न किसी रूप में अवरोधित होकर एक ऐसा रूप ले लेता है जो अपने विपरीत योनि से जुड़कर या उसको आवेशित या उत्तेजित करके उन भौतिक संसाधनों की पूर्ति तब तक करता रहता है जब तक वह इधर-उधर स्वत: या अन्य कारणों से भटकता रहता है। हां, बीच-बीच में वह भ्रमयुक्त सूक्ष्म पीपल, बरगद, नीम, गूलर, आंवला, बबूल, पाकड़, महुआ आदि पेड़ों पर या सूनसान स्थानों पर विश्राम हेतु तब तक पड़ा रहता है जब तक उपभोग के लिए उसे नया शरीर नहीं मिल जाता। इस विवादास्पद प्रकरण के संबंध में मैं दो-एक ऐसे उदाहरण देता हूं जिससे भटकाव की यह स्थिति और ज्यादा स्पष्ट हो जायेगी -

मान लो, एक प्रेमी-प्रेमिका हैं। हां, किसी कारणवश उनका वैवाहिक संबंध नहीं हो पाया। बल्कि इसके विपरीत उस व्यक्ति की प्रेमिका का विवाह सामाजिक दबाव या अन्य कारणों से कहीं दूसरी जगह हो गया। और इस अलगाव की स्थिति को न संभाल पाने के कारण किसी घटनाक्रम के तहत उसने आत्महत्या कर ली। उस घातक घटनाक्रम के उपरान्त उसका सूक्ष्म निश्चित रूप से भटकाव की स्थिति में आ जायेगा। और वह अपने पूर्व प्रेमी या प्रेमिका को

प्रकार में मूल अन्तर तो नहीं होगा न। ठीक इसी तरह सूक्ष्म भी स्थूल के संयोजन से शरीर धारण करता है और उसके जीर्ण-शीर्ण होते ही उससे अलग-थलग हो जाता है और अन्य स्थूल के संयोजन से नया शरीर धारण कर लेता है। तो यहां पर सूक्ष्म का ह्रास कहां हुआ?

जैसे-मान लो, किसी मानव शरीर का कालचक्र के सापेक्ष में सूक्ष्म-स्थूल अलग-अलग हो गया। यानी उसकी मृत्यु हो गयी। ऐसे में, उस जीव का सूक्ष्म आकाश-पाताल और पृथ्वी के मध्य किसी लोक आयाम के अन्तर्गत भ्रमण करने लगेगा या किसी अन्य जीव के प्रबल सूक्ष्म के सापेक्ष में चक्कर काटेगा। कभी-कभी तो वह सूक्ष्म वायुमंडल में तेरह सौ योजन के नीचे ही वर्षों तक पड़ा रहता है। संभवत: इसी विश्वास में कि कभी किसी के माध्यम या सहयोग से पुनर्जन्म हो जायेगा। तो संक्षेप में, बस इतना समझ लो कि-सूक्ष्म का मूल बिन्दू सूक्ष्म ही होगा। फिर इसके ह्रास का प्रश्न ही नहीं उठता।

❑ गुरूजी! धर्म ग्रन्थों में जो किसी जीव के सूक्ष्म को चौरासी लाख योनियों में भ्रमण करने के बाद जन्म लेने की बात कही गयी है-उसका आधार क्या है? प्रत्येक सूक्ष्म (आत्मा) को चौरासी लाख योनियों का भ्रमण करना क्या आवश्यक होता है, क्या इसके पूर्व उस सूक्ष्म का पुनर्जन्म नहीं हो सकता? कृपया, इसे विस्तार से समझाएं।

देखो ऐसा है कि, चौरासी लाख योनियों की बात पौराणिक-ग्रन्थों में अवश्य कही गई है, लेकिन आध्यात्मिक व वैदिक आधार पर यह शत-प्रतिशत प्रमाणित नहीं है। इसकी संख्या पर तांत्रिकों का भी अपना-अपना मतभेद है। लेकिन इस पौराणिक आधार को एकदम से झुठलाया भी तो नहीं जा सकता। जबकि सच तो यह है कि, एक लाख चौरासी हजार योनियों से लेकर चार लाख योनियों के बीच मृत्यु के उपरान्त मानव योनि के सूक्ष्म का पुनर्जन्म हो जाता है। तीन लाख योनियों की यात्रा के अंतर्गत पशुओं के सूक्ष्म का पुनर्जन्म हो जाता है। पक्षियों के सूक्ष्म को पुनर्जन्म की स्थितियों तक पहुंचने के लिए दस लाख योनियों तक का भ्रमण करना पड़ता है। कीड़े-मकोड़ों के सूक्ष्मों को ग्यारह लाख योनियों तक की यात्रा पुनर्जन्म हेतु करनी पड़ती है। इसी क्रम में, ब्रह्मांड के तमाम छोटे-छोटे जीव-जन्तु हैं जो मृत्युपरान्त लाखों-लाखों

योनियों में भ्रमण करने के उपरांत पुनर्जन्म की स्थिति में आ पाते हैं। असंख्य योनियों के क्रम में हम कम से कम आध्यात्मिक दृष्टि से चौरासी लाख योनियों की बात प्रत्येक सूक्ष्म (आत्मा) के लिए करें, यह तर्कसंगत या यूं कहो ये धार्मिक दृष्टि से न्यायोचित नहीं है।

हां; धर्मग्रन्थों में जो जीव के सूक्ष्म को चौरासी लाख योनियों में भ्रमण करने की बात कही गयी है-इसका यह मतलब नहीं है कि उस प्रक्रिया में बहुत समय लग जायेगा। वह यात्रा तो गणेश जी की तरह क्षण भर में भी हो सकती है और नारद की तरह वर्षों में भी हो सकती है। जैसे-कभी-कभी ऐसा भी सुनने में आता है कि-किसी परिवार में घटनाक्रम के अन्तर्गत किसी व्यक्ति की मृत्यु हुई और उसके क्षण भर बाद उसी घर में किसी बच्चे का जन्म भी हुआ। बाद में उस घर के लोग कहते हैं कि-इस बच्चे की आदतें बिल्कुल बाबा जैसी हैं, लगता है उन्होंने ही इस बच्चे के रूप में पुन: जन्म लिया है। तो कभी-कभी इस क्रम में भी पुनर्जन्म हो जाता है। जीव का सूक्ष्म कई लाख योनियों की यात्रा कुछ क्षणों में ही पूरा कर लेता है। सामान्यत: मृत्यु के उपरान्त, किसी सूक्ष्म द्वारा योनियों में यात्रा का समय उसके निमित्त किए गये त्रयोदशा, चालीसवां आदि संस्कार के पूरा होते-होते पूरा हो जाता है। लेकिन हां; मृत्योपरान्त यदि कोई सूक्ष्म किसी विरोधी शक्तियों के गिरोह में फंस गया तो उसका पुनर्जन्म बड़ा कठिन हो जाता है। ब्रह्मराक्षस, प्रेत, चुड़ैल, जिन्न, ऐंजल(परी) आदि के साथ फंस या जुड़ जाने के बाद वह सूक्ष्म अपनी सूक्ष्मीय यात्रा से दिग्भ्रमित हो जाता है और वर्षों तक इधर-उधर पदच्युत होकर भटकता रहता है। कभी-कभी तो वह सूक्ष्म भी उन विरोधी शक्तियों के साथ रहते-रहते, उन सबकी विरोधी-घातक प्रवृत्तियों में घुल-मिल जाता है और विरोधी शक्तियों के रूप में स्वयं व्यवहार करने लगता है।

इसलिए देखो; 'सूक्ष्म-स्थूल' के संयोजन से च्युत सूक्ष्म को जन्म-पुनर्जन्म से कभी न कभी, किसी न किसी रूप में जुड़ना ही होगा। हां, यह बात दूसरी है कि-कालचक्र के सापेक्ष में समय-काल क्या और कैसा होगा? जहां तक आधार की बात है तो इतना निर्विवाद रूप से समझ लो कि-प्रकृति या ब्रह्मांड में बिना आधार के एक सूक्ष्म से सूक्ष्म कण भी नहीं टिक सकता। हां; उसे देखने-समझने के लिए पात्रता के साथ एक गहरी सूक्ष्म दृष्टि भी अन्वेषक के अन्दर होना आवश्यक ही नहीं बल्कि अति आवश्यक है।

[मृत्यु की निश्चितता-अनिश्चितता के मध्य कालचक्र के सापेक्ष में जीव की गति का चक्रीय विधान क्या होगा ? इस विवादास्पद प्रकरण के अन्तर्गत 'आत्मा का रहस्य व योनि भ्रमण' विषय से सम्बन्धित प्रश्नों के समाधान हेतु श्मशान साधक 'अज्ञान' जी से दिनांक 15 जून 1992 (पूर्वान्ह) को लिए गये लम्बे साक्षात्कार का प्रमुख अंश प्रस्तुत है-]

❑ गुरूजी! आपने कहा कि- आत्मा अजर-अमर है। उसका कोई ह्रास नहीं होता। तो सवाल यह उठता है कि- क्या आत्माओं की संख्या तय है लेकिन बढ़ती हुई जनसंख्या को देखते हुए ऐसा नहीं लगता। तो क्या आत्माएं अनंत हैं? ये आती कहां से हैं-कृपया, इसे समझाएं?

देखो ऐसा है- आप बात स्थूल और सूक्ष्म शरीर की ही करो। आत्मा में जाओगे तो उलझ जाओगे। जहां तक जनसंख्या की बात है; तो तुम्हारे कहने का अभिप्राय यही है न कि- 'दिल्ली या बम्बई जैसे शहर जहां ऊपर आकाश में एक करोड़ जीव का सूक्ष्म घूम रहा है वहां जन्म एक करोड़ तक ही होना चाहिए, डेढ़ करोड़ कैसे हो गया? लेकिन तुम्हें यह कहां पता है कि-जब युग बदला, काल बदला, उस समय ब्रह्मांड में सूक्ष्मों की क्या संख्या थी? और हां; इसमें परिवर्तन भी तो होता है। कभी-कभी बहुत से जीव-जन्तुओं के सूक्ष्म भी मानव रूप में आ जाते हैं। यह सब उनके पूर्व जन्मों के सत कर्मों की वजह से होता है। बहुत से मानव के सूक्ष्म भी जीव-जन्तुओं की योनि में चले जाते हैं। तो बस इतना समझ लो कि-सूक्ष्मों की संख्या हमेशा निश्चित नहीं रहा करती। वह ब्रह्मांड के तमाम लोकों या स्थितियों में भ्रमण करती हैं। चाहे जन्तुओं के सूक्ष्म हों या मानव योनि के, सूक्ष्म तो सूक्ष्म ही होता है । हां, इतना अवश्य है कि-जन्म-जन्मान्तर की प्रक्रिया के अंतर्गत सूक्ष्म-स्थूल के संयोजन से ही किसी जीव का शरीर रूप में जन्म होता है । फिर बिना सूक्ष्म-स्थूल के संयोजन के किसी मानव या जीव-जन्तु का जन्म कैसे होगा?

❑ गुरूजी। यह तो बाहर के आवरण की बात हुई। पर वह मूल बिन्दु क्या है जिसका ह्रास नहीं होता-यानी सूक्ष्म (आत्मा) का?

हां भई; सूक्ष्म का कभी किसी भी स्थिति में ह्रास नहीं होता । जन्म - मृत्यु-जन्म के अंतर्गत कभी न कभी, किसी न किसी रूप में कोई न कोई सूक्ष्म जन्म के माध्यम से शरीर तो धारण करेगा ही। यह बात दूसरी है कि-वह शरीर मानव का हो या जीव-जन्तु का। तो, इसमें सूक्ष्म या आत्मा का ह्रास कहां हुआ? भई; अगर तुम्हारा कपड़ा फट गया, नष्ट हो गया तो उसे बदल दोगे न। दूसरा, नया पहन लोगे। पुराने की चिंता तो नहीं करोगे न। फिर कपड़ा तो उसी तरह का पहनोगे। हो सकता है; थोड़ा रंग-बिरंगा पहन लो। लेकिन, उसके आकार-

वे बिना किसी तथ्य को जाने-समझे धड़ल्ले से यह कह डालेंगे कि-'दिखाओ तो जाने? प्रमाण दो तो जाने?' हां; कभी यह नहीं कहेगे कि- गुरूजी! मेरे अन्दर वह पात्रता भर दो जिससे मैं आध्यात्मिक जगत को थोड़ा जान-समझ सकूं। ऐसे में, बस इतना समझ लो कि-आध्यात्मिक जगत के एक-एक सीढ़ी पर चढ़ने व उसको जानने-समझने के लिए उपयुक्त पात्रता जरूरी ही नहीं बल्कि शत-प्रतिशत आवश्यक है।

आत्मा का रहस्य व योनि भ्रमण

सोचो; क्या सात-आठ दर्जा फेल व्यक्ति को कोई इंजीनियर, डाक्टर या वकील बना देगा? नहीं न ! इन महत्वपूर्ण पदों पर कार्य करने के लिए व्यक्ति को उसके अनुकूल योग्यता भी तो प्राप्त करनी होगी। ठीक उसी तरह इस विवादास्पद क्रम को यानी पुनर्जन्म को जानने-समझने के लिए व्यक्ति को साधना-तपस्या आदि के माध्यम से वह आध्यात्मिक योग्यता ग्रहण करनी होगी जिससे उसके अन्दर का सूक्ष्म पूर्णतः जाग्रत व परिष्कृत हो जाये। तब कहीं जाकर उसे पुनर्जन्म ही क्या, बहुत सारे अस्पष्ट बिन्दु दिखाई देने लगेंगे जो अभी भी सामान्य मानव की दृष्टि-समझ से परे हैं।

❑ गुरूजी ! क्या यह सम्भव नहीं है कि-एक सिद्ध साधक जो साधना की ऊंचाई पर स्थित है, वह किसी साधना-शून्य या सामान्य व्यक्ति को कुछ ऐसी अनुभूति करा दे जो उसे आध्यात्मिक प्रमाणिकता से जोड़ने में सक्षम हो?

मैंने अभी तो कहा न। कितने-कितने जीवंत बिन्दु या कितनी-कितनी चीजें ब्रह्मांड में घूम रही हैं; पड़ी हैं। अभी तो हम वैज्ञानिक क्षेत्र में पदार्थ से ऊर्जा तक आये हैं। हमारा पूरा का पूरा विज्ञान इसी अर्द्धवृत के ईर्द-गिर्द घूम रहा है, लेकिन इसी क्रम में, वह धीरे-धीरे विध्वंस की ओर बढ़ रहा है। जिस दिन हम वैज्ञानिक उपलब्धियों के तहत ऊर्जा से फिर पदार्थ की ओर आ जायेंगे, उस दिन-'पदार्थ-ऊर्जा-पदार्थ' का वृत पूरा हो जायेगा। तब जीवंत बिन्दुओं के बहुत सारे रहस्य भी लोगों के सामने उदघाटित हो जायेंगे। अब तुम्हीं सोचो, क्या इन सारी बातों को किसी जड़ या मूढ़ को समझाना-पढ़ाना सम्भव है? नहीं न ! जब तुम बहुत सारी बातों व रहस्यों को भौतिक आयाम में स्तरहीन व्यक्ति को नहीं समझा-बता सकते, तो आध्यात्मिक परिवेश में समझने-समझाने की बात क्यों सोचते हो? हां; यह बात दूसरी है कि कोई सिद्ध साधक, साधना-शून्य व्यक्ति को अपनी आध्यात्मिक शक्तियों के माध्यम से पहले साधनायुक्त बनाये, सफल साधक बनाये; उसके बाद उसे बहुत कुछ आध्यात्मिक बिन्दुओं को समझा-दिखा सकता है।

❑ गुरूजी! क्या यह आवश्यक है कि आध्यात्मिक - शक्तियों को दिखाने-समझाने के लिए उस व्यक्ति को एक स्तर पर खड़े ही होना होगा?

हां; यह आवश्यक है । देखने-समझने वालों का भी एक स्तर होना चाहिए। अन्यथा, दिखाना-समझाना व्यर्थ हो जायेगा। जैसे - मान लो, किसी कारखाने के मालिक का लड़का आठ दरजा फेल है। वह अपने उस आठ दरजा फेल लड़के को कारखाने का मालिक तो बना सकता है, पर इंजीनियर फोरमैन नहीं बना सकता। क्योंकि उस कार्य के संबंध में उसके पास पात्रता ही नहीं है। जब भौतिक संसाधनों के अन्तर्गत बिना योग्यता या पात्रता के कार्य करना संभव नहीं है, तो आध्यात्मिक जगत में यह सब कैसे संभव हो सकता है। वहां तो पल-पल में कठिन परीक्षा या साधना की भिन्न-भिन्न स्थितियों से गुजरना पड़ता है।

देखो; इस सांसारिक व आध्यात्मिक परिवेश के अन्तर्गत विकृतियों व दुष्प्रचार के संयोजन-प्रसारण में सिर्फ एक व्यक्ति ही दोषी नहीं है । हमारा पूरा का पूरा सामान्य समाज विकृतियों की ओर अग्रसर हो रहा हैं । हम मृत्यु के कगार पर खड़े होकर के भी यह तय नहीं कर पा रहे हैं कि मृत्यु आखिर हैं क्या बला? और उसी भ्रम में जीते जा रहे हैं, मरते जा रहे हैं। यूं लगता है, जैसे कि लोग मरने के लिए ही जी रहे हैं। और कुछ लोग जीने के लिए मरते है हम तथाकथित बुद्धिजीवियों ने अपने चारों ओर मृत्यु का आयोजन कर रखा है। इसे यूं समझो कि - जो सिद्ध साधक होगा, दार्शनिक होगा, कालदर्शी होगा, जो समाज को कुछ देने वाला होगा वो तो जीने के लिए मरेगा। पर, जो सिर्फ भोगी होगा, उदरपूर्ति के लिए जी रहा होगा, वो सिर्फ मरने के लिए जिन्दा रहेगा।

तो ऐसे विकृत समाज में, लोग आध्यात्मिक अकाटय सत्य व शाश्वत तथ्यों को जानने-समझने के लिए अपने अन्दर पात्रता विकसित करने के बजाय उसका विविध क्रम में उपहास तो उड़ायेंगे ही या अनायास प्रमाणिकता दिखाने के लिए पल-पल में बचकानी या असभ्य-परक दुस्साहस तो करेंगे ही। जैसे

निरंतर अपने अन्तः दृष्टि से ब्रह्मांड में सूक्ष्मगति से भ्रमण करते रहते हैं। उन सब आशक्त साधकों ने एक नहीं सैंकड़ों बार यह प्रमाणित कर दिया है कि-पुनर्जन्म भी उतना ही सत्य है जितना कि सूक्ष्म-स्थूल के संयोजन से निर्मित मानव शरीर।

वैदिक ऋचा- 'अतति सततम गच्छति इति आत्मा'- के अनुसार आत्मा निरंतर चलती रहती है। उसका न कभी ह्रास और न ही वह कभी विनष्ट होती है। वह अजर-अमर है। हां; यह बात दूसरी है कि वह वस्त्रादि की तरह मानव शरीर 'जन्म-मृत्यु-जन्म' के माध्यम से कालचक्र के सापेक्ष में बदलती रहती है। ब्रह्मांड में, भिन्न-भिन्न रूपों-स्थितियों में भ्रमण करती हुई आत्मा सूक्ष्म रूप में किसी स्त्री के गर्भ में प्रवेश करने के 8-9 माह बाद स्थूल सहित बच्चे के रूप में उससे बाहर आती है। वही नवजात बच्चा बड़ा होकर भौतिक रूप से चारों आश्रम (बाल्यवस्था, युवावस्था, बानप्रस्थ, संन्यास) की क्रमिक यात्रा में तब तक विचरण करता रहता है जब तक उसके अन्दर के सूक्ष्म-स्थूल का संयोजन संतुलित अवस्था में बना रहता है। हां; जब किसी घटनाक्रम में सूक्ष्म-स्थूल का संयोजन टूट-बिखर जाता है तो वह मृत्यु की निश्चतता में लिप्त होकर पुनः सूक्ष्म रूप में आ जाता है।

अब तुम्हीं सोचो कि-कोई आत्मा सूक्ष्म में रहते हुए स्थूल से जुड़ने के लिए स्त्री के ही गर्भ में क्यों प्रवेश करती है? क्योंकि उसी गर्भ से सूक्ष्म-स्थूल का संयोजन बनेगा जो गर्भ से बाहर निकलने के बाद एक नवजात शिशु को कालचक्र के सापेक्ष में जन्म देगा। इन सारी बातों व तथ्यों से यह स्पष्ट हो जाता है कि ब्रह्मांड में गतिशील हर सूक्ष्म का अपना एक विगत इतिहास-भूगोल होता है। वही सारगर्भित इतिहास - भूगोल आत्मा रुपी सूक्ष्म के जन्म-जन्मान्तर की कथा का एक संयोजित इतिहास बनता है। जिसे पूर्वजन्म के आधार पर ही जाना-समझा जा सकता है। या यूं कहो कि प्रत्येक मानव या जीव-जन्तु के उत्पति का मूल कारण उसका पूर्वजन्म होता है। उसके बिना उसका भौतिक-आध्यात्मिक अस्तित्व कहां बनेगा। अब यह बात दूसरी है कि-उसे व उसकी विगत-वर्तमान आदि-अन्त-आदि की यात्रा को गहराई से जानने-समझने व

परखने के लिए साधक को अपने अन्दर की अन्तः दृष्टि को गहन साधना-तपस्या के माध्यम से जाग्रत व परिष्कृत करना होगा।

❑ लेकिन गुरूजी! कई बार कुछ विशेष परिस्थितियों में लोगों को इन सब बातों पर यकीन नहीं होता। ऐसी स्थिति में कोई या लोग क्या करें?

यदि कोई आंखों पर काली पट्टी बांध कर सूरज के अस्तित्व को मानने से इंकार कर दे, तो क्या सूरज का अस्तित्व समाप्त हो जायेगा? इसीलिए बुद्धि-विवेक का इस्तेमाल करते हुए, आप गम्भीरता और धैर्य से कुछ तलाश-खोज तो करो। शोधपरक दृष्टि से, यदि आप अपने ईर्द-गिर्द भी देंखोगे तो आपको पुनर्जन्म होने के कई संकेत-प्रमाण स्वतः मिल जायेंगे। जैसे-मान लो, एक लड़की है। ज्यादा रूपवती भी नहीं है फिर भी, उसके पीछे एक लड़का (जो सम्पन्न व सुन्दर है) जी-जान से हाथ-धोकर क्यों पड़ा हुआ है? जबकि वह लड़की बहुत सुन्दर भी नहीं है, सम्पन्न भी नहीं है। इस स्वाभाविक घटनाक्रम से तुम क्या समझे? अगर गहराई में जाओ, उन दोनों से गहरे में सम्पर्क स्थापित करो तो तुमको कहीं न कहीं यह लगेगा, स्व अनुभव होगा कि-इन दोनों का जन्म-जन्मान्तर से कोई न कोई संबंध रहा है और इस वर्तमान जन्म में भी वे दोनों वैवाहिक संबंधों के आधार पर एक होना चाहते हैं।

हां; अगर इस घटनाक्रम को मात्र भौतिक आधार पर ही लिया जाए तो हमें यह सोचने पर विवश होना पड़ेगा कि-वे दोनों वैवाहिक संबंधों के आधार पर एक होने के लिए घर-परिवार से विरोध को स्थिति में क्यों आ गये? निश्चित रूप से दोनों का पूर्व संबंध रहा होगा। उसी पुर्वजन्मों के आधार पर दोनों इस जन्म में भी एक होना चाहते हैं। इसी क्रम में, तुम्हें अपने ईर्द-गिर्द तमाम सारे घटनाक्रम मिलेंगे, जिससे पुनर्जन्म की पुष्टि किसी न किसी रूप में होती रहती है। क्योंकि हर घटनाक्रम के पीछे कोई न कोई कारण अवश्य होता है। पूर्व जन्म की स्थिति को यदि सीधे-सीधे सरलता से जानना ही चहाते हो तो सबसे पहले अपनी अन्तः दृष्टि को विकसित करो, साधना आदि से परिष्कृत करो। अब तुम्हीं

के बाद मैंने धीरे से कहा- पंडितजी ! आप अपने को मां का भक्त कहते हो, यह बात तो समझ में आती है लेकिन मां आपको अपना भक्त कितना मानती है; यह बात आप कैसे जानो-समझोगे? इतना सुनते ही उनका अहम थोड़ा उग्र हो गया। उसी उग्रता में उन्होंने अपने अहम को जगाते हुए कहा- 'तांत्रिक जी ! मैं स्वयं व्याकरण का आचार्य हूं। निरंतर सप्तसती का पाठ करता हूं। बिना किसी त्रुटि के मां की आराधना -भक्ति करता हूं। ऐसे में, 'मां' मुझे अपना भक्त क्यों नहीं मानेंगी, पंडित जी की इस तरह अहमपूर्ण बातों को सुनकर मुझे लगा कि- यह तो अभी अहम के अंधकार में डूबा हुआ है। कहीं ऐसा न हो कि- इसका अहम इसके अन्तः अस्तित्व को ही समाप्त कर डाले। उसकी सूक्ष्म विवेचना के उपरान्त, मैंने उनकी त्रुटियों को उन्हीं के सामने रखते हुए जब अध्यात्म के विविध पक्षों को समझाया तो वे सामान्य हुए। देर तक शान्त रहने के उपरान्त उन्होंने नम्र स्वर में कहा-'गुरूजी ! मैं आपके एक-एक शब्द पर ध्यान दूंगा। पर आपने अपना नाम 'अज्ञान' क्यों रखा है क्या मेरी इस जिज्ञासा को शान्त कर सकेंगे? पंडित जी की इस बात पर मुझे हल्की सी हंसी आ गयी। सामान्य होते ही मैंने झटके में कहा- भई; अभी तो मैं इस आध्यात्मिक ज्ञान-विज्ञान के महासागर में अपने को एक बूंद के बराबर भी नहीं मानता। ऐसे में, मुझे अज्ञान ही बना रहने दो। इसी में, हम सबका भला है। -थोड़ा रूककर मैं फिर बोला- देखो; स्व अहम को अपने में इतना विलीन कर दो कि सबका- सब आर-पार दिखने लगे। तब कहीं जाकर तुम्हें जन्म-मृत्यु के बीच का सेतु ब्रह्मांड में दिखाई देगा।'

पंडित जी के जाने के बाद मैं देर तक बैठा-बैठा सोचता रहा कि- इसी तरह असंख्य लोग अपने स्व अहम् में लिप्त साधना का पाखंड कर रहे होंगे। ऐसे में, वे जन-समाज का भला करना तो दूर, अपना भी भला नहीं कर पायेंगे।

हां; तो इस सांसारिक घटनाक्रम से क्या समझे? देखो; इस ब्रह्मांड, में हजारों क्या, लाखों ऐसी सूक्ष्म वस्तुएं या सजीव बिन्दु हैं जिन्हें देखने-समझने में हम भौतिक दृष्टि से अभी असमर्थ हैं, इसे स्पष्ट करने में असमर्थ हैं। लेकिन जो स्पष्ट करने में सक्षम या समर्थ हैं वह तो करेंगे ही। जैसे मान लो एक वैज्ञानिक है। यदि वह कोई नया प्रयोग करना चाहता है तो वह सबसे पहले एक नई परिकल्पना करेगा। उस समय तो उसकी परिकल्पना लोगों को झूठी-बकवास लगेगी, लेकिन जब वह उसके द्वारा या उसी के समकक्ष किसी अन्य वैज्ञानिक

द्वारा सत्यापित हो जायेगी तो वह सारी की सारी परिकल्पना लोगों को सत्य लगने लगेगी। लोग उसका गाहे-बेगाहे अनुभव करने लगेंगे।

उसी तरह से आप सबके लिए पुनर्जन्म की घटनाएं हैं। जिन्होंने उसे अपने आत्म दृष्टि से देखा-समझा है वे तो उस तथ्य-कथ्य को बार-बार सत्यापित करेंगे ही। अब यह बात दूसरी है कि उसको सामान्य स्तर पर समझने-परखने वाले का भी तो एक स्तर होना चाहिए।

वास्तव में, हमारे सामने सबसे बड़ी समस्या यह है कि-हमारा यह जो बड़ा-गला जन-समाज है वो गलत-सही मिश्रित मूल्यों को लेकर चलता है। उसी को मरते दम तक ढोता रहता है। यही सबसे बड़ा विरोधाभास सत्य-असत्य के बीच है। हम एक दूसरे से भौतिकता-आध्यात्मिकता के मध्य टकराहट इसलिए मोल लेते रहते हैं क्योंकि दोनों के बीच रात-दिन जैसा अन्तर हमेशा बना रहता है।

इसी क्रम में, जरा भौतिकता से जुड़े धार्मिक विवादों के बारे में भी सोचो। लोग यही न कहते हैं कि-'हम हिन्दू हैं, मुसलमान हैं, इसाई हैं-आदि-आदि। पर कोई यह नहीं कहता कि-हम सबसे पहले एक अदद आदमी हैं, इन्सान हैं। तो जब लोग भौतिकता का शवचय ओढ़े तथाकथित धार्मिक विवादों के घेरे में फंस कर स्वतंत्र रूप में यह नहीं कह पाते कि-हम सबसे पहले इन्सान है तो वे जन्म-जन्मांतर की बात क्या समझेंगे?' सबसे पहले हर व्यक्ति को अपने अन्दर की सोयी हुई इंसानियत को जगाना होगा। उसके बाद उसे धर्म-कर्म व साधना के माध्यम से एक ऐसी सामान्य दृष्टि बनानी होगी जिससे वह जन्म-जमान्तर की बातों को समझ-परख सके। हां; उसे खोजना-जानना या शोधना तो साधक का काम है पर उन जानी-खोजी बातों-तथ्यों को समझने-परखने के लिए भी समाज वालों में एक सामान्य स्तर की स्वस्थ दृष्टि चाहिए।

अब, जैसे मंत्रों का सृजन ऋषि करते हैं। इसीलिए ऋषि को मंत्र स्रष्टा कहा गया है। वह अपने घोर-साधना-तपस्या के माध्यम से मंत्र का सृजन करता है। उसी मंत्र को बार-बार जप करके, उसका अनुष्ठान आदि करके समाज के प्राणी सात्विक ढंग से आध्यात्मिकता की ओर बढ़ते हैं, अपना अपने परिवार जनों के कल्याण की परिकल्पना करते हैं। और उसमें सफल भी होते हैं। तो, ऋषि, महर्षि और ब्रह्मर्षि अपनी साधना-तपस्या की पराकाष्ठा पर पहुंच कर

अनायास भौतिक मानव से जुड़कर अपने पूर्व या वर्तमान की इच्छाओं की पूर्ति तब तक करती रहती हैं जब तक वह हर तरह से जीर्ण-शीर्ण होकर अपने भौतिक अस्तित्व से समाप्त नहीं हो जाता। या यूं कहो कि अपने सूक्ष्म-स्थूल से अलग-थलग नहीं हो जाता। सामान्यत: होता यह है कि स्त्रीय गुणों से सम्पन्न विरोधी शक्तियां, पुरूषों पर अपना प्रभाव डालती हैं और पुरूषीय गुणों से सम्पन्न विरोधी शक्तियां स्त्रियों पर अपना प्रभाव डालती हैं। क्योंकि उसी क्रम में, उन सब विरोधी शक्तियों की बहुत सी पूर्व-वर्तमान इच्छाओं की पूर्ति होती रहती है। अब जैसे कोई जिन्न या ब्रह्म राक्षस है तो वह अपना प्रभाव सामान्यत: स्त्रियों पर ही डालेगा। इन सब दुष्ट व असंतृप्त आत्माओं का कुप्रभाव सुंदर व सुघड़ स्त्रियों पर सामान्यत: ज्यादा पड़ता है। इसी क्रम में, स्त्रीय गुणों से सम्पन्न विरोधी शक्तियों का प्रभाव सामान्यत: सुन्दर व कर्मठ व्यक्तियों पर ज्यादा पड़ता है। इन अतिरिक्त प्रभावों से ग्रसित स्त्री-पुरूष तब तक परेशान होकर घुटते-घुलते रहते हैं जब तक मृत्यु को प्राप्त नहीं हो जाते। अब ऐसे में, कोई उन दुष्ट व असंतृप्त आत्माओं का क्या कर लेगा? फिर उन सभी के कुप्रभाव से ग्रसित व्यक्ति को बचाना आसान भी तो नहीं है।

❑ गुरूजी! इस लम्बी बातचीत में, आपने पुनर्जन्म की बात को बार-बार उठाया है। लेकिन हम अपने दैनिक जीवन में 'जन्म-मृत्यु' को तो देखते हैं और थोड़ा बहुत समझते भी हैं, किन्तु पुनर्जन्म तो कहीं भी दिखाई नहीं देता। यह तो मृत्यु से भी अधिक विवादास्पद है। कृपया, इसे विस्तार से स्पष्ट करें?

देखो ऐसा है कि- दिखाई तो हमें बहुत सारी चीजें नहीं देतीं। बिजली के नंगे तार में विद्युत धारा बह रही है या नहीं; क्या उसे देख सकते हो? नहीं न! जब तुम भौतिक आयाम में बहुत सारी चीजों को या ऊर्जा को नहीं देख सकते, तो आध्यात्मिक जगत में सूक्ष्म की गति को कैसे देख-समझ पाओगे, उसकी गति तो बहुत ही तीव्र होती है। अब इसे यूं समझो कि- अपने दैनिक जीवन के मात्र एक दिन की दुखद-सुखद अनुभूतियों को क्या पूरा देख-समझ सकते हो? जबकि तुम्हारे सूक्ष्म के साथ तुम्हारा स्थूल भी जुड़ा हुआ है।

अरे! जन्म-जन्मांतर की जो गति है, उसे देखने-समझने के लिए हमें वैसी दृष्टि भी तो बनानी पड़ेगी। इसी क्रम में, मैं तुम्हें एक भौतिक उदाहरण देता हूं-

'जो तुम छविगृह में चलचित्र देखते हो, उसमें भी तुम्हारी आंखें धोखा खा जाती हैं। क्योंकि उसके चित्रांकन का समय काल 1/12 सैकेंड होता है, जबकि हमारी आंखें यानी स्वस्थ आंखें 1/6 सैकेंड से ज्यादा घुमने वाली वस्तुओं या चित्रों को देखने में असमर्थ होती हैं। इस दशा में 1/12 सैकेंड तक एक सैकेंड में परदा चित्रविहीन रहता है। लेकिन हम सब अपनी आंखों की असमर्थता के कारण इस रिक्तता को न तो देख पाते हैं और न ही समझ पाते हैं। तो तुम्हीं सोचों; जब भौतिक आयाम में हम सूक्ष्मता को देख-समझ नहीं पाते हैं तो आध्यात्मिक- धार्मिक जगत में विचरण करने वाले सूक्ष्मों की तीव्र गति को कैसे देख-समझ पायेंगे। उसे तो देखने-समझने और अनुभव करने के लिए अन्त: दृष्टि का जागृत होना आवश्यक है। अन्त: दृष्टि जाग्रत करने के लिए तुमको तपस्या करनी होगी, साधना करनी होगी; कुछ विशेष प्रक्रिया के अन्तर्गत साधना करनी होगी तब कहीं जाकर अन्त: दृष्टि का जागृत होना संभव हो सकेगा। इन सब जटिल कार्यों को समय की निश्चितता में नहीं बांधा जा सकता। इसी क्रम में, तुम्हें 12-13 वर्ष पूर्व की एक घटना का संक्षिप्त वृतांत बताता हूं-

'अपने को एक सफल साधक व मां का अभिन्न भक्त समझने वाले अधेड़ आयु के एक चंदनधारी पंडित जी मेरे यहाँ आ पहुंचे। वार्ता के आरंभ में ही उन्होंने मुझसे कहा- 'अज्ञान जी! मैं मां का भक्त हूं और साथ-साथ संस्कृत का आचार्य भी हूं। वर्षों से सप्तसती का पाठ भी मां के सिद्ध स्थल पर करता चला आ रहा चला हूं। इतना सब होते हुए भी पिछले वर्ष मेरी पत्नी की आकस्मिक मृत्यु हो गयी। किसी न किसी समस्या से निरंतर घिरा रहता हूं। इन सब आकस्मिक समस्याओं के पीछे क्या कारण हैं? आप तो एक सिद्ध तांत्रिक हैं; कृपया मुझे कोई ऐसा समाधान बतायें जिससे मैं इन ढेर सारी समस्याओं का स्वयं निराकरण कर लूं और समाज का भी भला करने की बात सोचूं। वैसे; आप विश्वास मानिए, मैं मां का अभिन्न भक्त हूं।' स्व: अहम से लिप्त उन पंडितजी की बातों को सुनकर मैं थोड़ी देर तक मौन रहा। उस बीच मैं उनके मस्तिष्क पर उभरे 'अहम' का मानसिक विश्लेषण भी कर रहा था। देर तक शान्त रहने

जीव की इस सामान्य प्रक्रिया में कभी-कभी अनायास किसी न किसी घटनाक्रम के माध्यम से ब्रह्मराक्षस या विरोधी शक्तियां एक ऐसा अवरोध उत्पन्न कर देती हैं जिससे वह या तो असामान्य स्थिति में आ जाता है या अपने स्थूल से अलग-थलग होकर सूक्ष्म रूप में उसी के साथ हो लेता है। इससे उसका सूक्ष्म अपने सामान्य गति से पदच्युत हो जाता है और विरोधी शक्तियों के गिरोह में आ मिलता है।

❑ गुरूजी! वह कैदी, जिसके सूक्ष्म को वह ब्रह्म-राक्षस अपने साथ ले गया; क्या उससे उसकी मुक्ति करवाई जा सकती है ? और हां; क्या दुबारा उसका जन्म भी करवाया जा सकता है?

हां; उससे उसकी मुक्ति भी करवाई जा सकती है और दुबारा जन्म भी करवाया जा सकता है। पर यह कार्य बहुत ही दुरूह व कठिन होता है। फिर किसको क्या गरज है कि वह यह जटिल कार्य करे। इस कार्य में खतरे के साथ-साथ अस्थिरता भी तो निरंतर बनी रहती है। भौतिक परिवेश में जब तुम किसी को अनायास छेड़ोगे तो वह संघर्ष की स्थिति में आ जायेगा। ठीक इसी तरह आध्यात्मिक व धार्मिक स्थितियों में भी होता है और कभी-कभी तो उससे ज्यादा और भयानक हो जाता है। अरे; बहुत दूर क्यों जाते हो परमहंस जी को ही देखो। उन्होंने एक भ्रष्ट नाटय-रंगकर्मी का जीवन बचाने के लिए उसका सारा का सारा अवरोध अपने ऊपर ले लिया। और उसी घटनाक्रम में वे स्वयं कर्कट रोग (कैंसर) से ग्रसित हो गये। अन्ततः उन्हें मृत्यु को स्वीकार करना पड़ा। तो इस विगत घटनाक्रम से क्या समझे? सच पूछो तो, वे उन मानव-विरोधी शक्तियों से स्वयं ग्रसित हो गये और अपने स्थूल को उन्हें असमय में ही छोड़ना पड़ा। तो बहुत से ब्रह्मराक्षस, जिन्न या उसके समकक्ष की विरोधी शक्तियां ऐसी होती हैं कि जिनसे मुक्ति दिलाना आसान नहीं है। कभी-कभी तो साधक उन विरोधी शक्तियों से मुक्ति दिलाते-दिलाते स्वयं उसी घटनाक्रम में फंस जाता है। यहां तक कि उसे अपने भौतिक जीवन को भी समाप्त करना पड़ता है।

ब्रह्म-राक्षस की सत्रह-अट्ठारह श्रेणियां होती हैं। कुछ तो ऐसे हैं जो

गाहे-बेगाहे अपना रूप आदि भी बदल लेते हैं। कई-कई रूपों में आ जाते हैं। उन सब शक्तिशाली विरोधी शक्तियों से मुक्ति दिलाने के चक्कर में साधक को निश्चित रूप से संघर्ष करना पड़ेगा। क्योंकि वह भी साधक-तांत्रिक-मांत्रिक आदि से भरसक लड़ेगा। हां; यदि साधक कमजोर या कम शक्ति वाला हुआ तो उसे पराजित भी कर देगा। कभी-कभी तो वह उसका अनिष्ट भी कर देता है। तो जन्म-मृत्यु को लेकर हम सैंकड़ों क्या हजारों बिन्दुओं से घिर जाते हैं।

आप बल्कि यूं समझो कि- नदी में जैसे कोई आदमी तैर रहा है, वह तब तक तैरता रहेगा जब तक उसका हाथ-पैर जल में हिलता-डुलता रहेगा। हां; जब उसका हाथ-पैर श्रम करते-करते थक कर शिथिल पड़ जायेगा तो वह नदी में डूब जायेगा। उसी तरह से हमारा जीवन है। जब तक हम हाथ-पैर मारते रहेंगे, सूक्ष्म-स्थूल का साथ बना रहेगा तब तक हम आगे बढ़ते जायेंगे और मृत्यु की निश्चितता पर टेक लगाते चले जायेंगे। लेकिन जिस दिन हमारा हाथ-पैर हिलना बंद हो जायेगा, उसी दिन,उसी क्षण हमारा सूक्ष्म-स्थूल भी एक दूसरे से अलग-थलग हो जायेगा। इसी नियमित-संयमित क्रम को तमाम घटनाक्रम के माध्यम से विरोधी शक्तियां या ब्रह्म राक्षस समय-समय पर अवरोधित करते रहते हैं। इससे उनके स्वार्थ व स्वभाव को संतुष्टी व संतोष मिलता है। तो तुम्हीं सोचो कि- ऐसी विषम स्थिति में उन विरोधी-शक्तियों से किसी जीव को मुक्त कराने में कितनी सारी भौतिक व आध्यात्मिक समस्याएं आती हैं। इसी क्रम में मृत्यु के उपरांत उसका पुनर्जन्म कराना कितना कठिन हो जाता है। लेकिन हां; यह सब भौतिक-आध्यात्मिक कार्य कठिन अवश्य है लेकिन असंभव नहीं।

❑ गुरूजी! ये दुष्ट आत्माएं; क्या अन्य माध्यम से भी लोगों को परेशान करती हैं?

हां भई; फिर उन पर भौतिक दृष्टि से कोई नियम-कानून भी तो लागू नहीं होता। और कोर्ट-कचहरी, पुलिस-प्रशासन आदि से उन सबका कोई मतलब नहीं है क्योंकि वे तो निरंतर ब्रह्मांड या प्रकृति में विचरण करते रहते हैं। इस तरह की जो मानव विरोधी व दुष्ट आत्माएं होती हैं वे कभी-कभी

सकता है। मैंने उसे जमानत विलम्ब से कराने का सुझाव इसलिए दिया था कि- उसके हाथ में जीवन रेखा, मस्तिष्क रेखा व हृदय रेखा एक बिन्दु पर जाकर मिलती थी। क्योंकि ज्योतिष के आधार पर ऐसे व्यक्ति या तो आत्महत्या कर लेते हैं, या पागल हो जाते हैं या किसी अपराध में लम्बे समय तक सजा भोगते हैं। पर इस विरोध के उपरान्त भी उसके हाथ में बचाव पक्ष सम्बन्धी रेखाएं भी थी। लेकिन मेरे सुझाव के बावजूद भी वह अन्य प्रयास करके अपने पति को माह भर के भीतर ही जेल से जमानत पर छुड़वा लायी। परिणाम यह हुआ कि- हफ्ते भर के भीतर ही पुलिस ने उसका काउन्टर कर दिया। तो यहां पर एक विशेष घटनाक्रम में उसकी मृत्यु हो गयी। अब ऐसी स्थिति में; क्या तुम मृत्यु को निश्चित मान पाओगे? नहीं न। सच पूछो तो; उसकी उस घटनाक्रम में मृत्यु का कारण ब्रह्मराक्षस का प्रभाव भी था।

❑ गुरूजी! वह ब्रह्म राक्षस उस कैदी युवक को ऊपर उठा ले गया। ऐसे में, उसके सूक्ष्म को लम्बे समय तक इधर-उधर भटकना पड़ेगा। तो गुरूजी; आखिर उसकी मुक्ति कैसे होगी? वह कब तक इधर-उधर भटकता रहेगा?

ऐसी स्थिति में मुक्ति की बात तो आप भूल ही जाओ। अभी उस बात को भी प्रमाणिक तौर पर ठीक से नहीं कहा जा सकता कि- उसको वह किस स्थिति तक प्रभावित करेगा। हो सकता है; सैंकड़ों साल तक वह सूक्ष्म रूप में उस ब्रह्म राक्षस के चंगुल में फंसा रहे। क्योंकि बहुत से ब्रह्म राक्षस या ऐसी ही अनेक मानव विपरीत शक्तियां ब्रह्मांड में, आकाश पाताल में विचरण करती रहती हैं। गुण्डों के गिरोह की तरह इन मानव-विपरीत शक्तियों का भी गिरोह होता है। लेकिन ऐसा पाया गया है कि- कभी-कभार कोई ऋषि-महर्षि साधना में बैठा हुआ है या साधना की सघन स्थिति में सूक्ष्म तरंगों द्वारा ब्रह्मांड या आकाशीय पिण्डों में भ्रमण कर रहा है तो उसकी सूक्ष्म दृष्टि में वह ब्रह्म राक्षस या विपरीत शक्तियां आ जाती हैं। ऐसी स्थिति में कभी-कभी वह साधक करूणावश उस भ्रमित आत्मा को ब्रह्मराक्षस से मुक्त करके पुनर्जन्म करा देता है और साथ-साथ उस ब्रह्म राक्षस को भी उस भ्रमित योनि से मुक्त कराके किसी अच्छी योनि में भेज देता है। हालांकि ऐसा बहुत कम होता है। यद्यपि तीन-चार बार मेरे साथ भी इस तरह की घटना घटी और उदारतावश मैंने उन सबका

पुनर्जन्म व मुक्ति का रास्ता भी प्रशस्त किया। इसी तरह की एक और समस्या विचित्र घटनाक्रम के तहत अभी चल भी रही है। उसी घटनाक्रम के अंतर्गत उसके पुनर्जन्म का प्रयास अभी चल रहा है। एक अन्य घटनाक्रम के तहत एक शक्तिशाली ब्रह्म राक्षस को परिष्कृत करके उसे मैंने अपने शोध कार्य के लिए अपना शिष्य भी बनाया। अन्ततः यही कहना उचित व तर्क संगत होगा कि ब्रह्मराक्षस, जिन्न व इसी तरह की अन्य मानव-विरोधी शक्तियों के भटकाव का कोई निश्चित समय नहीं होता ; यानी उनका यह भटकाव शतक दर शतक चलता रहता है।

❑ लेकिन गुरूजी! एक आत्मा या सूक्ष्म किसी ब्रह्म राक्षस या अन्य शक्तिशाली मानव-विरोधी शक्तियों के चंगुल में फंसती कैसे है? कृपया, इसे थोड़ा और स्पष्ट करें।

जिस तरह से समाज में गुण्डों-बदमाशों का गिरोह होता है, उसी तरह मानव विरोधी शक्तियों या ब्रह्म राक्षसों का भी गिरोह होता है। या यूँ समझो कि-उन विपरीत शक्तियों के गिरोह का भी गिरोह होता है। ये सूक्ष्म रूप में गतिशील मानव विरोधी शक्तियां अधिकतर-पीपल, बरगद, गूलर, पलाश, नीम आदि के पेड़ों व सुनसान जगहों, जैसे-श्मशान, पुराना तालाब, गहरा जलाशय, जंगल आदि में गिरोह के रुप में मिल कर रहती हैं। या कूछ ऐसे भी स्थान होते हैं जहां आये दिन दुर्घनाएं होती हैं। अब इन विपरीत शक्तियों के बीच जब कोई सीधा-साधा मानव आ जाता है तो वे उसे अपने घेरे में ले लेती हैं और तरह-तरह से परेशान करती हैं। हां, कभी-कभी तो उसे भी अनायास अकालमृत्यु के माध्यम से अपनी विकृत योनियों में ले लेती हैं।

देखो; मृत्यु जो है एक व्यापक परिवर्तन है। और परिवर्तन कब होता है? जब किसी को नई वस्तु या नये आयाम की तलाश होगी। जैसे - वस्त्र आदि हैं कहीं से फट गया तो आप उसका सुधार करवाओगे न। लेकिन जब फटते-फटते एकदम से चिथड़ा हो जायेगा तो उसे बदल दोगे। बस, उसी तरह से सूक्ष्म-स्थूल के संयोजन से जीव भी जब तक स्वस्थ व शक्तियुक्त होता है तब तक वह भौतिक रूप में प्रकृति में रहता-बसता है। हां; जब वह जीर्ण-शीर्ण हो जाता है तो मृत्यु जैसे परिवर्तन के माध्यम से अपना स्थूल नष्ट कर लेता है और सूक्ष्म के माध्यम से ब्रह्मांड में भिन्न-भिन्न योनियों में तब तक भ्रमण करता रहता है जब तक दूसरा स्थूल किसी के गर्भ के माध्यम से धारण नहीं कर लेता।

से मृत्यु योग बन रहा था। ज्योतिषीय गणना के आधार पर उसकी हस्त रेखा में मार्केश की महादशा का संकेत था। सारी स्थितियों को देखने-परखने के उपरान्त मैंने उसको आश्वस्त करते हुए बताया कि- तुम्हारे ऊपर मार्केश की दशा चल रही है। इस भयानक घटनाक्रम से तुम बच कर जो नया जीवन पा गये हो; यह सब माई की कृपा व इस महायज्ञ के हितकर प्रभाव का प्रतिफल है। अब तुम्हारे जीवन में, मृत्यु का भय अकारण तब तक उत्पन्न नहीं होगा जब तक सूक्ष्म-स्थूल का संतुलित संयोजन तुमसे जुड़ा रहेगा। तो यहां पर इस घटनाक्रम को बताने का मेरा तात्पर्य यह है कि- एक निश्चित सीमा तक ज्योतिष का भी अपना महत्व होता है। व्यक्ति के जीवन के आगे बढ़ने व समाप्त होने की घटना प्रक्रिया के अंतर्गत यह आवश्यक नहीं है कि हम किसी गुह्य या बाह्य विद्या के प्रतिफल को निश्चित मानकर बचाव पक्ष का प्रयास ही छोड़ दें। मृत्यु की निश्चितता को लेकर के, ब्रह्मा जी ने पहले से कोई पट्टा नहीं लिख रखा है और न ही कोई व्यक्ति माथे पर लिखवा के लाया है। हां; घटनाएं-दुर्घटनाएं होती अवश्य हैं और उसी क्रम में घटनाओं का क्रम किसी न किसी रूप में निर्धारित भी होता रहता है। जब हम किसी घटनाक्रम के तहत उस व्यक्ति का जीवन नहीं बचा पाते हैं तो हार कर मृत्यु की निश्चितता के गहन धुंध के बीच एक आधारहीन समझौता कर लेते हैं। यानी मृत्यु की अनिश्चितता को निश्चितता में परिवर्तित कर देते हैं। जबकि हमारे आध्यात्मिक क्षेत्र में ऐसे धार्मिक अंधविश्वासों के लिए कोई स्थायी या विश्वसनीय स्थान नहीं है।

❑ गुरूजी! यह अकाल-मृत्यु क्या है? कृपया, इसे भी स्पष्ट करे?

यह अकाल मृत्यु का क्रम अनादि काल से ही बड़ा विवादास्पद रहा है और आज भी है। देखो; यहां पर तुम्हारी ज्योतिष फिर आ गयी। मान लो; जैसे कोई व्यक्ति ज्योतिषशास्त्र का ज्ञानी है या सांख्य-योग का मर्मज्ञ है तो वह अपने अध्ययन-चिंतन या गणना के आधार पर किसी व्यक्ति(जो सूक्ष्म-स्थूल का संयोजन है) के जीवन की यात्रा के बारे में एक संभावना व्यक्त करता है कि वह अस्सी वर्ष तक जीवित रहेगा। लेकिन किसी विशेष घटनाक्रम में फंस कर उसकी मृत्यु बीस-बाईस वर्ष की आयु में ही हो गयी। तो यहां पर हम उस घटनाक्रम के तहत यही न कहेंगे कि- उसकी अकाल मृत्यु इस विशेष घटनाक्रम के तहत हो गयी। यानी वह सम्भावित समय से पहले ही मर गया।

अब यहां पर मृत्यु को ले करके हम कई संभावनाओं के घेरे में आकर खड़े हो जाते हैं।

हमारी वैदिक परंपरा के अनुसार एक सामान्य व्यक्ति की आयु एक शतक आंकी गयी है। उसी क्रम में पूरे शतक को चार आश्रम (बाल्यावस्था, युवावस्था, वानप्रस्थ व सन्यास आदि) में बांटा गया है। यदि कोई सामान्य व्यक्ति किसी घटनाक्रम में फंस कर अपने जीवन का शतक पूरा किये बिना ही अपना अन्त कर लेता है यानी सूक्ष्म-स्थूल के संयोजन को तोड़कर अपने को समाप्त कर लेता है तो उसकी मृत्यु कुसमय-असमय के अंतर्गत ही मानी जायेगी। इस अल्प समय की मृत्यु को भी अकालमृत्यु के अंतर्गत ही माना जायेगा। कभी-कभी कुछ जीव अपने पूर्व जन्मों के कर्म-धर्म के आधार पर असंतुलित अवस्था में ही सूक्ष्म-स्थूल का एक दुर्बल संयोजन लेकर गर्भ में प्रवेश कर जाते हैं। परिणाम यह होता है कि उन जीवों की मृत्यु अल्पायु में ही हो जाती है लेकिन वे अकाल मृत्यु के अंतर्गत नहीं आते। सामान्यत: किसी घटनाक्रम के अंतर्गत- जलकर मरना, जलाशय में डूब कर मरना, प्लेग, हैजा, कैंसर-एड्स आदि बीमारी से मरना, दूसरे व्यक्ति के बल प्रयोग द्वारा मरना, जानवरों द्वारा मारा जाना, बड़ी दुर्घटना (रेल दुर्घटना, बस दुर्घटना आदि) में मरना व किसी भयानक हादसे आदि से मरना अकाल मृत्यु में आता है। ऐसी अकाल मृत्यु को आध्यात्मिक प्रयोगों व प्रभावों द्वारा टाला जा सकता है। क्योंकि ऐसी अकाल मृत्यु किसी विशेष घटनाक्रम में घटित होती है। तांत्रिक उपक्रम या किसी आध्यात्मिक माध्यम से घटनाक्रम के प्रभाव को कमजोर बना दो; मृत्यु टल जायेगी। इसी क्रम में, मैं अपना एक पूर्व अनुभव बताता हूं-

करीब सात वर्ष पूर्व कानपुर की एक महिला ने अपने कैदी पति के हाथ की रेखाओं का चित्र मेरे पास भिजवाया। उसका पति जो जाति का ठाकुर था- किसी घटनाक्रम के अंतर्गत दफा 302 का मुल्जिम होकर कानपुर जेल में बंद था। उस ईसाई महिला ने अपने पति के हाथ की रेखाओं के आधार पर मुझसे सिर्फ दो प्रश्नों का उत्तर पूछा था- पहला-क्या मेरे पति की जमानत हो जायेगी? दूसरा- क्या वे 302 के अपराध से मुक्त हो जायेंगे? मैंने उसकी हस्त रेखाओं पर विचार करने के उपरान्त उसे बताया कि- अभी 90 दिन तक अपने पति के लिए जमानत का प्रयास मत करो। इसके साथ मैंने यह भी बताया कि, आगे चलकर किसी विशेष घटनाक्रम के अंतर्गत तुम्हारा पति सजा से मुक्त भी हो

तक परिवर्तित कर सकता है जब तक सूक्ष्म-स्थूल का सांमजस्य या संयोजन किसी न किसी रूप में सुरक्षित है। यही प्रकृति का शाश्वत नियम भी है। मान लो, कोई व्यक्ति पहाड़ पर चढ़ रहा है, यदि उसी क्रम में उसका पैर फिसल जाता है, तो नीचे विनाश है, और अगर ऊप र शिखर पर पहुंच जाता है तो वहां सृष्टि है, सृजन है। ठीक इसी तरह से मृत्यु की निश्चितता-अनिश्चितता का प्रश्न है। इसी तरह, यदि कोई व्यक्ति किसी घटनाक्रम में फंसकर मर जाता है तो वहां हम मृत्यु को पहले से निश्चित नहीं मानेंगे। हम तो कहेंगे कि वह आदमी उस घटना को टाल नहीं पाया, उस पर प्रभावी नहीं हो पाया, इस लिए वह कुसमय में मर गया। लेकिन उसका इस तरह से मर जाना पूर्व निश्चित नहीं था।

अब एक विपरीत उदाहरण देखो- एक व्यक्ति सौ वर्ष का है, उसका शरीर जर्जर हो चुका है। वह लम्बे समय से अस्वस्थ है। अब अगर आप उसकी मृत्यु को टालना भी चाहेंगे तो वह बर्दाश्त नहीं कर पायेगा। आप कोई तांत्रिक प्रक्रिया प्रयोग में लाना भी चाहेंगे तो वह उसे बर्दाश्त नहीं कर पायेगा। लेकिन उस प्रयोग का कुछ न कुछ प्रभाव तो वहां उस पर पड़ेगा ही। जैसे उसे चार घंटे के भीतर-भीतर मरना है तो हो सकता है वह दस-बारह घंटे में मरे। हां; प्रयोग या अनुष्ठान के बाद भी वह मृत्यु को प्राप्त होगा ही किन्तु फिर भी, किसी भी तरह से मृत्यु का समय उस घटनाक्रम में निश्चित नहीं था।

❑ गुरूजी! ज्योतिषशास्त्र जीवन को अल्पायु, मध्य आयु व पूर्णायु तीन भागों में विभाजित करता है। लेकिन जब आप कहते हैं कि- 'मृत्यु अनिश्चित' है तो क्या, आप ज्योतिष का उपहास नहीं उड़ा रहे हैं ?

नहीं भई; ऐसी कोई बात नहीं है। और ऐसा भी नहीं कि ज्योतिष से मैं अनभिज्ञ हूं। या कि ज्योतिष मैं जानता नहीं लेकिन यहां पर, बात मृत्यु की निश्चितता-अनिश्चितता को लेकर के, उस घटनाक्रम के परिवेश की हो रही है। जीवन में तमाम अच्छी-बुरी घटनाएं घटती रहती हैं। अगर कोई व्यक्ति किसी भयानक प्राणघातक घटना में फंस गया, तो अब यहां ज्योतिषशास्त्र तो यह बतायेगा कि आपका या किसी व्यक्ति का जीवन अस्सी साल है, थोड़ा और अनुभवी ज्योतिषी होगा तो कहेगा कि अस्सी साल, तीन माह, तीन दिन आदि-आदि। चलो, उसकी इस ज्योतिषीय भविष्यवाणी को मान लिया। गणना व चिंतन के आधार पर वह उस व्यक्ति को यह बतायेगा कि- अस्सी वर्ष की संभावित आयु के अन्दर- ४०, ५०, ६० वर्ष पर क्रमशः मृत्यु का योग भी है

यानी भयानक बीमारी या दुर्घटना से मृत्यु का योग है। अब अगर वह व्यक्ति इन तीनों घटनाक्रमों से बच जायेगा तभी तो अस्सी वर्ष तक पहुंच पायेगा। हां, अगर किसी प्राणघातक घटनाक्रम में फंस गया तो उसकी मृत्यु हो जायेगी लेकिन मृत्यु की इस निश्चितता-अनिश्चितता के मध्य ज्योतिष को भी तो एकदम से गलत नहीं कह सकते। हां, इस ज्योतिषीय गणना के सम्भावित भविष्यवाणी के आधार पर वह व्यक्ति उस प्राणघातक घटनाक्रम के पूर्व, यदि किसी अभिष्ट साधक या सिद्ध तांत्रिक के पास पहुंच जायेगा तो हो सकता है कि उसके प्रभाव या प्रयास से उस घटनाक्रम का प्रभाव नगण्य हो जाये और उस व्यक्ति का जीवन आगे की ओर बढ़ जायेगा। उस घटनाक्रम के अन्तर्गत मृत्यु की निश्चितता-अनिश्चितता में बदल जायेगी और उस व्यक्ति के सूक्ष्म-स्थूल का संयोजन प्रबल होकर आगे की ओर तब तक बढ़ता जायेगा जब तक अन्य आगे का घटनाक्रम उसे विशेष रूप से प्रभावित न करेगा। तो ऐसे में, हम किसी भी घटनाक्रम के पूर्व मृत्यु की निश्चितता को प्रमाणित नहीं कर सकते और न ही ज्योतिषीय भविष्यवाणी को एकदम से निरर्थक ही सिद्ध कर सकते हैं। क्योंकि ज्योतिषीय भविष्यवाणी का आधार सम्भावनाओं से जुड़ा होता है। इसी क्रम में, मैं तुम्हें एक पूर्व घटनाक्रम का संक्षिप्त वृतांत सुनाता हूं।

चार-साढ़े चार वर्ष पूर्व, अपने निवास स्थल से करीब १००-१२५ किलोमीटर की दूरी पर एक सम्पन्न व्यक्ति के यहां महासतचण्डी का यज्ञ करवा रहा था। उस महायज्ञ में ११-१२ पंडित कार्यरत थे। पूरी याज्ञिक प्रक्रिया मैं अपने निवास स्थल से ही सूक्ष्म गति द्वारा देख-समझ या नियंत्रित कर रहा था। यज्ञ के तीसरे दिन एक पण्डित को रात में हैजा हो गया मृत्यु उसके चारों तरफ तीव्रगति से चक्कर लगाने लगी। उसे बचाने के लिए, रात भर मैं तांत्रिक प्रक्रियाओं के अन्तर्गत जूझता रहा। क्योंकि मैं किसी भी स्थिति में यह नहीं चाहता था कि उस महायज्ञ में कोई विशेष बाधा पड़ने पाये। अन्ततः दूसरे दिन सुबह होते-होते वह हैजा जैसी प्राणघातक बीमारी से मुक्त हो गया, यानी उसका मृत्यु संकट टल गया। अन्तिम दिन यानी महायज्ञ के समापन के पूर्व जब मैं वहां पहुंचा तो उस रोगग्रस्त ब्राह्मण का हाल-चाल पूछा और पूर्णतः स्वस्थ देखकर मुझे आत्मसंतोष हुआ कि 'मां' के इस महायज्ञ में व्यवधान आते-आते रूक गया। महायज्ञ के समापन के उपरांत दूसरे दिन सुबह जब मैंने जिज्ञासावश उस पंडित का हाथ देखा तो मैं स्वयं आश्चर्य में पड़ गया कि- इस व्यक्ति पर तो दो दिन

[मृत्यु की निश्चितता-अनिश्चितता के मध्य कालचक्र के सापेक्ष में जीव की गति का चक्रीय विधान क्या होगा इस विवादास्पद प्रकरण के अन्तर्गत 'पूर्व घोषणा और अकाल मृत्यु'- विषय से सम्बन्धित प्रश्नों के समाधान हेतु श्मशान साधक 'अज्ञान' जी से दिनांक 3 जून 1992 (सांय) को लिए गये लम्बे साक्षात्कार का प्रमुख अंश प्रस्तुत है-]

❑ गुरूजी! कुछ अच्छे-सशक्त साधक अपनी मृत्यु का पूर्वानुमान लगाकर मृत्यु की घड़ी की घोषणा कर देते हैं। और उनकी यह घोषणा मृत्यु को निश्चित कर देती है, तो फिर, मृत्यु अनिश्चित कैसे हुई- कृपया, इसे थोड़ा स्पष्ट करें?

जहां तक मृत्यु के पूर्वाभास होने की बात है; तो पूर्वाभास तो कई चीजों, घटनाओं का हो सकता है। आप कोई कार्य कर रहे हैं और यदि कोई त्रुटि उसमें रह गई है तो परिणाम का अंदाजा तो हो ही जायेगा। जैसे- शरीर क्षीण हो रहा है तो आपको कुछ न कुछ पूर्वाभास भी हो सकता है- कोई ऊट-पटांग स्वप्न भी दिखाई दे सकता है जिससे आप जीवन के प्रति उदासीन या हतोत्साहित हो सकते हैं। उन्हीं कल्पित-काल्पनिक निराधार तथ्यों के आधार पर यह कहना शुरू कर देते हो कि- मृत्यु आ गयी है, मृत्यु निश्चित है। और, उस घटनाक्रम के अन्तर्गत आपने मृत्यु को-निश्चित कर दिया। लेकिन यदि, आप किसी ऐसे व्यक्ति की तलाश करते जो उस बन रहे घटनाक्रम से किसी भी तरह परा-अपरा विधि से आपको मृत्यु के घेरे से बाहर खींच लेता तो उस घटनाक्रम में मृत्यु कहां निश्चित रह पाती? यदि उसी घटनाक्रम के तहत वह जीर्ण-शीर्ण सा दिखने वाला व्यक्ति या उसके घर वाले कालचक्र के सापेक्ष में एक दृढ़संकल्प के साथ महामृत्युंजय का अनुष्ठान आरम्भ करा देते तो मृत्यु पर टेक न लग जाती। या निश्चितता को अनिश्चितता में बदलने के लिए और भी तो उपाय या साधन बन सकते थे।

सच पूछो तो, प्रकृति में जहां विनाश है वहीं कदम दो कदम पर सृष्टि भी है। भई, मैं तो कहता हूं कि-घटनाक्रम के प्रभाव को किसी न किसी धार्मिक-भौतिक उपक्रम के तहत टाल दो, और उसी क्रम में जीवन की गाड़ी आगे चल गयी तो चल गयी। और उसी श्रंखला में जब तक फिर से सूक्ष्म-स्थूल शरीर में परिवर्तन न हो जाये तब तक व्यक्ति के जीवन की गाड़ी आगे की ओर चलती रहेगी। विडम्बना यह है कि, जब हम किसी विशेष घटनाक्रम के तहत आकर फंस जाते हैं, सूक्ष्म-स्थूल एक-दूसरे से प्रभावित होने लगते हैं तो मृत्यु की निश्चितता के अतिरिक्त और आगे को कुछ सोच ही नहीं पाते। वैसे तो, सृष्टि और विनाश का क्रम दोनों साथ-साथ चलता रहता है, पर निश्चितता-अनिश्चितता का क्रम भी कालचक्र के सापेक्ष में समर्थ व्यक्ति तब

सोचता तो वह सच में एक सफल न्यायाधीश होता। लेकिन अभी वह न्यायाधीश कहां है? वह तथाकथित न्याय की कुर्सी पर बैठा व्यवस्था की एक कठपुतली मात्र है। यूं समझो कि- आंख होते हुए भी वह अंधा है, कान होते हुए भी बहरा है, और मुंह होते हुए भी वह गूंगा व्यक्ति है। क्योंकि वह तो, कानूनी-गंडासा चलाने वाला एक सफल-असफल कसाईमात्र बन कर रह गया है। हां; अगर वह अपने हाथ से गंडासे को हटाकर न्यायिक-धार्मिक परिप्रेक्ष्य में आंख से देखने का प्रयास करे, कान से सुनने का प्रयास करे और मुंह से बोलने का प्रयास करे तो उसे किसी भी घटित घटनाक्रम में विकृतियों से युक्त मानव दिखाई देगा, धूर-धूसरित कहीं न कहीं मानवता दिखाई देगी। तो वह निश्चित रूप से न्याय शिला पर बैठा सुधार की बात सोचेगा, सृजन की बात सोचेगा; न कि विध्वंश की। और तभी सही अर्थों में, आदमीयत के तहत वह एक सफल न्यायाधीश हो सकता है? या यूं कहो कि- उसके अन्दर का आदमी कालांतर तक सूक्ष्म-स्थूल या सूक्ष्म रूप में जीवित रह सकता है।

पूर्व घोषणा और अकालमृत्यु

जीवन में उन्होंने सारे के सारे दुष्कर्म किये। तो यहां पर कोई यह क्यों नहीं कहता कि- वह बहुत बड़ा दुष्कर्मी नेता था, दुष्ट था- यह तो अच्छा हुआ कि उसकी मृत्यु हो गयी। चलो, अच्छा हुआ कि इसके मरने से पृथ्वी एक बहुत बड़े दुष्कर्मी व्यक्ति के बोझ से मुक्त हो गयी। हां; तो इस क्रम में जीव के सूक्ष्म-स्थूल की क्या गति होगी? कभी सोचा है तुमने?

तो देखो ऐसा है कि- लोग अपने भौतिक स्वार्थों के तहत पाप-पुण्य की परिभाषा तथाकथित धर्म-अधर्म की आड़ लेकर बनाते-बिगाड़ते रहते हैं। सबसे बड़ी भौतिक बिडम्बना तो यह है कि- समर्थ व सशक्त व्यक्ति के गुण दोष को लोग अपने-अपने स्वार्थों के तहत जानने-पहचानने का प्रयास करते हैं। हां; तो ऐसे अव्यवस्थित क्रम में जो भी भौतिक संसाधनों में लिप्त धर्मान्ध व्यक्ति बोलेगा वह यही न कहेगा कि- अगर कोई अपराधी कानून की निगाह से बच भी जायेगा तो ईश्वर उसे सजा अवश्य देगा। पर तुम यह शत-प्रतिशत सच मानो कि दंड प्रक्रिया ही किसी घटनाक्रम का उचित समाधान नहीं है, व्यक्ति के सूक्ष्म-स्थूल के संयोजन के प्रति उचित न्याय नहीं है। क्योंकि किसी भी घटित घटनाक्रम में वास्तविक अपराधी कौन है, इसका सत्यापन करना इतना सरल नहीं है जितना तुम सब लोग समझते हो!

❑ तो क्या, न्यायाधीश आदमी नहीं होता है; गुरूजी!

देखो; मैंने जिस आदमी की बात की है वो मनु की उन संतानों की बात की है जिसके अन्दर अपराधिक प्रवृति की कोई समझ ही नहीं थी। जो अपराध को जानते ही नहीं थे। उस समय दंड-विधान की ऐसी कोई व्यवस्था भी नहीं थी। केवल सुधार की प्रक्रिया थी, विकास की प्रक्रिया थी। सूक्ष्म-स्थूल के संयोजन का प्राकृतिक संतुलन निरंतर बना रहता था। व्यक्ति यदि गुमराह हो गया है तो उसको सही राह पर लाने की बात सोची जाती थी।

मनु के समय में, हमारा पूर्व समाज व देश भौतिक दृष्टि से ज्यादा विकसित व संवर्द्धित तो नहीं था लेकिन मानवीय दृष्टि से मानवीय मूल्यों के तहत स्वस्थ व अपने-दूसरों के प्रति जागरूक था। लेकिन धीरे-धीरे सृष्टि-विनाश की प्रक्रिया के तहत सूक्ष्म-स्थूल से जुड़ा व्यक्ति अपने अन्दर तमाम सारी विकृतियों को समावेशित करता गया। हो सकता है; इन मानवीय विकृतियों की इस उतार-चढ़ाव की प्रक्रिया में हमारे ऋषि मुनियों और गौत्र-

ऋषियों का आपसी मतभेद व स्व-उदासीनता एक विशेष कारण बना हो। और उसी ऊहा-पोह की स्थिति में, हमारा देश-समाज सबका सब इधर-उधर के घटनाक्रम में इतना उलझ-घुमड़ गया कि समस्या को ही समाधान और समाधान को समस्या समझने लगा। उन्हीं सब मानवीय-अमानवीय विकृतियों का अवशेष हमारा देश-समाज-विश्व सबका सब बन चुका है। तो तुम्हीं सोचो कि- निरंतर घटनाक्रम के तहत अपराधिक प्रवृतियों से जुड़ता-टूटता हुआ व्यक्ति पूर्णत: आदमी कैसे हो सकता है।

वैसे भी; तुम सामान्य व्यक्ति को तमाम सारी धार्मिक भौतिक विकृतियों के तहत टेढ़ा-मेढ़ा आदमी तो मान सकते हो लेकिन तथाकथित विशिष्टि व्यक्तियों को सरलता से पूर्णत: आदमी मान लेना कम से कम आदमीयत के लिए एक बहुत बड़ी भूल होगी। सच पूछो तो; सूक्ष्म-स्थूल से निर्मित जीव की सात्विक गति के आधार पर ही आदमी या आदमीयत का न्यायिक या धार्मिक निर्णय किया जा सकता है।

हमारा जो न्यायाधीश है, उसके अन्दर की सबसे बड़ी समस्या उसका अहम् है। तथाकथित न्याय की कुर्सी पर बैठा वह किसी न किसी रूप में क्रमिक गति से सोचता रहता है कि- मैं न्यायाधीश हूं, परमेश्वर हूं, मुझे इस तथाकथित विकृत समाज से अलग- थलग रहना चाहिए आदि-आदि। जरा सोचो, यह उसकी कितनी बड़ी आध्यात्मिक भूल है। समाज व सामाजिक मूल्यों से कटकर या अलग-थलग रहते हुए उस पर न्याय करने का दम्भ भरना कम से कम मेरी समझ में तो नहीं आता है। सच मानो; ऐसी ऊहा-पोह की स्थिति में, वह सूक्ष्म-स्थूल से संयोजित व्यक्ति पर जो भी न्यायिक निर्णय लेगा वह आध्यात्मिक व धार्मिक दृष्टि से निश्चित दोषपूर्ण होगा और उस तथाकथित दोषपूर्ण तथ्य से वह भौतिक रूप में चाहे अलग-थलग दीखे लेकिन आध्यात्मिक दृष्टि से यह सब सम्भव नहीं है। इसलिए आज के संदर्भ में, तथाकथित न्यायिक परिप्रेक्ष्य से जुड़ा न्यायाधीश न तो आदमीयत की रक्षा कर सकता है और न ही सही मायने में स्वयं को कालांतर तक सत्य की परिधि में सुरक्षित रख सकता है।

हां; इसके विपरीत वह न्यायिक परिप्रेक्ष्य में रहते हुए सुधार की किसी प्रक्रिया को अपनाता या अपराधी की अपराध-प्रवृति को नष्ट करने की बात

आप मृत्यु पर टेक लगाने की बात क्यों नहीं सोचते हो? तुमने क्यों हार को ही स्वीकार कर लिया है? तुम यह निश्चित मानो कि किसी भी घटित घटनाक्रम के अन्तर्गत प्रत्येक क्रिया के विरूद्ध प्रतिक्रिया होती है। यह वैज्ञानिक तथ्य है। ऐसी स्थिति में, तुम बार-बार दंड -प्रक्रिया से क्यों जुड़ना चाहते हो या घर-समाज को जोड़ना चाहते हो?

एक तथाकथित अपराधी को किसी घटनाक्रम के अन्तर्गत न्यायाधीश दस-पन्द्रह वर्ष या बीस वर्ष का दंड दे देता है। लेकिन कभी किसी ने यह भी सोचा कि बीस वर्ष बाद उसका जीवन क्या होगा। कठोर विध्वंसक दंड प्रक्रिया से हटकर यदि तथाकथित अपराधी से पश्चाताप करवाया जाता, प्रायश्चित करवाया जाता तो हो सकता है कि वह अपराधी स्वयं के अन्दर सुधार की बात सोचता, सृजन की बात सोचता। और इस प्रक्रिया के तहत, वह एक अच्छा मानव बनने की बात सोचता। लेकिन हमारा यह तथाकथित तथ्यहीन भौतिक क्रूर-दंड विधान बड़ी सरलता से किसी के भी जीवन को नष्ट कर देता है। तो सूक्ष्म-स्थूल के संयोजन के अन्तर्गत, हमारे जीवन-मृत्यु के सम्बन्ध में यह दंड-प्रक्रिया एक बड़ा अभिशाप है। एक बहुत बड़ा दुष्कर्म है। एक बहुत बड़ा भ्रम है। अरे भई; तुम्हारे इस दंड-प्रक्रिया के अन्तर्गत, किसी जीव का सूक्ष्म कहां प्रभावित होता है। उसे तो प्रकृति भी नहीं नष्ट-विनष्ट कर सकती। हां; उसकी यात्रा का क्रम इधर-उधर बदल जाये, बहक जाये; यह बात दूसरी है। तो तुम अपनी घिसी-पिटी व्यवस्था के तहत जीव के स्थूल को बार-बार दंडित करके आखिर क्या पा जाते हो? हां; उसकी अपराधिक प्रकृति में साझेदारी करके तुम भी अपराधिक प्रवृति से किसी न किसी अनुपात में जुड़ अवश्य जाते हो। इसलिए हमें दंड की बात ही न सोचकर तथाकथित अपराधी के लिए प्रायश्चित की भी बात सोचनी चाहिए जिससे जन्म-जन्मांतर तक जीव के सूक्ष्म-स्थूल का संयोजन सृजनात्मक बना रहे।

अब तुम बहुत दूर तक मत जाओ। पलट कर स्वयं कुछ वर्षों पीछे के विगत को देख-समझ लो। स्वतंत्रता प्राप्ति के समय, देश में कितनी जेलें थी? तिहाड़ जेल, नैनी जेल- दो चार-दस बस न! लेकिन आज जेलों के आकार किस गति से बढ़ रहे हैं। पहले तो गृहमंत्री ही जेलों की व्यवस्था को देखता था किन्तु अब तो अलग से भी जेल मंत्री-उपमंत्री आदि भी होने लगे हैं। हमारा दंड-विधान तो घटित घटनाक्रम के तहत अपराध व तथाकथित अपराधियों

पर रोक लगाने के लिए होना चाहिए। लेकिन सच पूछो तो अपराध और अपराधी इस तेजी से बढ़ रहे हैं कि जेलें रोज छोटी होती जा रही हैं। और आये दिन हमें जेलों के आकार को बढ़ाना पड़ रहा है। किसी भी घटनाक्रम के अन्तर्गत न्यायाधीश तो केवल दंड देना जानता है। लेकिन उसने दंड-प्रक्रिया के अन्तर्गत उसके सुधार की बात कितनी सोची। इसी क्रम में एक मुख्य सवाल यह भी है कि भौतिक आयाम में अपराध होता क्यों है? उसे रोकने का प्रयास क्यों नहीं किया जाता? क्यों उसे दंड-प्रक्रिया के अन्तर्गत विकसित व संवर्द्धित किया जाता है?

अपराध को रोकने की सही दिशा क्या है; इस पर कोई क्यों नहीं सोचता? लेकिन यह सब, तुम्हारा वर्तमान समाज और उसे चलाने वाले नहीं सोचेंगे। जानते हो; इसके पीछे क्या रहस्य है? पहली बात तो यह है कि- विश्व में आये दिन घटित हर घटनाक्रम के तहत जाने-अनजाने में लोग अपराधिक श्रृंखला से जुड़ते जा रहे हैं। पूरा का पूरा ब्रह्मांड सूक्ष्म-स्थूल के तहत दूषित व नारकीय करते जा रहे हैं। यदा कदा, धर्म के अन्तर्गत अर्धम की आड़ लेकर तुम्हें धर्मान्ध बनाया जाता है और इसी क्रम में पाप-पुण्य की थोथी परिभाषा बनाकर तुम्हें गुमराह या दिग्भ्रमित किया जाता है और कालान्तर तक दिग्भ्रमित किया जाता रहेगा।

जरा सोचो; तुमसे तो कहा जायेगा कि झूठ मत बोलो, सत्य मार्ग पर चलो, चोरी करना पाप है, हत्या करना अपराध है आदि-आदि। लेकिन वही तुम्हारा नेता, बड़ा अधिकारी या दंडाधिकारी दिन में पिचहत्तर प्रतिशत झूठ बोलेगा, दंड प्रक्रिया के बचाव पक्ष को ध्यान में रखकर हत्या करवायेगा या करेगा। तो ऐसे में जीव के सूक्ष्म-स्थूल की क्या स्थिति बनेगी? कभी सोचा है- तुमने? हां; तथाकथित धर्म की उल्टी-सीधी मान्यताओं के तहत तुम्हें पाप-पुण्य का तोता पाठ अवश्य पढ़ाया जायेगा। इसी क्रम के तहत तुम्हें एक उदाहरण देता हूं-

जब एक तथाकथित भ्रष्ट व बड़ा दुष्ट नेता मरता है तो लोग बड़ी श्रद्धा और विश्वास के साथ उसे श्रद्धांजलि देने जाते हैं, उसका गुणगान करते हैं। गुणगान करते-करते यहां तक कह डालते हैं कि नेता जी बहुत सज्जन व्यक्ति थे, धर्मनिष्ठ थे, परोपकारी प्रवृति के थे आदि-आदि। जबकि अपने भौतिक

मान लो हत्या प्रकरण से ही सम्बन्धित कोई घटित घटनाक्रम है। तो उस घटनाक्रम के पूरे प्रकरण में कौन-कौन किस-किस रूप में जुड़ता-टूटता है; यह तो ध्यान में रखना ही होगा।

किसी हत्याकाण्ड में, भुक्तभोगी होगा, अपराधी यानी तथाकथित हत्यारा होगा,व्यवस्था का एक घिसा-पिटा अंग होगा जो उस घटना प्रकरण को न्यायालय के समक्ष कुछ गवाहों के साथ प्रस्तुत करता है। भौतिक साक्ष्यों के आधार पर न्यायाधीश उस तथाकथित हत्यारे को दण्डित करता है। तो इस घटित घटनाक्रम के पूरे प्रकरण में हर व्यक्ति एक-दूसरे का मुख्यत: विरोधी ही तो बनता है। हां; यदि न्यायाधीश उस तथाकथित हत्यारे को बिना दंड के छोड़ देता है तो वह परोक्ष-अपरोक्ष में उसका हितैषी भी बन जाता है। अब ऐसी स्थिति में सब के सब एक-दूसरे से अलग कहां हुए। यह तो हुआ भौतिक स्तर पर विरोध-प्रतिरोध। लेकिन आध्यात्मिक स्तर पर पूर्वजन्मों के आधार पर सब के सब जो घटनाक्रम से जुड़े हुए हैं वे किसी न किसी रूप में एक दूसरे के शत्रु-मित्र अवश्य रहे होंगे। वैसे भी; जीवन के विविध आयामों को देखते-समझते हुए यह निर्विवाद रूप से कहा जा सकता है कि प्रकृति के अन्दर का हर घटित -घटनाक्रम (जिसमें किसी जीव का सूक्ष्म-स्थूल प्रभावित होता है) किसी न किसी रूप में व्यक्ति से जुड़ता-टूटता रहता है। इन सब का सम्बन्ध जन्म-जन्मान्तर से जुड़ा रहता है और आगे आने वाले जन्मों तक निरंतर जुड़ता-टूटता रहेगा। तो, तुम्हीं बताओ कि हर घटनाक्रम पूरे प्रकरण से न्यायाधीश का अलग कहां अस्तित्व बनेगा? आखिर घटनाक्रम में कोई न कोई अपराधी होगा और कोई न कोई उसका विरोधी या समर्थक बनेगा। तो इस अपराधिक घेरे से न्यायाधीश अलग कहां हो पायेगा।? फिर ये सब गहराई से जानने - समझने के लिए अध्यात्म की गहराई में उन सब को जाना चाहिए जो निर्णायक की भूमिका का निर्वाह भौतिक आयामों में कर रहे हैं।

❑ हां गुरूजी! इस सारी व्यवस्था में भौतिक स्तर पर गड़बड़ तो है। अत: निर्दोष भी दंडित होता है लेकिन फिर भी कुछ अपराधी ..... ?

लेकिन प्रश्न यह उठता है कि-वास्तविक अपराधी कौन है? किसने कितना अपराध किया है; इसका भौतिक स्तर पर तुम्हारे पास न्यायोचित क्या

मापदण्ड है? देखो; हमारा जो तर्कशास्त्र है, वह धर्म की गहराई में जाकर दोहरी-तेहरी नीतियों के तहत नहीं चला करता। वह तो केवल तलवार की धार की तरह एक ही तरफ चलता है। यानी सत्य मार्ग की ओर। अगर तलवार की धार किसी के गले पर गिरेगी तो निश्चित उस का गला कटेगा। उसी तरह धर्म-अध्यात्म का तर्क विशुद्ध न्याय व सत्य पर आधारित होता है; अन्य किसी संवेदना या असत्य पर नहीं।

लेकिन भौतिक व्यवस्था के तहत जो भी हमारा सड़ा-गला कानून है; संविधान है; वह एक गंडासा है, खड्ग है। और उस गंडासे को चलाने वाला कसाई होता है। कसाई तो एक बार रहम भी कर जायेगा कि यह व्यक्ति निरपराध है। लेकिन गंडासा अगर एक बार चल गया तो गर्दन काट देगा। तो न्यायाधीश जो है वो कानून का एक कसाई है। और कानून जो है वो एक गंडासा है। अब न्यायाधीश ने दंड तो दे दिया। कसाई का काम तो उसने कर दिया। उस प्रक्रिया में गंडासा उससे चल गया। वह किसी न किसी का गला काट ही देगा। ऐसे में, वह न्यायाधीश पुन: चाहकर भी गंडासे को चलने से नहीं रोक पायेगा। वह फिर से उसे वापस नहीं कर सकता। लेकिन यदि वह इस 'कसाई-गंडासे' वाली प्रक्रिया से हटकर, उसे सामान्य जीवन जीने की क्षमता किसी प्रायश्चित के तहत प्रदान करता या दंड प्रक्रिया में ऐसा विधान होता तो न्यायाधीश कम से कम लोक-परलोक के अन्तर्गत किसी अपराधिक प्रवृति से न जुड़ता। और इस बेढंगी प्रक्रिया से अपराध का रोग फैलने से भी रूकता। लेकिन ऐसा होता कहां है? तो बस इतना समझ लो कि इस 'कसाई-गंडासे' वाली प्रक्रिया में निर्दोष या दोषी की विवेचना ईमानदारी से करना बड़ा कठिन काम है।

❑ गुरूजी! किसी व्यक्ति ने किसी की हत्या कर दी और अपराधी के बारे में कहा जा जाता है कि उसे एक ही बार सजा मिल सकती है। वह सजा या तो कानून दे या फिर भगवान। यदि वह अपराधी किसी तरह कानून की निगाह से बच जाता है तो उसे ईश्वर अवश्य सजा देता है और यदि कानून सजा दे देता है तो प्रकृति उसे सजा नहीं देती। यह बात कहां तक सत्य है; कृपया, इसे स्पष्ट करें ?

भई, तुम लोग दंड-प्रक्रिया की ओर ही ज्यादा क्यों अग्रसर होते हो ? आप मानवता के उत्थान की बात क्यों नहीं सोचते हो? मानवता के विकास की बात क्यों नहीं सोचते? जीवन को आगे बढ़ाने की बात क्यों नहीं सोचते?

परा-अपरा के मध्य, वर्षों से शोधरत होने के कारण मुझे ब्रह्मांड में सैंकड़ों-हजारों जीवों के सूक्ष्म भिन्न-भिन्न स्थितियों में मिले जो आत्महत्या जैसे कुकृत्य के अन्तर्गत अपना स्थूल छोड़ कर अलग हो गये। सैंकड़ों वर्षों से वे सूक्ष्म आकाश-पाताल और पृथ्वी के मध्य भिन्न-भिन्न स्थितियों में भटक रहे हैं पर उनका पुनर्जन्म नहीं हो पा रहा है। उन्हीं सूक्ष्मों में से मैंने दो-चार सूक्ष्मों का गहराई से तांत्रिक अध्ययन किया। अपने शोधपरक तांत्रिक अध्ययन के अन्तर्गत मुझे जो परिणाम मिले वे इस प्रकार हैं-

एक पति-पत्नी ने करीब अढ़ाई सौ वर्ष पूर्व घरेलू कारणों (विशेषत: नि:संतान होने के कारण) से ऊबकर एक ही समय में जहर खाकर आत्महत्या कर ली। उस घटनाक्रम के पूरे प्रकरण में न्यायिक प्रक्रिया व भौतिक व्यवस्था के अन्तर्गत उन दोनों के परिवार वालों को न्यायाधीश द्वारा दंडित होना पड़ा। करीब बारह-तेरह वर्ष पूर्व जब मैंने पूरे पूर्व प्रकरण का सूक्ष्मीय गति से अध्ययन किया तो मुझे प्रतिफल के रूप में यह मिला कि-उन दोनों ने प्रेत बाधा से ग्रसित होकर आत्महत्या की थी, नि:संतान होने का कारण तो एक भौतिक कारण बना। उन दोनों भुक्तभोगी सूक्ष्मों का तो मैंने पूर्वजन्म करा दिया पर उनके परिवार वालों के सूक्ष्मों व न्यायिक प्रक्रिया से जुड़े उस न्यायाधीश के साथ मैं कोई न्याय नहीं कर सका। क्योंकि वे चारों-पांचों सूक्ष्म अपने भौतिक अपराध व पूर्व जन्मों का प्रतिफल आज भी आकाशीय पिंडों में इधर-उधर भटकते हुए भोग रहे हैं। सैंकड़ों वर्षों से भटकते हुए ये चारों-पांचों सूक्ष्म-विकृतावस्था में तमाम लोगों को परेशान ही नहीं कर रहे हैं बल्कि तमाम लोगों को आत्महत्या करने के लिए परोक्ष-अपरोक्ष में विवश कर रहे हैं। तो इस विगत घटनाक्रम से यह स्पष्ट हो जाता है कि कहीं न कहीं; किसी न किसी रूप में अपराधिक प्रवृति किसी न किसी से जुड़ती-टूटती रहती है।

इसी क्रम में, करीब सात वर्ष पूर्व एक व्यक्ति रात में (तीन-साढ़े तीन बजे) मेरे पास आया। उस समय मैं गहरी नींद में सो रहा था। साम्प्रदायिक विवाद के कारण चारों तरफ कर्फ्यू लगा हुआ था। मैं चौंककर उठा और उससे ज्यों ही मिला तो उसने मेरा पैर पकड़ लिया और रो-रो कर कहने लगा कि- 'गुरूजी! मेरे बेटे ने अपनी पत्नी से ऊबकर आत्महत्या करने के लिए गले में फंदा डाल लिया है। दांत-वांत बैठ गया है। इस समय अस्पताल में है। पुलिस केस हो गया है। चिकित्सकों का कहना है कि- उसका जीवन मात्र दो तीन

घंटों के लिए अवशेष है।' इतना कहने के बाद वह फूट-फूट कर रोने लगा। देर तक सूक्ष्मीय गति के अन्तर्गत अपने को केन्द्रित करने के उपरांत मुझे उसे बचाने के लिए कोई ठोस स्रोत नहीं मिला। थोड़ी देर बाद स्वयं को केन्द्रित करने पर संयोग से मुझे एक महिला तांत्रिक का एक जिन्न अनायास सड़क पर टहलते मिला। उसी के सहयोग से मैंने किसी तरह उस भुक्तभोगी युवक का जीवन बचा लिया। तो इस विगत घटनाक्रम से तुम बस इतना समझ लो कि आत्महत्या जैसे कुकृत्य के उपरान्त भुक्तभोगी के सूक्ष्म को कितने-कितने भटकावों का सामना करना पड़ता है। और उसका पुनर्जन्म होना कितना कठिन हो जाता है।

इसी क्रम में, आत्मदाह जैसा एक जघन्य कुकृत्य सामने आता है। इस प्रकरण में बस इतना समझ लो कि आत्मदाह जैसे घटित घटनाचक्र में फंसे व्यक्ति के सूक्ष्म का पुनर्जन्म आत्महत्या वाले सूक्ष्म से सैंकड़ों गुना ज्यादा कठिन हो जाता है। क्योंकि अग्नि तत्व के समाधान में तांत्रिक उपक्रम भी ज्यादा उपयोगी नहीं हो पाता। हां; उस घटनाक्रम से जुड़े व्यक्तियों की भी बहुत दुर्गति होती है। यहां तक कि मृत्यु के उपरान्त उनके सूक्ष्म भी किसी न किसी रूप में भुक्तभोगी के सूक्ष्म से जाकर मिल जाते हैं और सैंकड़ों-हजारों वर्ष तक आकाशीय व पातालीय पिंड़ों में विचरण करते रहते हैं। वे सूक्ष्म अपनी विकृत स्थिति में चलते-चलते और भी लोगों को अपनी ओर खींचते रहते हैं।

क्यों? अब तो तुम्हें यह समझ में आ गया होगा कि किसी भी आत्महत्या या आत्मदाह जैसे घटनाक्रम में जुड़े व उससे सम्बन्धित व्यक्तियों की कैसी-कैसी दुर्गति होती है। हां; ऐसे घटनाक्रमों में न्यायिक प्रक्रिया से जुड़े व्यक्तियों को बड़ा सोच समझ कर किसी आध्यात्मिक साधक के सहयोग से एक उचित न्यायिक निर्णय लेना चाहिए।

❑ गुरूजी! लेकिन क्या यह जरूरी है कि जिसे न्यायाधीश दंड दे रहा है उससे उसका पूर्व जन्मों का कोई सम्बन्ध हो ही?

देखो; बिना किसी कारण के किसी से किसी का कोई सम्बन्ध नहीं बना करता है। यह निर्विवाद रूप से निश्चित मानो कि किसी भी घटित घटनाक्रम से सम्बन्धित लोगों का भौतिक स्तर पर कोई न कोई तो सम्बन्ध बनता ही है।

प्रक्रिया में वह न के बराबर दोषी-अपराधी होगा। और आगे आने वाले जन्मों में वह दोष भी धर्म-कर्म के आधार पर विनष्ट हो सकता है।

इसी क्रम में, अगर हम गीता के कर्मयोग की ओर दृष्टिपात करें तो हमें यह भी अनुभव होगा कि- हम तो निमित्त मात्र हैं, कारण की उत्पति का स्रोत कोई और है। तभी तो कुरूक्षेत्र के मैदान मे श्रीकृष्ण अर्जुन को उपदेश देते हुए कहते हैं - 'हे अर्जुन! तुम तो निमित्त मात्र हो। तुम कहां कुछ करते हो? तुमसे मैं जो कुछ करवाता हूं, वही तुम करते-धरते हो। हां, अगर हम इसी उपदेश को किसी घटित घटनाक्रम से जोड़ दें तो उस स्थिति में तुम अपराधी किसको मानोगे? लबोलवाब, बस इतना समझ लो कि- किसी भी घटित घटनाचक्र में (जिससे जीव का सूक्ष्म-स्थूल प्रभावित या नष्ट होता है)। आदि से अन्त तक जुड़े हुए सभी जीव-जन्तु को थोड़ा-बहुत दोष-अपराध से अवश्य जुड़ना होता है। तो ऐसे में; न्यायाधीश दोष या अपराधिक प्रवृति से अलग कहां हुआ?

❑ गुरूजी! यानी कि प्रकृति का हर व्यक्ति एक दूसरे का माध्यम बना हुआ है ?

हां भई; फिर बिना माध्यम या कारण के संरचना-विनाश कैसे होगा। हर व्यक्ति का माध्यम या निमित्त तो किसी न किसी को बनना ही होगा।

❑ गुरूजी! तो क्या, करवाने वाला ही दोषी है?

यह भी खूब रही! यदि कोई अच्छा कार्य होगा तो करने वाले 'कर्त्ता' हम स्वयं हो जायेंगे और कोई गलत या अप्रिय कार्य होगा तो करवाने वाला ईश्वर हो जायेगा। देखो, इन विवादों को ज्यादा घुमाओ मत; नहीं तो उलझ जाओगे। मैं तो फिर यही कहूंगा कि- न्यायाधीश किसी को दंडित करने वाला कौन होता है? इस वर्तमान क्रम से तो यही प्रमाणित होता है कि वह भी उस घटनाक्रम से किसी न किसी रूप में जुड़ा हुआ है या यूं कहो कि परोक्ष-अपरोक्ष में उसका भी कहीं न कहीं किसी बिन्दु पर जुड़ाव-लगाव है। और यदि वह जुड़ा या उससे संबंधित है तो वह भी थोड़ा-बहुत दोषी-अपराधी तो होगा ही।

❑ गुरूजी! क्या आत्महत्या या आत्मदाह करने वाला या करवाने वाला भी अपराधी होगा? ऐसी स्थिति में भी, क्या न्यायाधीश दोषी या अपराधी होगा?

देखो, ऐसा है कि- जब भी कोई जीव जो सूक्ष्म-स्थूल के संयोजन से निर्मित या उत्पन्न हुआ है; उसका किसी विशेष घटनाक्रम के अन्तर्गत विनष्ट हो जाना ही एक नये कारण की उत्पत्ति का स्रोत बन जाता है। फिर सृष्टि-विनाश की प्रक्रिया के अन्तर्गत जब भी कारण की खोज की जायेगी तो उसके परिप्रेक्ष्य में कोई न कोई दोषी या जिम्मेदार तो ठहराया ही जायेगा।

मान लो कि- किसी व्यक्ति ने आत्मदाह या आत्महत्या कर लिया। अब प्रश्न यह उठता है कि उसने इतना बड़ा दुस्साहस अपने साथ क्यों किया? इस घटनाक्रम के सम्बन्ध में, तुम सामान्य स्थिति में यही नहीं कहोगे कि वह व्यक्ति आत्मघाती था। और व्यवस्था उस प्रकरण को न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत कर देगी। न्याय की कुर्सी पर बैठा न्यायाधीश उस घटनाक्रम के उत्पत्ति का कारण भौतिक दृष्टि से ढूंढ़ने का प्रयास करेगा। हो सकता है, संदेह या गलत सही साक्ष्यों के आधार पर घर वालों को भी वह तथाकथित न्यायाधीश इस लिए दंडित कर दे कि मृतक ने आत्महत्या या आत्मदाह परिवार वालों के कारण किया है। तो ऐसे में उस न्यायाधीश ने न्याय कहां किया? वह तो स्वयं अपराध की श्रृंखला में खिंचा चला आया। अगर हम इस आत्मदाह या आत्महत्या के पूरे घटित प्रकरण पर आध्यात्मिक दृष्टि डालें तो यह लगेगा कि- उस व्यक्ति ने स्वयं आत्महत्या या आत्मदाह नहीं किया बल्कि उससे यह कुकृत्य उस घटनाक्रम के अन्तर्गत करवाया गया है। हो सकता है; उस घटनाक्रम के पीछे प्रेतबाधा या दुष्ट आत्माओं का हाथ हो। अब इसे न्यायाधीश कैसे पहचानेगा? उसके पास कोई अन्तः दृष्टि तो है नहीं।

आत्महत्या और आत्मदाह जैसे भयावह कुकृत्य से सम्बन्धित घटित घटनाक्रम की विवेचना मैं अलग-अलग ढंग से कर रहा हूं जिससे तुम्हें जीव के सूक्ष्म की पूर्व व आगे की स्थिति का एक सामान्य स्पष्टीकरण भी मिल जायेगा और उससे सम्बन्धित अपराध बोध का संकेत भी।

अब प्रश्न यह उठता है कि कोई भी व्यक्ति आत्महत्या करता क्यों है या उससे यह कुकृत्य क्यों करवाया जाता है? यदि सच पूछो तो व्यक्ति स्वयं आत्महत्या नहीं करता है। उसके परोक्ष-अपरोक्ष में कोई न कोई आत्महत्या का कारण या तो पहले सुप्तावस्था में होता है या कालचक्र के सापेक्ष में घटित घटनाक्रम के पूर्व बन जाता है।

व्यक्ति को दंडित करता है- ' वह भी मृत्युदण्ड या आजीवन कारावास से ' तो आध्यात्मिक परिवेश में उसे भी अपराधी ही माना जायेगा। यह सब तो इस तथाकथित मिथ्या जगत के ऊपर-ऊपर की एक जीर्ण-शीर्ण व्यवस्था है। इसके अन्तर्गत, किसी को न्यायाधीश बना दिया, किसी को प्रधानमंत्री बना दिया और किसी को कुछ भी बना दिया। और ये जो भौतिकवादी सामाजिक व्यवस्था है यह गलत-सही मूल्यों को लेकर चलती रहती हैं। सच पूछो तो; इसमें ईमानदारी या सच्चाई कहां है? इस भौतिक समाज में धर्म निरपेक्षता या धर्म-सापेक्षता का पाखण्ड करने वाला कोई व्यक्ति यदि ये कहे कि- ' मैं ईमानदार हूं ' तो वह झूठ बोलता है। और व्यक्ति, यदि सचमुच ईमानदार होगा तो यह भौतिक समाज नहीं चलेगा। अब ऐसे में, तुम्हीं सोचो कि-न्याय की कुर्सी पर न्यायाधीश के रूप में बैठा एक भौतिक प्राणी ईमानदार और सत्यमार्गी कैसे होगा? फिर आपने किसी घटनाक्रम के संदर्भ में, उसका कोई ठेका ले रखा है कि आप किसी को गलत-सही भौतिक साक्ष्य के आधार पर बचायें या किसी को फांसी पर लटका दें। तथाकथित न्याय की कुर्सी पर बैठा न्यायाधीश, यदि किसी घटित घटनाक्रम के तहत उससे जुड़े हुए व्यक्ति को मात्र भौतिक आधार पर दंडित कर रहा है तो वह एक बहुत बड़ा दुस्साहसिक कार्य कर रहा है क्योंकि ऐसी स्थिति में वह भी उस अपराध के घेरे से बाहर नहीं आ पायेगा। अत: मेरी दृष्टि में, जो अपराध की गहराई में परा-अपरा के अन्तर्गत न जाकर केवल दंड-प्रक्रिया से जुड़ते हैं वे भी अपराधी हैं। हां; यह बात दूसरी है कि उनके अपराध का क्रम उस घटित घटनाक्रम के संदर्भ में कैसा और किस प्रकार का होगा। क्योंकि इसे तो आध्यात्मिक आधार पर ही खोजा-शोधा जा सकता है।

❑ गुरूजी ! आपके कहने के अनुसार तो न्यायाधीश भी अपराधी हुआ?

देखो; मेरे कहने का तात्पर्य वो नहीं हैं जो तुम समझ रहे हो। किसी भी घटनाक्रम में, अपराधी वह हो भी सकता है। लेकिन वह शत-प्रतिशत अपराधी हो, यह आवश्यक नहीं है। इस संदर्भ में, मैं तुम्हें एक ऐसी घटना बता रहा हूँ जिससे अपराध और अपराधी के सम्बन्ध में बहुत सारी बातें स्पष्ट हो जायेंगी।

चार-साढ़े चार वर्ष पूर्व; एक समस्यायुक्त व्यक्ति मेरे पास आया। संयोग से वह अवकाश प्राप्त न्यायाधीश था। प्रेत-बाधा से ग्रसित उस व्यक्ति का जब मैंने सूक्ष्मता से अध्ययन किया तो पता चला कि उसने अपने कार्य काल में कुछ ऐसे व्यक्तियों को भी दंडित किया है जो वास्तव में आध्यात्मिक दृष्टि से दण्ड के अधिकारी नहीं थे। उस न्यायाधीश की समस्या को पूर्ण रूप से हल करने में मुझे पांच-साढ़े पांच माह लग गये। इसी बीच एक ऐसा समस्यायुक्त व्यक्ति मेरे पास आया जो उस न्यायाधीश के कार्यकाल में विशेष प्रभावित रहा। संयोग से एक दिन दोनों मेरे सामने बैठे हुए थे। दोनों के बीच आपसी-प्रतिरोध को देखते हुए मुझे यह संदेह हुआ कि इन दोनों का आपसी विरोध केवल इसी जन्म का नहीं है। अत: विरोध के कारण की सूक्ष्मता को जानने-परखने के लिए मैं न्यायाधीश व उस अधिकारी व्यक्ति के पूर्व जन्मों में सूक्ष्म गति से प्रवेश कर गया। दोनों के तीसरे जन्म में मैंने देखा कि दोनों एक-दूसरे के कट्टर विरोधी थे। दूसरे जन्म में देखा कि वह न्यायाधीश दूसरे व्यक्ति की अपेक्षा कम प्रभावहीन था इसलिए दोनों का आपसी विरोध दबा का दबा रह गया। इस क्रम में वह व्यक्ति इस वर्तमान जीवन में न्यायाधीश के रूप में आकर उसे दंडित करके अपने तीसरे जन्म के विरोध का प्रतिफल लिया। यानी दोनों के बीच तीसरे जन्म का विरोध अब जाकर ऐसे मोड़ पर आ गया जहां से नये विरोध की शाखा आगे आने वाले जन्मों के लिए तैयार हो गयी। उन दोनों व्यक्तियों के पूर्व जन्मों की स्थितियों को जानने-परखने के बाद दोनों को आध्यात्मिक दृष्टि से मैंने प्रायश्चित करवाया जिससे आगे आने वाले जन्मों में नया कोई विरोध न रह जाये।

हां; तो इस विवादास्पद घटना के आधार पर तुम ज़ान-समझ गये होगे कि न्यायाधीश कैसे अपराधी हो सकता है। इस तरह मैंने तमाम घटनाक्रमों में (विशेषकर तथाकथित विशिष्ट व्यक्तियों से सम्बन्धित) यह देखा-परखा है कि आपसी-विरोधों का क्रम आवश्यक नहीं है कि इसी जन्म का हो। कभी-कभी क्या; अधिकांशत: विरोध-प्रतिरोध की श्रृंखला जन्म-जन्मांतर से चली आती है। और यदि उस विरोध-प्रतिरोध का कोई उचित व ठोस समाधान परा-अपरा के मध्य नहीं किया जाता है तो उस विरोध का क्रम आगे आने वाले जन्मों में भी चलता रहता है। हां; सूद-ब्याज समेत।

वैसे भी, यदि कोई न्यायाधीश धर्म-अधर्म को गहराई से जानता-समझता है तो वह अपराधी को दंडित करने के बजाय, उससे प्रायश्चित करवायेगा। ऐसी न्यायिक

विवेचना-सूक्ष्म व स्थूल परंपराओं के अन्तर्गत हो। तब कहीं जाकर न्याय की बात बनती है।

इसलिए हत्या या मृत्यु सम्बन्धी किसी भी घटनाक्रम के कारण की उत्पत्ति की खोज-शोध के लिए उपयुक्त व्यक्ति को जीव के सूक्ष्म व स्थूल की यात्रा के अन्तर्गत प्रयास करना चाहिए। समझ गये न! संक्षेप में बस इतना समझ लो कि- किसी भी घटनाक्रम से जुड़े या सम्बन्धित जीव के स्थूल व सूक्ष्म के समन्वयात्मक अस्तित्व की खोज-शोध धार्मिक-आध्यात्मिक उपेक्षा के तहत किसी भी स्थिति में नहीं किया जा सकता है और न ही उससे सम्बन्धित घटनाक्रम के कारण की उत्पत्ति को ढूंढ़ा-समझा जा सकता है। इसके लिए हमें आध्यात्मिक-भौतिक चिंतन-मनन व साधना के अन्तर्गत जीव के जन्म-जन्मांतर की सूक्ष्मतम गतिविधियों का सूक्ष्म गति से शोध व अन्वेषण करना होगा। तब कहीं जाकर न्यायोचित न्याय की बात बनेगी। और हम हत्यारे व जिस जीव की हत्या हो चुकी है, उसके बीच कौन कितना दोषी है की सही व वास्तविक खोज कर पायेंगे।

हत्या सम्बन्धी घटनाक्रम को यदि हम दूसरे दृष्टिकोण से देखना चाहें तो हमें श्रीकृष्ण और अर्जुन के बीच उपदेशात्मक प्रवृति को महाभारत के सापेक्ष में जानना-समझना होगा। श्रीकृष्ण कुरूक्षेत्र के मैदान में अर्जुन को उपदेश देते समय कहते हैं कि- ' हे अर्जुन! तुम तो केवल निमित्त मात्र हो। मैं जैसा तुमसे करवाता हूं, वैसा तुम करते हो।'

उपरोक्त प्रकरण से तो यही लगता है कि हत्या सम्बन्धी घटनाक्रम में हत्यारे ने भुक्तभोगी की हत्या कहां की? वह हत्यारा तो निमित्त मात्र था। उस से ईश्वर ने भुक्तभोगी की हत्या करवाई, इसमें वह हत्यारा पूर्णत: दोषी कहां है। ऐसे में, हम श्रीकृष्ण के इस उपदेशात्मक आधार को एकदम से नगण्य भी तो नहीं कर सकते। सच मानो तो, यह सारा का सारा प्रकरण किसी न किसी रूप में कालचक्र के सापेक्ष-निरपेक्ष में जीव के सूक्ष्म-स्थूल के संयोजन से जुड़ता-टूटता रहता है।

वैदिक ऋचा-'अतति सततं गच्छति इति आत्मा।' से भी यह स्पष्ट हो जाता है कि- आत्मा सूक्ष्म रूप में अजर-अमर है। इसलिए किसी भी घटनाक्रम के अन्तर्गत दोषयुक्त व्यक्ति के दोष का कारण और उसकी उत्पत्ति

को ढूंढ़ने-समझने के लिए उसके पूर्व जन्मों की न्यायिक व धार्मिक विवेचना परा-अपरा के मध्य सत्य के आधार पर करनी होगी।

❑ गुरूजी ! आपने न्यायाधीश के भी दोषी होने की बात कही है। जबकि न्यायाधीश को तो परमेश्वर की संज्ञा से (अनादि काल से) सुशोभित किया जाता रहा है। अत: एक न्यायाधीश किस प्रकार दोषी या अपराधी हो सकता है?

एक न्यायाधीश दोषी या अपराधी क्यों नहीं हो सकता? आप मानने को, उसे चाहे कुछ भी मानते रहो- मीलार्ड, जहांपनाह आदि से संबोधित करते रहो। पर- इससे यानी तुम सबकी मान्यता से सत्य थोड़े ही बदल जायेगा। तुम्हारी मान्यता एक तरफ होगी और सत्य दूसरी तरफ। तुम्हारी कोरी-काल्पनिक मान्यता से, क्या कहीं यथार्थ बदल जायेगा? भई, सच पूछो तो; मीलार्ड ब्रह्मांड में केवल एक है - अखण्ड ब्रह्म। हां; उसके रूप या नाम भिन्न-भिन्न हो सकते हैं। ऐसे में, न्यायाधीश जो मात्र सूक्ष्म-स्थूल का एक संयोजन है वह परमेश्वर कैसे होगा? पता नहीं किस अर्द्धविक्षिप्त मस्तिष्क का यह थोथा प्रलाप है। अरे भई; असामान्य या विशिष्ट व्यक्ति के रूप में उसकी गणना कर सकते हो। यह अलग बात है।

इसी प्रकरण में, तुलसी का यह उद्धरण-'समरथ को नहिं दोष गोंसाई।' याद आ गया। समर्थ व्यक्ति के लिए दोष कैसा? अब मान लो; भौतिक व्यवस्था ने एक बुद्धिजीवी न्यायिक व्यक्ति को न्यायाधीश की कुर्सी पर बैठा दिया है। लेकिन वह किसी जीव को दंड देने वाला कौन होता है ? अगर वह न्यायाधीश वास्तव में परमेश्वर है, और उसके अन्दर ईश्वरीय शक्ति है तो वह मरे हुए व्यक्ति को जीवित क्यों नहीं कर देता? और, यदि वह ऐसा नहीं कर सकता तो उसे एक जीते-जागते व्यक्ति को मारने का भी कोई अधिकार नहीं है। हां; यदि वह ऐसा दुस्साहस करता है तो निश्चित मानो कि उसके अन्दर का सूक्ष्म-स्थूल विकृतावस्था में आता जा रहा है। यानी उसके अन्दर अपराधिक प्रवृति जन्म ले रही है। वह किसी अपराधिक प्रवृति से युक्त व्यक्ति से प्रायश्चित करवाये, यह बात तो समझ में आती है लेकिन वह उसे दंडित करके ईश्वरीय सत्ता का उपहास करे यह धार्मिक परिप्रेक्ष्य के विपरीत होगा।

भौतिक संसाधनों से लिप्त यदि कोई तथाकथित न्यायाधीश किसी

बहुत सारी चीजों-घटनाओं को हम अपनी भौतिक आंखों से नहीं देख पाते हैं। जो न्याय करने वाला न्यायाधीश है; वह हत्यारे का या हत्यारा न्यायाधीश का किसी न किसी रूप में शत्रु-मित्र हो सकता हैं। अब हमारे सामने मुख्यत: तीन व्यक्ति हैं- पहला, वह जिसकी हत्या हुई दूसरा, जिसने हत्या की और तीसरा, न्यायाधीश जिसने न्याय किया। अब सवाल यह उठता है कि इस घटनाक्रम के पूरे प्रकरण में ज्यादा दोष या अपराध किसका है? कम या ज्यादा अपराधी-दोषी तो सभी हैं। लेकिन इस प्रकरण में जिसकी मृत्यु हुई वह भी तो अपराधी रहा है; आखिर, अनायास वह मरा क्यों? मारने वाला क्यों नहीं मर गया? सच पूछो तो; वह न्यायाधीश कम दोषी नहीं है, क्योंकि उसी के कारण वह हत्या करने वाला दण्डित हुआ। आखिर, वह न्यायाधीश उसी को सजा क्यों दे रहा है। हो सकता है; उस न्यायाधीश का उस तथाकथित अपराधी से पूर्वजन्म में कोई बैर रहा हो। अत: ऐसे में, उस तथाकथित अपराधी के साथ न्याय कहां हुआ?

❑ गुरूजी! आपने कहा कि- हत्या करने वाला अधिक अपराधी नहीं है- मरने वाला मरा क्यों? वह कुसमय मर गया, इसलिए वह भी अपराधी रहा है। लेकिन गुरूजी ! कोई झटके से किसी की गर्दन उतार दे या बंदूक की गोली या बम से मार दे- तो मरने वाला तो मरेगा ही। ऐसे में, आपका यह कहना कि-'मरने वाला मरा क्यों- कितना तर्क संगत है? आप तो हत्यारे की बजाय जिसकी हत्या हुई उसको बड़ा अपराधी बता रहे हैं कि- शायद मरने वाला पूर्व जन्म में हत्यारे का हत्यारा रहा हो या उसकी उससे शत्रुता रही हो? पर गुरूजी! सभी जगह पूर्व जन्मों का जुड़ाव जरूरी तो नहीं?- और -यदि उसका पूर्वजन्म का कोई किसी तरह का संबंध नहीं है तो उस स्थिति में अपराधी कौन हुआ? फिर यह हत्या क्यों घटित हुई?

देखो ऐसा है- प्रकृति में किसी भी वस्तु या जीव की उत्पति कारण के बिना नहीं होती। उत्पत्ति के पीछे कोई न कोई कारण अवश्य होता है । और जब उत्पत्ति का कोई निश्चित-अनिश्चित कारण होगा तो उसका कहीं न कहीं से जुड़ाव-सम्बन्ध भी अवश्य होगा। हमारा जीवन या यूं कहो कि-सूक्ष्म और स्थूल से निर्मित व्यक्ति का जीवन किसी न किसी कारण से अवश्य जुड़ा होता है। सूक्ष्म जब मां के गर्भ में प्रवेश करता है तो वह उस समय की तांत्रिक अभिक्रिया के अन्तर्गत किसी न किसी एक विशेष ठोस कारण के साथ परोक्ष-

अपरोक्ष में अवश्य जुड़ता है। सूक्ष्म जो गर्भ में प्रवेश करता है वह अपनी पूर्व सूक्ष्म यात्रा के उपरांत ही उस स्थिति में पहुंचता है। अगर ऐसा न होता तो प्रकृति के अन्तर्गत सभी योनियाँ नयी सृष्टि का स्रोत अवश्य बनती। स्त्री-पुरूष के सम्पर्क से एक नये जीव की उत्पति सामान्यत: बिना किसी कारण के ही निरंतर होती रहती। पर ऐसा सामान्य रूप से होता कहां है? देखो, ऐसा है कि जब हम जीव या वस्तु के उत्पति के कारण की खोज व शोध में निकलते हैं तो उसके विगत की जानकारी के लिए निरंतर गतिशील होते रहते हैं।

मान लो; दो आदमी हैं। एक ने दूसरे की हत्या कर दी। अब प्रश्न यह उठता है कि उसने उसी की हत्या क्यों की? दूसरे की हत्या क्यों नहीं कर दी? इस घटनाक्रम के पूरे प्रकरण को गहराई से जानने-समझने के लिए हमें धार्मिक व भौतिक दृष्टि से हत्या का कारण ढूंढ़ना होगा? चूंकि हमारा अधिकांश प्रयास और प्रयत्न मात्र भौतिकता पर आधारित होता है; इसीलिए हम केवल भौतिक परिवेश में ही हत्या का कारण ढूंढ़ने के लिए प्रयत्नशील रहते हैं। और उसी भौतिकता के तहत हत्या का कारण जानने व उससे सम्बन्धित दोषी व्यक्ति को जिसने हत्या की, उसको एक विशुद्ध भौतिकतावादी न्यायाधीश के सुपुर्द कर देते हैं। अब यहां सबसे बड़ा भ्रम यह पैदा होता है कि वह भौतिकता में लिप्त न्यायाधीश जीव के सूक्ष्म गति से शत-प्रतिशत अनभिज्ञ रहता है। ऐसे में, वह भौतिकवादी न्यायाधीश किसी व्यक्ति के प्रति उचित न्याय कहां तक कर पायेगा? हां; अगर उस व्यक्ति के स्थूल शरीर को दंडित करना ही घटनाक्रम की उत्पति के कारण का समाधान है तो उसी भौतिकता में मरो-जरो- रोका किसने है? पर इतना सच मानो कि आगे आने वाले जन्मों में वह दंडित व्यक्ति उस भौतिकवादी न्यायाधीश का विरोधी या उसकी मृत्यु का कारण अवश्य बनेगा। यहां तक कि उन तीनों व्यक्तियों (जिसकी हत्या हुई, जिसने हत्या किया और वह न्यायाधीश जिसने दंड दिया) का आपसी विरोध व टकराव जन्म-जन्मांतर कालचक्र के सापेक्ष में तब तक चलता रहेगा जब तक उन तीनों के बीच आपसी विरोध के कारण की पूर्व उत्पत्ति का समाधान -प्रायश्चित परा-अपरा के मध्य उचित ढंग से नहीं हो जाता हैं।

कालचक्र के सापेक्ष में, स्वत: होना यह चाहिए कि- हत्यारे व जिसकी हत्या हो चुकी हो; दोनों के बीच घटित घटनाक्रम के कारण की उचित

[मृत्यु की निश्चितता-अनिश्चितता के मध्य कालचक्र के सापेक्ष में जीव की गति का चक्रीय विधान क्या होगा? इस विवादास्पद प्रकरण के अन्तर्गत 'हत्याकाण्ड-अपराधी कौन ? विषय से सम्बन्धित प्रश्नों के समाधान हेतु श्मशान साधक 'अज्ञान' जी से दिनांक: 1 जून 1992 (प्रात:) को लिए गये लम्बे साक्षात्कार का प्रमुख अंश प्रस्तुत है -]

❑ गुरूजी! किसी भी हत्याकाण्ड में भुक्तभोगी की वास्तविक स्थिति क्या होती है, और उस घटनाक्रम में वास्तविक अपराधी कौन होता है?- कृपया, इस जटिल प्रकरण को विस्तारपूर्वक समझाएं।

यह प्रकरण बड़ा विवादास्पद है। जब भी कोई किसी की हत्या करता है; तो सच में अपराधी कौन है? जिसने हत्या की वह अपराधी है या जिसकी हत्या हुई वह या अन्य कोई जो उस घटना प्रकरण से जुड़ता है। या यह भी हो सकता है कि - इनमें से सबके सब इस प्रकरण के सम्बन्ध में थोड़े बहुत दोषी हों। साधारणत: भौतिक आयाम में तो हत्या करने वाला ही अपराधी दिखाई देता है। लेकिन नहीं ; सच पूछो तो वह अपराधी नहीं है या पूर्णत: अपराधी नहीं है। जरा सोचो; जिसकी हत्या हुई वह मरा क्यों? और लोग क्यों नहीं मर जाते? वही क्यों मरा? इसका सांकेतिक व आध्यात्मिक अर्थ यह है कि वह मरने वाला व्यक्ति कहीं न कहीं उस हत्यारे से भी बड़ा अपराधी रहा होगा या उन दोनों के बीच अपराधिक परंपरा पूर्व जन्मों से चली आ रही है।

घटनाक्रम का विवाद जब भौतिक आयाम के अन्तर्गत न्यायालय में पहुंचता है तो न्याय पीठ पर बैठा न्यायाधीश उस तथाकथित अपराधी दिखने वाले हत्यारे को फांसी या उम्रकैद का दण्ड देता है। क्या इस घटनाक्रम की अन्तिम परिणति से वह तथाकथित न्यायाधीश नहीं जुड़ता ? हां; वह भी कहीं न कहीं किसी न किसी क्रम में अवश्य जुड़ता है। सच तो यह है कि - उस घटनाक्रम व उसकी अन्तिम परिणति के अन्तर्गत, जिसकी हत्या हुई वह, जिसने हत्या की वह और जिसने न्याय दिया वह न्यायाधीश कहीं न कहीं अवश्य जुड़ता है। अब यह बात दूसरी है कि उस घटनाक्रम में किसका कितना दोष है या कौन कितना दोषी है? इस प्रकरण की वास्तविक सच्चाई को जानने-समझने के लिए हमें भुक्तभोगी, तथाकथित हत्यारे व भौतिक न्याय देने वाले न्यायाधीश के पूर्व जन्मों को गहराई से जानना-समझना होगा। हो सकता है, उन तीनों के मध्य पूर्व जन्मों के अन्तर्गत कालचक्र के सापेक्ष-निरपेक्ष में कोई न कोई समीकरण बनता-बिगड़ता हो। यदि हम उस घटनाक्रम के पूरे प्रकरण से सम्बन्धित व्यक्तियों के पूर्व जन्मों में जायें और उनका सूक्ष्म अध्ययन क्रमश: करें तो निश्चित रूप से यह प्रमाणित हो जायेगा कि वे लोग कहीं न कहीं, किसी न किसी रूप में एक-दूसरे से अवश्य जुड़े रहे हैं। यहां पर, सबसे बड़ी विडम्बना यह है कि-

अनिश्चितता की सम्भावना किसी विशेष घटनाक्रम में अवश्य बनती है। अत: सृष्टि-विनाश का क्रम किसी न किसी घटनाक्रम से जुड़ा होता है न कि कालचक्र के सापेक्ष में पूर्णत: निश्चितता-अनिश्चितता से।

हत्याकाण्ड-अपराधी कौन?

बता दें कि मैं कब तक जीवित रहूँगा। वैसे हरिद्वार के एक वृद्ध महात्मा ने दो वर्ष पूर्व यह बता रखा है कि-तुम्हारा जीवन बस दो-अढ़ाई वर्ष और है यानी 33 वर्ष की आयु के अन्तिम चरण तक तुम्हारे ऊपर मृत्यु का योग है। जबकि कुंडली में, मेरी आयु 70-72 वर्ष लिखी है। हां गुरूजी! इस पर मैं आपका निर्णय जानना चाहता हूं। वैसे भी, आप तो तांत्रिक हैं, हो सकता है मेरे इस मृत्यु रूपी संकट को टाल दें।'

उस युवा ब्राह्मण के अन्त: प्रलाप को सुनते ही मेरी थकावट अनायास ही समाप्त होने लगी और वहीं दस-बारह कदम पर स्थित अपने एक परिचित के आवास पर मैं उसे साथ ले गया। उसकी हस्त रेखाओं को देखते ही मैं स्वयं आश्चर्य में पड़ गया। उसकी हृदय रेखा यह स्पष्ट संकेत दे रही थी कि उसका जीवन शीघ्र ही एक घटनाक्रम में समाप्त हो सकता है। मैंने उस घटने वाली घटना को प्रभावहीन करने की नीयत से दूसरे दिन से ही उसके लिए एक तांत्रिक अनुष्ठान कराना आरम्भ कर दिया। अनुष्ठान करीब माह भर तक चला। कुछ दिनों बाद उसके साथ एक दुर्घटना घटी। उस दुर्घटना में उस युवा ब्राह्मण के साथ चार अन्य लोग भी थे लेकिन किसी को खरोंच तक नहीं आयी। दूसरे दिन वह मेरे घर आया और प्रसन्न मुद्रा में याचकीय स्वर में बोला-'गुरूजी! कल शाम को एक चौराहे पर भयानक दुर्घटना घटी। उसमें मेरी मोटर साईकिल, एक व्यक्ति की साईकिल और एक स्कूटर विशेष रूप से प्रभावित हुआ पर किसी को चोट-खरोंच तक नहीं लगी।' उसके इतना बताने के उपरान्त मैंने उसे आश्वस्त करते हुए कहा-'देखो, इस भयानक दुर्घटना में मृत्यु तुम्हारे लिए अनिश्चित सिद्ध हुई। अब तुम्हारा आगे का जीवन सुरक्षित है; हां इस सुरक्षा को दीर्घ समय तक स्थायी रखने के लिए ईश्वर पर आस्था रखते हुए सत्य मार्ग पर चलने का प्रयास करो।' इतना सब सुनने के बाद उसने पुन: प्रणाम किया और मेरे पास से इसी संकल्प के साथ वापस लौटा कि गुरूजी! मैं जीवन भर आपके बताये धार्मिक व मानवीय रास्तों पर चलने का प्रयास करूंगा।

हां; तो इस विगत घटनाक्रम से तुमने क्या समझा?

❑ गुरूजी! इससे तो लगता है कि किसी भी घटनाक्रम में मृत्यु की निश्चितता-अनिश्चितता दोनों का संकेत मिलता है। इसके माने किसी भी घटनाक्रम में मृत्यु को टाला भी जा सकता है ?

हां; किसी भी घटनाक्रम में कालचक्र के सापेक्ष-निरपेक्ष में व्यक्ति की मृत्यु को तब तक टाला जा सकता है जब तक उसके अन्दर सूक्ष्म-स्थूल का सांमजस्य बना रहेगा। यानी उसका स्थूल जब तक सूक्ष्म को सम्हालने में सक्षम होगा तब तक किसी भी घटनाक्रम में उसके जीवन को तांत्रिक या धार्मिक प्रक्रियाओं द्वारा बचाया जा सकता है।

इसी क्रम में, एक ऐसा उदाहरण, देता हूं जिससे मृत्यु की निश्चितता-अनिश्चितता का अधिकांश रहस्य तुम सबको ज्ञात हो सकेगा।

❑ हां गुरूजी! ऐसे रहस्यों को जानने-समझने से तमाम लोगों का भला होगा। और हो सकता है वे सब के सब घटनाक्रम की भयानक त्रासदी से अपने को बचा लें और मृत्यु का भय उस घटनाक्रम से टल जाये। क्यों गुरूजी ! क्या मैं गलत सोच रहा हूं?

नहीं; तुम्हारा यह सब सोचना-समझना किसी हद तक सार्थक है। हां, तो इसी क्रम में एक अन्य घटना सुनो-'सात-आठ माह पूर्व बिहार से एक ऐसे व्यक्ति के घरवाले मेरे पास आये जो मस्तिष्कीय कर्कट रोग से ग्रसित जीवन-मृत्यु से मूर्च्छावस्था में संघर्ष कर रहा था। भारत के करीब-करीब सभी वरिष्ठ चिकित्सकों ने उसके जीवन का मूल्यांकन मात्र सात-आठ दिन तक के लिए कर रखा था। ज्योतिषियों के अनुसार भी उसका जीवन मकर संक्राति तक यानी 13-14 दिन तक के लिए अवशेष रह गया था। फिर तुम तो जानते हो कि-विश्व में, किसी घटनाक्रम में पुत्र-भाई की मृत्यु पिता-भाई के लिए सबसे दुखदायी होती है। हर परिस्थितियों से हारे हुए उसके भाई की दयनीय व दुखद स्थिति को देखकर मुझे तंत्र की उन विशेष शक्तियों का प्रयोग करना पड़ा जिससे वह घटनाक्रम संकुचित हो जाये और वह व्यक्ति अपने अन्दर सूक्ष्म-स्थूल का सांमजस्य बनाये रखे। उसी क्रम में सात-आठ माह गुजर गये और वह व्यक्ति अपने सामान्य जीवन में क्रमश: आता जा रहा है।' तो इसे क्या कहोगे? लबो-लवाब, बस इतना समझ लो कि सैंकड़ों-हजारों तांत्रिक व परा-सम्बन्धीं प्रक्रियाओं के अन्तर्गत मैंने हर तरह से यह प्रमाणित कर दिया है कि मृत्यु किसी घटनाक्रम में कालचक्र के सापेक्ष में व्यक्ति के लिए निश्चित-अनिश्चित हो सकती है। लेकिन इसका पूर्व से कोई ऐसा निर्धारण नहीं होता जिसके आधार पर मृत्यु की निश्चितता का शत-प्रतिशत मूल्यांकन किया जा सके। हां; उसकी निश्चितता-

जाना किसी न किसी रूप में आवश्यक हो जाता है।

❑ गुरूजी! यानी कि आपके कहने का तात्पर्य यह है कि उन बचने वाले व्यक्तियों ने उस घटनाक्रम में मृत्यु को सहयोग नहीं दिया और वे बच गये?

हाँ; इसके अतिरिक्त और भी असंख्य कारण हो सकते हैं जिससे किसी घटनाक्रम में व्यक्ति के लिए मृत्यु निश्चित-अनिश्चित हो सकती है। फिर भी, इतना समझ लो कि- यदि व्यक्ति अपने अच्छे कर्मों व आध्यात्मिक शक्तियों से गहराई में जुड़ा होता है तो बहुत से घटनाक्रम में वह बाल-बाल बच जाता है और कभी-कभी उसके आध्यात्मिक प्रभाव से और लोग भी बच जाते हैं। ऐसी स्थिति में , आध्यात्मिक शक्तियों से जुड़ा हुआ साधक तमाम लोगों का जीवन बचाते हुए कालचक्र से जुड़े हुए तमाम घटनाचक्र को तब तक प्रभावहीन बनाता जाता है जब तक उसके अन्दर का सूक्ष्म और बाह्य स्थूल एक -दूसरे से गहराई में जुड़ा होता है। वह निरंतर घटनाक्रमों के बीच मृत्यु की निश्चितता-अनिश्चितता पर टेक लगाता चलता है।

❑ गुरूजी! इसके माने किसी भी अप्रत्याशित दुर्घटना को टाला जा सकता है?

देखो ऐसा है कि- वह घटनाक्रम जो कालचक्र के सापेक्ष में घटित होता है उसे एकदम से तो नहीं टाला जा सकता। मगर हां; उसको आध्यात्मिक शक्तियों से काफी हद तक प्रभावहीन बनाया जा सकता है और जो अन्य प्रभाव कालचक्र के निरपेक्ष में घटित होते हैं उन्हें आध्यात्मिक शक्तियों द्वारा टाला जा सकता है।

गुरूजी! इसे थोड़ा और स्पष्ट करें।

इस संदर्भ में, मैं तुम्हें दो-तीन ऐसे उदाहरण दे रहा हूं जिससे परोक्ष-अपरोक्ष में मैं स्वयं जुड़ा हुआ था या यूं कहो कि-उसे जानने-समझने व टालने में प्रयत्नशील रहा।

करीब 14-15 वर्ष पूर्व मैं पराविद्या में शोधरत रहते हुए भी ज्योतिषशास्त्र

का गंभीरता से अध्ययन व चिंतन-मनन कर रहा था। उस बीच मैंने अपनी जिज्ञासा व ज्योतिष की प्रमाणिकता को जानने-परखने के लिए हजारों लोगों की हस्त-रेखाओं का परीक्षण भी कर लिया था। उन्हीं दिनों एक शाम को साधना हेतु श्मशान पर जाने के लिए घर से अकेले निकला। रास्ते में एक चौराहे पर दुर्घटनायुक्त एक युवक मरा पड़ा था। उसके चारों तरफ छिट-पुट भीड़ व पुलिस खड़ी थी। क्षणभर के लिए मैं भी उसी भीड़ में खड़ा हो गया। एकाएक मेरी निगाह उस मरे हुए युवक के हस्त रेखाओं पर पड़ी। दूर से ही मैंने देखा कि उस मरे हुए युवक की हाथ की रेखाओं में- जीवन रेखा,मस्तिष्क रेखा व हृदय रेखा आदि स्पष्ट व दीर्घायु होने का संकेत दे रही थी। उसकी हस्त रेखाओं से मुझे ऐसा लगा कि-इसे तो कम से कम सत्तर-बहत्तर वर्ष तक जीवित रहना चाहिए लेकिन यह युवक अनायास अल्पायु में मर कैसे गया? क्षण भर को लगा कि- जैसे ज्योतिष में कोई विशेष त्रुटि है। जबकि भारतीय ज्योतिष व पाश्चात्य ज्योतिष का मैं गहराई से अध्ययन-चिंतन-मनन कर चुका था। उसी समय मैंने परा में प्रवेश करके उसे ध्यान से देखा तो मुझे पता चला कि इसकी यह अकाल मृत्यु ब्रह्मराक्षस के प्रभाव से हुई है। तो इस घटना से यह स्पष्ट हो जाता है कि- अगर इस घटना को तांत्रिक प्रयोगों से टाल दिया गया होता तो वह युवक निश्चित दीर्घायु होकर मरता। अब इस घटना को क्या कहोगे? सच पूछो तो; यह घटना कालचक्र के निरपेक्ष में, घटित हुई थी।

दूसरी घटना इस प्रकार है-लगभग 8-10 वर्ष पूर्व की बात है। मैं शहर के पूर्वी क्षेत्र में एक सिद्ध धार्मिक स्थल के निकट शाम को चौराहे पर खड़ा एक परिचित व्यक्ति से बातचीत कर रहा था। उसी समय एक युवा ब्राह्मण वहां आ पहुंचा। कुशल-क्षेम पूछते ही वह भर्राये स्वर में बोला-'गुरूजी! यदि आप थोड़ा समय निकाल कर मेरा हाथ देख लेते तो बहुत कृपा होती'- देर तक घूमने-घामने के बाद उस समय हल्की सी थकावट के कारण मेरा मन ऐसी केन्द्रित स्थिति में नहीं था कि मैं किसी के जीवन की गतिविधियों का ज्योतिषीय गणना के आधार पर मूल्यांकन करुं। अतः मैंने दूसरे दिन हाथ देखने की बात कहकर उसके आग्रह को टालना चाहा। लेकिन उस युवा ब्राह्मण ने विशेष आग्रह के साथ बस इतना ही कहा- 'गुरूजी! मेरा हाथ देखकर मुझे बस इतना

जायेगा। हम केवल अनुमान के आधार पर ही उसकी मृत्यु की संभावना को व्यक्त कर सकते हैं । हम कह सकते हैं कि- संभवत: यह आदमी बस रात भर का ही मेहमान है। सच पूछो तो; इस संभावना को चिकित्सक भी बता देगा। अगर उस व्यक्ति के नाड़ी की गति तेजी से नीचे की ओर गिर रही है तो एक अंदाज लगाया जा सकता है कि-यह आदमी बस दो-तीन घण्टे ही जीवित रह सकता है। लेकिन कभी-कभी ऐसा भी होता है कि इसी प्रकरण में आदमी दस-बारह घंटे से भी ज्यादा चल जाता है। तो ऐसे में; हम मृत्यु को हर तरह से निश्चित कैसे कह सकते हैं? निश्चितता तो तभी संभव है जब सूक्ष्म-स्थूल एक-दूसरे से अलग-थलग हो जायें। तभी हम उस घटनाक्रम में मृत्यु की निश्चितता की बात उस मरे हुए व्यक्ति के संदर्भ में कर सकेंगे। लेकिन इस स्थिति से पूर्व उस घटनाक्रम में मृत्यु को निश्चित मान लेना व्यक्ति को धर्मभीरू या धर्मान्ध बनाना है- मात्र धर्मान्ध।

❑ गुरूजी! मेरे मन में कार दुर्घटना वाले पांच व्यक्ति अब तक घूम रहे हैं; वह बात कुछ अधूरी सी रह गयी थी। आपने कहा कि- तीन आदमी मर गये और दो बच गये। लेकिन प्रश्न यह उठता है कि, दो बचे तो क्यों बचे?

वे दोनों आदमी इसलिए बच गये, क्योंकि वे उस घटनाक्रम के घेरे को तोड़ कर बाहर आ गये। उन दोनों पर उस दुर्घटना का प्रभाव न के बराबर पड़ा। इस प्रकरण को यूं समझो कि- उन दोनों में, स्थूल-सूक्ष्म के मध्य इतना तीव्र सांमजस्य बना हुआ था जिससे मृत्यु उनके लिए उस घटनाक्रम में अनिश्चित सिद्ध हुई।

❑ गुरूजी! लेकिन सवाल फिर उठता है कि, मरने वाले वे तीनों व्यक्ति क्यों नहीं घटनाक्रम के बाहर आ सके? वे दो व्यक्ति ही क्यों मृत्यु के घेरे से बाहर आ पाये?

ऐसी स्थिति में, हमें उन दो बचने वाले व्यक्तियों का सूक्ष्म विश्लेषण करना पड़ेगा। इसके साथ ही उन तीनों मरे हुए व्यक्तियों के बारे में आध्यात्मिक दृष्टि से गहराई में सोचना होगा कि इस दुर्घटना में फंसने का कारण क्या था? उस घटनाक्रम में मरने व बचने वाले व्यक्तियों का आध्यात्मिक दृष्टि से तात्विक विश्लेषण करना होगा। इस जटिल विश्लेषण को तुम दो तरह से समझ-परख

सकते हो। पहला- उस घटनाक्रम में बचने वाले दोनों व्यक्तियों का चेतन-मन निष्क्रिय नहीं था। उनके कर्मों व परिवारजनों के प्रभाव के कारण उन पर मृत्यु का भय प्रभावी न हो सका। इसलिए वे घटनाक्रम के बाहर आकर मृत्यु के घेरे को पार कर गये और दोनों के लिए मृत्यु उस घटनाक्रम के मध्य अनिश्चित हो गयी। इसी के साथ मरने वाले तीनों व्यक्तियों का उस घटनाक्रम में अवचेतन-मन ही पूरी तरह प्रभावी रहा। इसलिए उस घटनाक्रम में उन तीनों की मृत्यु निश्चित हो गयी। सूक्ष्म-स्थूल का बंधन एक दूसरे से अलग हो गया। इस प्रकरण में मुख्यत: वह मरी हुई भैंस भी एक ऐसा कारण बन गयी जिससे यह दुर्घटना घटी। दूसरा- हो सकता है वे तीनों मरने वाले भूत-प्रेत या ब्रह्मराक्षस के प्रभाव से ग्रसित रहे हों और उस मरी हुई भैंस द्वारा उत्पन्न घटनाक्रम को न सम्भाल पाये हों। हां, बचने वाले दोनों व्यक्तियों पर उन प्रभावों का असर न के बराबर पड़ा हो जिससे वे बाल-बाल बच गये। दोनों कारणों के अतिरिक्त पूर्व जन्मों के आधार पर भी उस दुर्घटना का कारण ढूंढा जा सकता है। पर वह कारण स्थायी हो, या हर व्यक्ति विशेष के लिए प्रमाणिक हो; यह आवश्यक नहीं है।

पर हां; उपरोक्त कारणों के आधार पर बस इतना समझ लो कि- बचने वाले उन दोनों व्यक्तियों ने दुर्घटना के वक्त अपना होश-हवास नहीं खोया और उनके स्थूल पर जो आघात हुआ उससे उनका सूक्ष्म प्रभावित नहीं हुआ। सूक्ष्म-स्थूल के बंधन की प्रगाढ़ता की वजह से वे दोनों बच गये। इसके विपरीत उन तीनों मरने वाले व्यक्तियों ने घटनाक्रम में मृत्यु को सामने देख कर अपना होश-हवास खो दिया। उन सबका स्थूल इतनी बुरी तरह प्रभावित हो गया, जिससे सूक्ष्म-स्थूल का सांमजस्य असंतुलित हो गया और वे तीनों मृत्यु जैसे व्यापक परिवर्तन से जुड़ गये और उनका भौतिक अस्तित्व समाप्त हो गया। इस मृत्यु संबंधी प्रकरण में वह मरी हुई भैंस भी कारण के रूप में जुड़ गयी। वैसे भी, मृत्यु की निश्चितता-अनिश्चितता का संबंध व्यक्ति के चेतन-अवचेतन मन से सीधे-सीधे जुड़ता है। व्यक्ति की चेतनता व आत्मबल से सूक्ष्म-स्थूल दोनों को बल मिलता है जिससे सूक्ष्म-स्थूल का संतुलन जल्दी नहीं बिगड़ पाता। जबकि व्यक्ति की अवचेतना व आत्मबल की जर्जरता से सूक्ष्म-स्थूल का संतुलन किसी न किसी रूप में बिगड़ जाता है और व्यक्ति के अन्दर का सूक्ष्म उसके स्थूल से अलग हो जाता है। ऐसे में, उसके साथ मृत्यु जैसे व्यापक परिवर्तन का जुड़

इसी प्रकरण के अन्तर्गत एक अन्य उदाहरण देखो- मान लो, एक आदमी सड़क पर जा रहा है। एकाएक ट्रक-बस ने उसे टक्कर मार दी। वह बेहोश होकर सड़क पर गिर गया। उसके शरीर से रक्तस्त्राव होने लगा। देखते-देखते वह खून से लथपथ हो गया। ऐसे में, अगर धर्माचार्यों व ज्योतिषियों ने उसकी आयु का मूल्यांकन कर रखा है कि- इस व्यक्ति को नब्बे वर्ष तक जीवित रहना है तो आप उसे चिकित्सक के पास क्यों ले जाते हो? उसे सड़क पर पड़ा क्यों नहीं रहने देते? लेकिन नहीं; आप उसे शीघ्रातिशीघ्र चिकित्सक के पास ले जायेंगे। चिकित्सक उसे दवा देगा। उसके रक्त स्त्राव को रोकेगा और येन केन प्रकारेण उसे बचा लेगा। उसका जीवन फिर आगे बढ़ जायेगा। उसकी मृत्यु उस घटनाक्रम में अनिश्चित हो गयी; क्योंकि वह मरते-मरते फिर बच गया।

बहुत बार अनेकों व्यक्ति मौत के मुंह में जाने से बाल-बाल बच जाते हैं। वे किसी तान्त्रिक या सिद्ध साधक की शरण में जाकर अपनी सुरक्षा हेतु अनुष्ठान या तांत्रिक प्रक्रिया आदि सम्पन्न करवा लेते हैं। इससे घटनाक्रम में घटित मृत्यु का भय टल जाता है और उस भयानक प्रकरण में उनकी मृत्यु अनिश्चित हो जाती है। अत: जब तक व्यक्ति का सूक्ष्म व स्थूल एक साथ जीवन की यात्रा करता रहेगा, दोनों का एक-दूसरे से तारतम्य बना रहेगा, एक समरसता बनी रहेगी, तब तक उस व्यक्ति का जीवन आगे की ओर बढ़ता रहेगा। मृत्यु की निश्चितता-अनिश्चितता के मध्य वह अपने जीवन की अगली यात्रा तय करता रहेगा। हां; जिस दिन उसका सूक्ष्म-स्थूल एक-दूसरे से अलग हो जायेगा उसी दिन वह व्यक्ति मृत्यु को प्राप्त हो जायेगा। वही क्षण उसकी मृत्यु का समय होगा, उसके सूक्ष्म-स्थूल के बीच एक व्यापक परिवर्तन का क्षण होगा। अन्तत: हम किसी भी तरह से व्यक्ति की मृत्यु या आयु को समय सीमा में नहीं बांध सकते। और अगर बांधते हैं तो वह गलत होगा। हमारा यह काल्पनिक दुस्साहस लोगों को दिग्भ्रमित करने वाला होगा।

❑ गुरूजी! आपने यह जो दुर्घटना का उदाहरण दिया है, इस प्रकार की दुर्घटनाएं मात्र संयोग होती हैं अथवा संयोग के अलावा भी उनमें बहुत कुछ शामिल रहता है? कृपया, समझाएं।

देखो; इसे भी एक उदाहरण से समझो तो ज्यादा अच्छा है। मान लो, एक कार में पांच आदमी जा रहे हैं। कार तीव्र गति से चल रही है। रास्ता भी साफ

है। लेकिन तभी अचानक एक भैंस बीच सड़क में आ गयी। भयंकर दुर्घटना हुई, जिसमें भैंस के साथ कार के तीन व्यक्ति भी मर गये। लेकिन अन्य दो व्यक्तियों को सामान्य चोटें लगीं और वे बच गये। अब इसे आप क्या कहोगे? किसकी गलती से यह सब हुआ। इस दुखांत प्रकरण को जानने-समझने के लिए तीनों मरे व्यक्तियों व दो जीवित व्यक्तियों का हाथ कोई योग्य ज्योतिषी देखे और उसके साथ मरी भैंस के खुर को भी देखे-समझे; तब जाकर उसे दुर्घटना का वास्तविक कारण समझ में आयेगा। क्योंकि मृत्यु के समय भैंस के खुर में भी विकार आ जाता है। हो सकता है- वह मरी हुई भैंस ही प्राणघातक रही हो- उन तीनों मरने वालों के लिए। घटना घटी, और उस घटनाक्रम के घेरे में आकर तीन व्यक्ति मर गये लेकिन दो व्यक्ति उस घटनाक्रम के घेरे से बाहर निकल गये। अत: इस दुखांत प्रकरण को ले करके यहां मृत्यु की निश्चितता-अनिश्चितता के बीच फिर एक प्रश्न-चिन्ह लग गया। आखिर इस दुखांत प्रकरण का उत्तरदायी कौन है? ऐसे में, इसे मात्र एक संयोग मानकर इस घटनाक्रम को धार्मिक अंधविश्वासों में नहीं लिया जा सकता।

❑ गुरूजी! लेकिन उस घटनाक्रम में तीन आदमियों की मृत्यु तो निश्चित हो गई। इस बारे में आप क्या कहेंगे?

हां; घटनाक्रम में फंस कर ही तो ऐसा हुआ। लेकिन पहले से मृत्यु कहां निश्चित थी? मृत्यु निश्चित कब होती है, जानते हो?

❑ नहीं; गुरूजी ?

मान लो, एक आदमी अस्वस्थ है। हम उसकी दवा-दारू करते-करते परेशान हो गये हैं। अस्पताल में इलाज कराते-कराते बेहाल हो गये। लेकिन वह रोगी किसी भी तरह स्वस्थ नहीं हो रहा है। क्योंकि उस व्यक्ति के स्थूल-सूक्ष्म के बीच आपसी सांमजस्य नहीं बन पा रहा है। ऐसे में, उस घटनाक्रम में उस व्यक्ति की मृत्यु की निश्चितता को आंक सकते हैं। उसका एक काल्पनिक मूल्यांकन कर सकते हैं कि, यह आदमी अब नहीं बच पायेगा। लेकिन फिर भी, हम यह नहीं कह पायेंगे कि- पांच बजकर दो मिनट पर यह आदमी मर

❑ गुरूजी! कादम्बिनी के तंत्र विशेषांक (1991) में मृत्यु की अनिश्चितता को लेकर आपने कहा है कि- 'मृत्यु अनिश्चित है, मृत्यु को टाला जा सकता है।' आपका यह कथन लोगों के बीच एक विवाद सा बन गया है, क्या इसे आप थोड़ा और स्पष्ट करेंगे?

देखो, मृत्यु की निश्चितता-अनिश्चितता का निर्धारण जीव की यात्रा के मध्य घटित घटनाक्रम में होता है, न कि पहले से। व्यक्ति के जीवन की गतिशीलता के मध्य किसी विशेष घटनाक्रम में जब सूक्ष्म-स्थूल अलग-थलग हो जाते हैं तो मृत्यु निश्चित हो जाती है और जब वह घटनाक्रम को येन केन प्रकारेण पार कर जाता है तो मृत्यु उस क्रम में अनिश्चित हो जाती है।

❑ गुरूजी! थोड़ा और स्पष्ट करें?

देखो ऐसा है कि- मृत्यु की निश्चितता और अनिश्चितता को लेकर जो विवाद चला आ रहा है वह अनादि काल से है। जब हम अपने सारे प्रयासों के तहत मृत्यु से पराजित हो जाते हैं यानी मृत्यु घटित हो जाती है तो उसको हम एक निश्चित घड़ी मान लेते हैं या कहने लगते हैं कि- यह तो ब्रह्मा जी द्वारा लिखा हुआ था या ऐसा होना ही था। इसलिए मृत्यु घटित हुई। इस सन्दर्भ में, थोड़ी देर के लिए यह मान लो कि- 'एक दस वर्ष का बच्चा है। उसे भयानक बीमारी हो गयी है- कैंसर, एड्स आदि। उस भयानक रोग से उसकी मृत्यु हो गयी, यानी उसका सूक्ष्म-स्थूल अलग-थलग हो गया। जबकि ज्योतिषियों ने कुंडली के आधार पर उसकी आयु सत्तर-बहत्तर वर्ष बतायी थी। तो ऐसे में, कुसमय में वह बच्चा मरा क्यों?

हां; यदि हम किसी धार्मिक या भौतिक विधि से उस प्राणघातक घटनाक्रम के घेरे से उस बच्चे को बाहर निकाल लेते तो उसका जीवन आगे बढ़ जाता और मृत्यु टल जाती। तो ऐसी प्रक्रिया के अन्तर्गत उस बच्चे की मृत्यु की निश्चितता को पहले से कैसे अंकित कर देंगे कि- उसकी मृत्यु उस घटनाक्रम में निश्चित थी। यहां पर वस्तु स्थिति यह है कि- हमारे सारे साधन-समाधान उसकी मृत्यु को नहीं रोक पाये, इसलिए उस घटनाक्रम में उसकी मृत्यु निश्चित हो गयी। लेकिन सच तो यह है कि- पहले से उसकी मृत्यु के संबंध में ऐसी कोई निश्चितता नहीं थी।

[मृत्यु की निश्चितता–अनिश्चितता के मध्य कालचक्र के सापेक्ष में जीव की गति का चक्रीय विधान क्या होगा; इसे विस्तृत रूप में जानने–समझने के लिए श्मशान साधक 'अज्ञान' जी से दिनांक: 22 मई 1992 (सांय) को लिए गये लम्बे साक्षात्कार का प्रमुख अंश प्रस्तुत है –]

❑ गुरूजी! कादमि
अनिश्चितता को लेकर आ
टाला जा सकता है।' आप
गया है, क्या इसे आप थो

देखो, मृत्यु की निश्चि
मध्य घटित घटनाक्रम में
गतिशीलता के मध्य किसी
हो जाते हैं तो मृत्यु निश्चित
प्रकारेण पार कर जाता है

❑ गुरूजी! थोड़ा

देखो ऐसा है कि- मृ
विवाद चला आ रहा है वह
के तहत मृत्यु से पराजित हो
हम एक निश्चित घड़ी मान
द्वारा लिखा हुआ था या ऐसा
में, थोड़ी देर के लिए यह मा
बीमारी हो गयी है- कैंसर,
गयी, यानी उसका सूक्ष्म-
कुंडली के आधार पर उसक
कुसमय में वह बच्चा मरा

हां; यदि हम किसी
घटनाक्रम के घेरे से उस
बढ़ जाता और मृत्यु टल जा
की निश्चितता को पहले से
में निश्चित थी। यहां पर
उसकी मृत्यु को नहीं रोक पा
हो गयी। लेकिन सच तो य
कोई निश्चितता नहीं थी